तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे अंतर्गत

हिंदी विषय में विद्यावाचस्पति (पीएच.डी.)

उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध

शोधविषय

''डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक चेतना''

शोधकर्ता

जाधव संभाजी जयसिंगराव

शोध निर्देशिका

डॉ. रागिनी दिलीप बाबर

श्रीबालमुकुंद लोहिया संस्कृत एवं भारतीयविद्या अध्ययन केंद्र

तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे.

सितंबर २०१३

༺ ऋणनिर्देश ༻

मैने आज तक के पढाई के दौरान अनेक साहित्य रचनाएँ पढी। इसमें कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, रेखाचित्र और व्यंग्य साहित्य आदि का अध्ययन करने का मुझे अवसर मिला। इस समय मुझे अनेक साहित्यकारों की रचनाओं ने प्रभावित किया। उन साहित्यकारों में, प्रेमचंद, हरिशंकर परसाई, अज्ञेय, फणीश्वरनाथ रेणु आदि साहित्यकारों का साहित्य पढना मुझे अच्छा लगता था और मैं एम. ए. की पढाई कर रहा था, उस समय डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी का 'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ' यह 'व्यंग्य' साहित्य मेरे पढने में आया। इस 'व्यंग्य' में डॉ. नरेन्द्र कोहली ने सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक चेतना को आधार बनाकर उनकी समस्याओं को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

जब मेरी एम. ए. की पढाई पद्मभूषण वसंतदादा पाटील कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय, पाटोदा में शुरू थी। उसी समय अनेक शोधकार्य करनेवाले प्राध्यापकों से मेरा संपर्क स्थापित हुआ। तब मैं उनके शोध कार्य संबंधी बडी बडी किताबे देखकर उनसे कई सवाल कर मेरे जिज्ञासा की पूर्ति करने का प्रयास करता था। उसी समय मैने मन ही मन में संकल्प किया की मुझे भी भविष्य में इस प्रकार का शोध कार्य करना है। मैं बस उसी दिन के इंतजार में था की मेरा संकल्प पूरा हो।

एम. ए. के पश्चात र. भ. अट्टल कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, गेवराई में मेरा अध्यापक के रूप में चयन हो गया। तब अर्थाभाव की समस्या मेरे सामने नहीं थी। मेरे अंदर की जिज्ञासा वृत्ति, हमेशा मुझे इस कार्य के प्रति प्रेरित करती रही। कौन-सी विधा में शोध कार्य किया जाए? यह समस्या मेरे सामने खडी हुई। अनेक दोस्तों के साथ मैंने इस बारे में चर्चा की और मुझे समाधान देनेवाली बात निश्चित हुई। मैंने डॉ. नरेन्द्र कोहली का 'व्यंग्य' साहित्य को ही शोधकार्य हेतु विषय रूप में स्वीकार किया।

जब मैंने पीएच. डी. करने का निश्चय किया तब संशोधन का विषय और मार्गदर्शन का विषय मेरे सम्मुख उपस्थित हुआ। मैं कुछ मार्गदर्शको से मिला। विविध विषयों पर चर्चा हुई। कई विषय सामने आये। इन सभी विषयों पर विचारमंथन करने के बाद मेरे दिल की आवाज सुनाई पडी क्यों न मैं डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी का 'व्यंग्य साहित्य पर संशोधन करूँ?' मेरे आदरणीय गुरूवर्या डॉ. रागिनी दिलीप बाबर से विचार विमर्श करने के बाद अंत में मैने ''डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक चेतना'' यह विषय संशोधन के लिए चुना। डॉ. बाबर मॅडम निर्देशन करने मेरी हट, जिद्द, लगन और परिश्रम को देखकर मार्गदर्शन करने के लिए समर्थन दिया। सच्चाई और ईमानदारी का उदात्त रूप डॉ. बाबर मॅडम दुसरों के हित में अपना हित, त्याग और समर्पण में श्रेष्ठता देखने की मूल प्रवृत्ति है। आदरणीय डॉ. बाबर मॅडम मुझे अपने कर्तव्य को बार–बार याद दिलाते हुए विचार विमर्श करके मार्गदर्शन किया और कार्य आगे बढता गया। इस तरह आज डॉ. बाबर मॅडम के कुशल एवं परिपक्व मार्गदर्शन में मैने अपना शोधकार्य पूर्ण किया। डॉ. बाबर मॅडम ने अपना अमूल्य समय देकर आत्मीयतापूर्वक मार्गदर्शन किया। उनका यह ऋण मैं जिन्दगी भर नहीं भूल सकूँगा।

इस शोधकार्य को पूर्ण करने में तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ के पदाधिकारियों का और डॉ. श्रीपाद भट सर का सहृदय आभारी हूँ। जिन्होंने मुझे शोधकार्य पूर्ण करने के लिए प्रेरित किया। प्रस्तुत शोध कार्य हेतु जिन्होंने मूल प्रेरणा एवं आशीर्वाद प्रदान किया वे मेरे शक्तिस्त्रोत पूज्य आदरणीय दादाजी स्वर्गीय रामभाऊ जाधव, पूज्य दादीजी स्वर्गीय चंद्रभागा जाधव, पिताश्री जयसिंगराव जाधव एवं माताजी द्वारका जाधव तथा बड़े भाई शेषेराव जाधव, उनकी पत्नी सौ. सखुबाई जाधव, उनके दो प्यारे बच्चे भारती, शिवराज के प्रति कृतज्ञता करना शब्दों से परे है।

इस ज्ञान यज्ञ में सदैव सहयोग प्रदान करनेवाली मेरी काकी सौ. संगिता जाधव, सौ. मंगल जाधव, सौ. निर्मला जाधव, सौ. शितल अतुल पवार, सौ. स्नेहल सचिन आगाम, कु. गितांजली जाधव, मयुर जाधव, हर्षवर्धन जाधव, शिवेंद्र जाधव, अमृता जाधव, मा. आ.

लक्ष्मणराव जाधव, मा. श्री. भिमराव (मामा) जाधव, डॉ. सुनील जाधव, मेरे जिजाजी श्री. किशोर सालपे और श्री. सुनील मते और मेरी बहनें सौ. अंजना सालपे, रंजना मते उनके बेटे राहुल सालपे, शुभांगी सालपे और मयुर मते, सोनाली मते, राणी मते और मेरे मित्र डॉ. नाना गवारे, डॉ. कल्याण पोकळे, डॉ. ज्योती पोकळे, प्रा. अभय शिंदे, डॉ. लक्ष्मीकांत पंडित, डॉ. विनोद ओस्तवाल, डॉ. अविनाश शिंदे, डॉ. रविंद्र गोरे, डॉ. अशोक मुंढे, प्रा. रमेश लांडगे, प्रा. अंकुश गोंडगे, प्रा. महेश वाघमारे, डॉ. सय्यद सर, डॉ. वंदन जाधव, श्री. कुणाल काळे, श्री. ब्रह्मानंद बिनवडे, श्री. जितेंद्र कांकरीया, बाबासाहेब नाईकनवरे, श्री. कैलास नेमाणे, श्री. संतोष तांबे, मेरे परममीत्र श्री. दर्शन कांकरीया, अमोल कांकरीया, अमोल दीक्षित, वैभव वासकर, चंदन कांकरीया, अमित बोरा, विलास कुलकर्णी, विनोद कोळपकर, विलास डिडुल, निखिल कांकरीया, रितेश शर्मा, सुशिल ढोले, युवराज जेधे, डॉ. ईमरान शेख, मनोज खोले, अभिनंदन कांकरीया, सुशिल वीर, चेतन गवारे, सतीष मस्के, बापूराव मस्के, नायब तहसिलदार गणेश दिगंबरराव जाधव, और जयभवानी के सभी शिक्षक और शिक्षकेत्तर कर्मचारी, र. भ. अट्टल महाविद्यालय के शिक्षक और शिक्षकेत्तर कर्मचारी और बलभीम महाविद्यालय के प्राचार्य, डॉ. वसंत सानप इन्होने मेरे शोध कार्य में बिना शिकायत जो सहयोग प्रदान किया, उसे कदापि भूलाया नहीं जा सकता।

इस प्रबंध के टंकलेखन का कार्य यथासंभव शुद्ध एवं सुचारू रूप से संपन्न करने के लिए पुना के आदिती एंटरप्रायजेस के संचालक, अंकुश सिताराम देशमुख इनके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

जाधव संभाजी जयसिंगराव

शोध–छात्र

꧁ प्रमाणपत्र ꧂

प्रमाणित किया जाता है कि, **श्री. जाधव संभाजी जयसिंगराव** ने इस ''डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक चेतना'' इस विषय पर यह शोध प्रबंध मेरे निर्देशन में तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे के अंर्तगत पीएच.डी. (हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तुत किया है। यह इनकी मौलिक कृति है। इसे परीक्षणार्थ प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान की जाती है।

स्थान : पुणे **शोध निर्देशिका**

तिथि : /०९/२०१३

‍ प्रतिज्ञापत्र

मैं प्रतिज्ञापूर्वक घोषित करता हूँ कि, ''डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक चेतना'' यह शोध प्रबंध शोध निर्देशिका डॉ. रागिनी दिलीप बाबर, जिला पुणे के निर्देशन में मैने स्वयं तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे के अंर्तगत पीएच.डी. (हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तूत किया है।

यह शोध प्रबंध या इसका कोई भाग अन्यत्र कहीं भी या किसी भी उपाधि अथवा परीक्षण हेतु किसी अन्य विश्वविद्यालय में प्रस्तुत नहीं किया गया है।

शोधकर्ता

तिथि : /०९/२०१३

जाधव संभाजी जयसिंगराव

मु.पो.ता. पाटोदा, जिला. बीड.

प्रथम अध्याय

''डॉ. नरेन्द्र कोहली का जीवन परिचय और साहित्य में व्यंग्य ।''

अनुक्रमणिका

१.० प्रस्तावना

१.१ डॉ. नरेन्द्र कोहली का जीवन परिचय

१.२ साहित्यिक कार्य

१.३ डॉ. नरेन्द्र कोहली की प्रकाशित रचनाएँ

१.४ पुस्तकों का अनुवाद

१.५ पुरस्कार तथा सम्मान

१.६ सदस्यता

निष्कर्ष

द्वितीय अध्याय

''डॉ. नरेन्द्र कोहली के समकालीन अन्य व्यंग्य साहित्यकार''

अनुक्रमणिका

२.० प्रस्तावना

२.१ व्यंग्य क्या है ?

२.३ व्यंग्य की परिभाषा

२.४ हिन्दी साहित्य के प्रमुख व्यंग्यकार

२.४.१ डॉ. नरेंन्द्र कोहली

२.४.२ हरिशंकर परसाई

२.४.३ रविंद्रनाथ त्यागी

२.४.४ बरसानेलाल चतुर्वेदी

२.४.५ श्रीलाल शुक्ल

२.४.६ लतिफ घोंघी

२.४.७ डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारी

२.४.८ सुदर्शन मजीठिया

२.४.९ रोशनलाल सुरीरवाला

२.४.१० मधुसुदन पाटील

२.४.११ शंकर पुणतांबेकर

२.४.१२ इन्द्रनाथ मदान

२.४.१३ शरद जोशी

२.४.१४ गोपाल चतुर्वेदी

२.४.१५ केशवचंद्र वर्मा

२.४.१६ के. पी. सक्सेना

निष्कर्ष

तृतीय अध्याय

''डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक चेतना''

अनुक्रमणिका

३.० प्रस्तावना

३.१ सामाजिक परिभाषा

३.२ समाज, साहित्य और व्यंग्य का संबंध

३.३ हिन्दुस्तान में स्थित सामाजिक वर्ग

३.४ सामाजिक संबंधो के बदलाव पर व्यंग्य

३.५ सामाजिक समस्याएँ और व्यंग्य का संबंध

३.६ पारिवारिक समस्याएँ और व्यंग्य का संबंध

३.७ कार्यालयीन विसंगतियाँ और व्यंग्य का संबंध

निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय

''डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सांस्कृतिक चेतना ''

अनुक्रमणिका

४.० प्रस्तावना

४.१ व्यंग्य संस्कृति का संबंध

४.२ संस्कृति का अर्थ

४.३ सांस्कृतिक चेतना

४.४ भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ

४.५ हिन्दी साहित्य में व्यंग्य सांस्कृतिक चेतना

निष्कर्ष

पंचम् अध्याय

''डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सांस्कृतिक चेतना ''

अनुक्रमणिका

५.० प्रस्तावना

५.१ राजनीतिक का अर्थ क्या है?

५.२ राजनीति के विभिन्न अंग

५.३ राजनीति से संबंधित विभिन्न अंगोपर व्यंग्य

निष्कर्षः

: प्रथम अध्याय :

डॉ. नरेन्द्र कोहली का जीवन परिचय और साहित्य में व्यंग्य।

: द्वितीय अध्याय :

डॉ. नरेन्द्र कोहली के समकालीन अन्य व्यंग्य साहित्यकार

: तृतीय अध्याय :

डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक चेतना

: चतुर्थ अध्याय :

डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सांस्कृतिक चेतना

: पंचम् अध्याय :

डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में राजनीतिक चेतना

: षष्ठ अध्याय :

उपसंहार

संदर्भ ग्रंथ सूची

विषय अनुक्रमणिका

अ.क्र.	अध्याय	विषय	पृष्ठ क्रमांक
१	प्रथम	डॉ. नरेन्द्र कोहली का जीवन परिचय और साहित्य में व्यंग्य	१-६६
२	द्वितीय	डॉ. नरेन्द्र कोहली के समकालीन अन्य व्यंग्य साहित्यकार	६७-१३८
३	तृतीय	डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सामाजिक चेतना	१३९-१९१
४	चतुर्थ	डॉ. नरेंन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में सांस्कृतिक चेतना	१९२-२४१
५	पंचम	डॉ. नरेंन्द्र कोहली के व्यंग्य साहित्य में राजनैतिक चेतना	२४२-२९१
६	षष्ठ	उपसंहार	२९२-३०२
७	---	संदर्भ ग्रंथ सूची	३०३-३१०

१.0. प्रस्तावना :

प्रथम अध्याय के अंर्तगत हमें डॉ. नरेन्द्र कोहली का परिचय कराना आवश्यक है। साहित्य समाज का दर्पण होता है और साहित्यकार उस समाज का ही एक हिस्सा होता है । वह अपने समय की सारी राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक आदि परिस्थितीयों से प्रेरित होकर वह साहित्य का निर्माण करता है । आत्मानुभूति ही मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ प्रेरक शक्ति होती है । स्वातंत्र्योत्तर कालीन साहित्यकारों में डॉ. कोहलीजी का अपना अलग स्थान है । उन्होंने अपनी सिद्धहस्त लेखनी द्वारा समाज के बुरी स्थितियों पर व्यंग्य के बाण चलाने का कार्य किया है ।

इस अध्याय के अंर्तगत समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, अनाचार, भाई–भतीजावाद का नंगानाच शुरू हुआ है । उसे अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है ।

विसंगतियों पर सार्थक आक्रमण करनेवाले व्यंग्यकारों की सूची में डॉ. नरेन्द्र कोहली का नाम बडे आदर से लिया जाता है । जो बहुत आदरणीय है। उनकी रचना ''मैं बच्चों से घृणा करता हूँ'' अपने इस व्यंग्यात्मकता से भरपूर निबंध के द्वारा उन्होंने व्यंग्य साहित्य क्षेत्र में प्रवेश किया। सन् १९५७–५८ से ही व्यंग्यात्मक रचनाओं को लिखना प्रारंभ किया किंतु उनके व्यंग्य संकलन सन् १९७० से ही प्रकाशित होने लगे है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली का व्यंग्य लेखन परिवेश और उसके अर्न्तविरोधों की प्रतिक्रिया स्वरुप रचित है। समाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक स्थितियों के विविध सहज प्रसंगों में निहित घातक रोगों पर उनकी सूक्ष्म दृष्टि पहुँच गई है और जीवन के हर कदम पर जो विसंगतियाँ साधारण नागरिक के जीवन को कष्टमय बना रही है, उनपर डॉ. नरेन्द्र कोहली ने गहराई से विचार किया है। उन्होंने सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक सच्चाई को अनुभव करने के उपरांत ही व्यंग साहित्य का सृजन किया है । अतः इनमें विनोद कम तथा गंभीरता अधिक है। इस तरह डॉ. नरेन्द्र कोहली की व्यंग्य रचनाओं ने व्यंग्य साहित्य द्वारा समाज की वास्तविकता उजागर करने का प्रयास किया है । इस कार्य में उन्हें काफी सफलता भी मिली है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने जीवन की विसंगतियों को बहुत करीब से देखा तथा परखा है। वे जानते है कि हर व्यक्ति मान सन्मान पाने के लिए अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने के लिए लालायित रहता है तथा इस दिशा में अग्रसर होने के लिए भरसक प्रयत्न भी करता है। अपने इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए वह 'दोस्ती' को तिलांजली देता है, अफवाहें और खबरें फैलाता है, खुशामद करने से बाज नही आता। ये सभी दुर्गुण व्यक्ति के उचित विकास में बाधक होते है। डॉ. नरेन्द्र कोहली चाहते है कि इन बाधाओं को मनुष्य जड से उखाड दे तथा आत्मोन्नति के लिये प्रयत्नशील हो जाये। इस कारण व्यंग्य की चोटों से वे ऐसे व्यक्तिओं को झकझोरना चाहते है।

१.१. डॉ. नरेन्द्र कोहली का जीवन परिचय :

अध्ययन एवं अनुसंधान कार्य सुचारू ढंग से हो इसलिए किसी भी साहित्य रचना की समीक्षा साहित्यकार से परिचित हुए बगैर नहीं की जा सकती, क्योंकि साहित्यकार व्यक्तित्व उनकी रचनाओं में कहीं न कही दृष्टिगोचर होता है । इसी कारण साहित्यकार व्यक्तित्व समझना आवश्यक है, अन्यथा वह साहित्यकार से कृतघ्नता होगी। उनका परिचय निम्नप्रकार स्पष्ट किया जा सकता है ।

१.१.१. जन्म : ६ जनवरी १९४० को सियालकोट (पंजाब) में जन्म हुआ। यह नगर अब पाकिस्तान में है।

१.१.२. परिवार : पिता, परमानन्द कोहली, सियालकोट के मध्यमवर्गीय नौकरी पेशा परिवार में १९०३ इ. में जन्मे थे। आँखो के रोग के कारण आठवी कक्षा में ही स्कूल से उठा लिए गए। पढने और लिखने का शौक होते हुए भी आगे पढ नहीं सके। उर्दू में लिखे अपने तीन चार उपन्यासों की पांडुलिपिया अपने लेखक पुत्र के लिए उत्तराधिकार स्वरुप छोड गए। अविभाजित पंजाब के वन विभाग में अस्थाई क्लर्क के पद पर काम करते रहे। देश के विभाजन के पश्चात् पूँजी, डिग्री तथा अन्य किसी कौशल के अभाव के कारण जमशेदपुर में पटरी पर बैठ कर फल बेचने को बाध्य हुए। बाद में एक छोटी सी दुकान की । सन १९६४ ई. में बयासी वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ।

माता विद्यावंती का जन्म एक छोटे गांव के साधारण कृषक परिवार में (वर्ष अज्ञात) हुआ था। लडकियों की शिक्षा की अवस्था एवं परंपरा न होने के कारण वे अनपढ़ ही रही। सन १९९२ ई. में दिल्ली में अनुमानतः अस्सी–बयासी वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ।

१.१.३. घर–गृहस्थी : सन १९६४ ई. में विवाह हुआ। पत्नी डॉ. मधुरिमा कोहली दिल्ली विश्वविद्यालय से हिंदी साहित्य में एम.ए.पी.एच.डी. है। वे दिल्ली के कमला नेहरु कॉलेज के हिंदी विभाग से १९६४ ई. से संबध्द है और अब रीडर के पद कार्यरत है। पहली पुत्री सविता केवल चार महीने ही जीवित रही। दिसम्बर १९६५ ई. में जुडवां संताने – कार्त्तिकेय और सुरभि का जन्म हुआ। सुरभि केवल चौबीस दिनों की आयु ले कर आई थी। कार्त्तिकेय अब दिल्ली विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.ए., एम. फिल्. कर रामलाल आनंद (सांध्य) कॉलेज, दिल्ली में अर्थशास्त्र पढा रहे है। पुत्रवधू वंदना चक्षुविशेषज्ञ है। छोटे पुत्र अगत्य का जन्म १९७४ ई. में हुआ। वे दिल्ली के सरदार पटेल विद्यालय से उच्चतर माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर इलिनॉय इंस्टिटयूट ऑफ टेक्नॉलॉजी शिकागो में यांत्रिकी की शिक्षा के लिए चले गए। अब सियाटल (संयुक्त राज्य अमरीका) में नेटवर्क अभियंता के रुप कार्यरत है।

१.१.४. शिक्षा : शिक्षा का आरंभ पाँच–छह वर्ष की अवस्था में देवसाजाज हाईस्कूल, लाहौर में हुआ। उसके पश्चात् कुछ महीने सियालकोट के गंडासिंह हाईस्कूल में भी शिक्षा पाई। सन १९४७ ई. में देश के विभाजन के पश्चात् परिवार जमशेदपुर (तब बिहार–अब झारखंड) चले आये। यहाँ तीसरी कक्षा से पढाई आरंभ हुई, धतकिडीह लोअर प्रायमरी स्कूल में। चौथी से सातवी कक्षा (१९४७–५३) तक की शिक्षा न्यू मिडिल इंग्लिश स्कूल में हुई। आठवी से ग्यारहवी कक्षा (१९५३–५७) की पढाई मिसिज के.एम.पी.एम. हाईस्कूल, जमशेदपुर में हुई। हाईस्कूल में विज्ञान संबंधी विषयों का अध्यपन किया। अब तक की सारी शिक्षा का माध्यम उर्दू भाषा ही थी।

उच्च शिक्षा के लिए जमशेदपुर को–ऑपरेटिव कॉलेज में प्रवेश किया। विषय थे अनिवार्य अंग्रेजी तथा अनिवार्य हिंदी के साथ मनोविज्ञान, तर्कशास्त्र और हिंदी साहित्य (ऑनर्स) का चुनाव किया। सन १९६९ ई. में जमशेदपुर को–ऑपरेटिव कॉलेज (रांची विश्वविद्यालय) से बी.ए. ऑनर्स (हिंदी) कर एम.ए. की शिक्षा के लिए दिल्ली चले आए। १९६३ ई. में एम.ए., रामाजस कॉलेज, दिल्ली और १९७० में दिली विश्वविद्यालय से पीएच.डी. प्राप्त की।

१.१.५. आजीविका : पहली नोकरी दिल्ली के पी.जी.डी.ए.वी. (सांध्य) कॉलेज में हिंदी के अध्यापक (१९६३–६४) के रुप में की। दूसरी नौकरी दिल्ली के मोतीलाल नेहरु कॉलेज में १९६४ ई. में. आरंभ की और १ नवम्बर १९९४ ई. को पचपन वर्ष की अवस्था में स्वैच्छिक अवकाश ले कर नौकरियों का सिलसिला समाप्त कर दिया। इस तरह से अपनी नौकरियों में सेवा देने का सफल प्रयास इन्होंने किया है ।

१.२. साहित्यिक कार्य : डॉ. नरेन्द्र कोहली को लिखने और छपने की इच्छा बचपन से ही थी। छठी कक्षा में हस्तलिखित पत्रिका में पहली रचना प्रकाशित हुई आठवीं कक्षा में स्कूल की मुद्रित पत्रिका में एक कहानी 'हिंदोस्ताः जन्नत निशा' उर्दू में प्रकाशित हुई। हाईस्कूल के ही दिनो में हिंदी में लिखना आरंभ किया । किशोर (पटना), आवाज (धनबाद) इत्यादि में कुछ आरंभिक रचनाएं, बाल लेखक के रुप में प्रकाशित हुई। आई.ए. की पढाई के दिनो में एक कहानी पानी का जग, गिलास और केतली, सरिता (दिल्ली) के नए अंकुर स्तंभ में प्रकाशित हुई थी। नियमित प्रकाशन का क्रम फरवरी १९६० ई. से आरंभ हुआ। इसलिए अपनी प्रथम प्रकाशित रचना 'दो हाथ' (कहानी, इलाहाबाद, फरवरी १९६०) को मानते है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली उपन्यासकार है, कहानीकार है, नाटककार है तथा व्यंग्यकार है। ये सब होते हुए भी वे अपने समकालीन साहित्यकारों से अलग स्थान रखते है । साहित्य की समृध्दि तथा समाज कि प्रगति में योगदान प्रत्यक्ष है। उन्होने प्रख्यात कथाएं लिखी है,

किंतु वे सर्वथा मौलिक है। वे आधुनिक है, किंतु पश्चिम का अनुकरण नहीं करते। भारतीयता की जडों तक पहुंचते है, किंतु पुरातनपंथी नही है। यह एक पद्धती से समग की प्रवाहित धारा में स्वयं डाळ देते है। उसी प्रकार का साहित्य सृजन करते है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहली की कहानियाँ सन १९६० ई. में प्रकाशित होना आरंभ हुई थी, जिनमें वे साधारण पारिवारिक चित्रों और घटनाओ के माध्यम से समाज की विडंबनाओ को रेखांकित कर रहे थे। सन १९६४ ई. के आस पास वे व्यंग्य लिखने लगे थे। उनकी भाषा वक्र हो गयी थी और देश तथा राजनैतिक की विडंबनाए सामने आने लगी थी। उन दिनों लिखी गई अपनी रचनाओं में उन्होने सामाजिक और राजनैतिक जीवन की अमानवीयता, क्रूरता तथा तर्कशून्यता के दर्शन कराए। हिंदी का सारा व्यंग्य साहित्य इस बात का साक्षी है कि अपनी पीढी में उन किसी प्रयोगशीलता, विविधता तथा प्रखरता कही और नही है। उन्होने पारिवारिक और सामाजिक उपन्यासों की भी रचना की, किंतु केवल सामाजिक चित्रण तथा विडंबनाओं और विकृतियों की भर्त्सना मात्रा से उन्हें संतोष नही हुआ। वे कुछ बहुत सार्थक करना चाहते थे। उन्होंने अनुभव किया कि जीवन के संकीर्ण संक्षिप्त तथा सीमित चित्रण से साहित्य अपनी परिपूर्णता प्राप्त नही कर सकता; न समाज ही उससे अधिक लाभान्वित हो सकता है। हीन वृत्तियों के चित्रण से हीनता तथा हीन भावनाओं की वृध्दि होगी। अतः साहित्य का लक्ष्य है जीवन के उदात्त, महान् तथा सात्विक पक्ष का चित्रण करना।

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने रामकथा से सामग्री लेकर चार खंडो में १८०० पृष्ठों का बृहदाकार उपन्यास लिखा। कदाचित् संपूर्ण रामकथा को लेकर, किसी भी भाषा में लिखा गया, यह प्रथम उपन्यास है। इसलिए रामकालीन, प्रगतिशील, आधुनिक तथा तर्काश्रित है। इसकी आधारभूत सामग्री भारत की सांस्कृतिक परंपरा से ली गई है, इसलिए इस में जीवन के उदात्त मूल्यों का चित्रण है, मनुष्य की महानता तथा जीवन की अबाधता का प्रतिपादन है। हिंदी का पाठक जैसे चौंक कर किसी गहरी नींद से जाग उठा। वह अपने संस्कारों और बौध्दिकता के व्दन्द से मुक्त हुआ। उसे अपने उदंड प्रश्नों के उत्तर मिले, शंकाओं का

समाधान हुआ। कृतियों का अभूतपूर्व स्वागत हुआ; और हिंदी उपन्यास की धारा की दिशा ही बदल गई।

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने एक उपन्यास 'अभिज्ञान' कृष्णकथा को लेकर लिखा। कथा राजनैतिक है। निर्धन और अकिंचन सुदामा को सामर्थ्यवान श्रीकृष्ण, सार्वजनिक रुप से अपना मित्र स्वीकार करते है, तो सामाजिक, व्यावसायिक और राजनैतिक क्षेत्रों में सुदामा की साख तत्काल बढ जाती हुँ । किंतु इस कृति का मेरुदंड भगवद्गीता का कर्म सिध्दांत है। इस कृति में न परलोक है, न स्वर्ग और नरक, न जन्मांतरवाद। कर्म सिध्दांत को इसी पृथ्वी पर एक ही जीवन के अंर्तगत, ज्ञानेन्द्रियो और बुद्धि के आधार पर, वैज्ञानिक सिध्दांतों के अनुरुप व्याख्यायित किया गया है। वह भी एक सरस उपन्यास के एक रोचक खंड के रुप में। यह अद्भुत है, अभूतपूर्व है। तब डॉ. नरेन्द्र कोहली ने महाभारत कथा के आधार पर अपने नए उपन्यास 'महासमर' की रचना आरंभ की। महाभारत एक विराट कृति है, जो भारतीय जीवन, चिंतन दर्शन तथा व्यवहार को मूर्तिमंत रुप में प्रस्तुत करती है। डॉ. नरेन्द्र कोहली ने इस कृति को अपने युग में पूर्णतः जीवित कर दिया है। उन्होने अपने इस उपन्यास में जीवन को उस की संपूर्ण विराटता के साथ अत्यंत मौलिक ढंग से प्रस्तुत किया है। जीवन के वास्तविक रुप से संबंधित प्रश्नों का समाधान वे अनुभूति और तर्क के आधार पर देते है। इस कृति में आप महाभारत पढने बैठेंगे और अपना जीवन पढ कर उठेंगे। युधिष्ठिर, कृष्ण, कुंती, द्रौपदी, बलराम, अर्जुन, भीम तथा कर्ण आदि चरित्रों को अत्यंत नवीन रुप में देखेंगे, किंतु डॉ. नरेन्द्र कोहली की मान्यता है कि वही उन चरित्रों का महाभारत में चित्रित वास्तविक स्वरुप है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने एक और उपन्यास श्रृंखला आरंभ कर पाठकों को चकित कर दिया। यह है, 'तोडो कारा ताडो'। यह शीर्षक रवीन्द्रनाथ ठाकुर के एक गीत की एक पंक्ति का अनुवाद है; किंतु उपन्यास का संबंध स्वामी विवेकानन्द की जीवनकथा से है। यह कार्य सब से कठिन था। स्वामीजी का जीवन निकट अतीत की घटना है। उन के जीवन की सारी घटनाएँ सप्रमाण इतिहासांकित है। इसमें उपन्यासकार की अपनी कल्पना अथवा चिंतन के लिए कोई विशेष अवकाश नही है। अपने नायक के व्यक्तित्व और चिंतन से तादात्म्य ही

उन के लिए एक मात्र मार्ग है और फिर स्वामी जी की प्रामाणिक जीवनियों के पश्चात् उपन्यास की आवश्यकता ही क्या थी? शायद उपन्यास की आवश्यकता उन लोगों के लिए थी, जो स्वामी जी से प्रेम तो करते थे; किंतु उन की जीवनियों अथवा वैचारिक निबंधो को पढने समझने और धारण करने की क्षमता नही रखते, अथवा उस में रुचि नही रखते। डॉ. नरेन्द्र कोहली के इस सरस उपन्यास के प्रत्येक पृष्ठ पर उपन्यासकार के अपने नायक के साथ तादात्म्य को देख कर पाठक चकित रह जाता है। स्वामी विवेकानन्द का जीवन बंधनों तथा सीमाओं के अतिक्रमण के लिए सार्थक संघर्ष था; बंधन चाहे प्रकृति के हों, समाज के हो, राजनैतिक के हों, धर्म के हों, अध्यात्म के हों। डॉ. नरेन्द्र कोहली के शब्दों में, ''स्वामी विवेकानंन्द के व्यक्तित्व का आकर्षण... आकर्षण नहीं, जादू... जो सिर चढ कर बोलता है। कोई संवेदनशील व्यक्ति स्वामी जी में नही था। मानव के चरम विकास की साक्षात् मूर्ति थे । भारत की आत्मा... और वे एकाकार हो गए थे। उन्हे किसी एक युग, प्रदेश, संप्रदाय अथवा संगठन के साथ बांध देना, अज्ञान भी है और अन्याय भी।''[१] इस कथन से स्पष्ट होता है कि स्वयं व्यंग्यकार का यह उपन्यास ऐसा ही तादात्म्य करा देता है।

१.३. डॉ. नरेन्द्र कोहली की प्रकाशित रचनाएँ :–

१.३.१. प्रेमचंद के साहित्य सिद्धांत (शोधनिबंध) – सन १९६६ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने छात्र जीवन में एम.ए. के पाठयक्रम के आठवें प्रश्नपत्र के अंर्तगत लिखा गया लघु शोधनिबंध, भारतीय तथा पाश्चात्य कलाशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में प्रेमचंद के रचना–संसार का प्रथम बार सैध्दांतिक विवेचन सर्जक साहित्यकार के मन तथा चिंतन संबंधी अनेक मौलिक स्थापनाएँ प्रेमचंद के साहित्य को समझने की एक नई दृष्टि। अब यह ग्रंथ उपलब्ध नही है। इसकी सामग्री प्रेमचंद (वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली) सन १९९१ ई. में समाहित कर दी गई है।

१.३.२. कुछ प्रसिध्द कहानियों के विषय में (समीक्षा) – १९६७ ई. पाठयक्रम में प्रायः निर्धारित रहने वाली, हिन्दी की कुछ प्रसिध्द कहानियों की मौलिक तथा सर्जनात्मक आलोचना। अब यह पुस्तक उपलब्ध नही है।

१.३.३. परिजाति (कहानियाँ) – १९६९/२००० ई.

लेखक के आरंभिक दस वर्षो की रचनाओं में से चुनी गई कहानियों का पहला संग्रह। जीवन के झूठ और रोमांस को लिखी कलम से छील–छील कर, यथार्थ जीवन को कुरदने वाली कहानियाँ। इसका पहला संस्करण नेशनल पब्लिशिंग हाउस से १९६९ ई. में प्रकाशित हुआ था। वह संस्करण दो ही वर्षो में समाप्त हो गया। वर्षो अनुपलब्ध रहने के पश्चात् अब सन् २००० में इस पुस्तक का सजिल्द (पेपरबैक) संस्करण क्रियेटिव बुक कंपनी से प्रकाशित हुआ है।

१.३.४. एक और लाल तिकोन (व्यंग्य) – १९७०/२००० ई.

हस्य–व्यंग्य रचनओं का पहला संकलन, जिसमें कथा–तत्व भी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। बहुत सारी रचनाएँ तो व्यंग्य कथाएँ ही बन गई है। चढती उम्र में लिखी गई इन प्रखर रचनाओं में से अनेक रचनाएँ आज हिंदी व्यंग्य साहित्य के श्रेणी में परिगणित होती है। साथ ही मान्यता प्राप्त बन चुकी है ।

इसका पहला संस्करण नेशनल पब्लिशिंग हाउस से सजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है।

१.३.५. पुनरारंभ (उपन्यास) – १९७२/१९९४ ई.

पंजाब के उन्नीसवी शताब्दी के प्रथम चरण के जनजीवन का चित्रण है। हमारे पुरुष प्रधान समाज में भी तेजस्विनी और चरित्रावती नायिका अपने जीवन का पुनरारंभ करती है।

यह उपन्यास डॉ. नरेन्द्र कोहली का पहला उपन्यास है। इसकी कथा उनके पिता के जीवनानुभवों पर आधृत है। लेखक ने स्वीकार किया है कि उन्होने इस उपन्यास में अपने पिता द्वारा प्रस्तुत कच्ची सामग्री के कुछ अंशो को ही विकसित किया है।

इस उपन्यास का पहला संस्करण १९७२ ई. में नेशनल पब्लिशिंग हाऊस से हुआ था। कुछ समय तक यह अनुपलब्ध रहा। १९९४ ई. में इसका नया संस्करण वाणी प्रकाशन द्वारा किया गया है।

१.३.६. आतंक (उपन्यास) – १९७२ ई.

तीन परिवारों की कथा दुश्चरित्रा सत्ताकर्मा ही है। बत्तीस वर्ष पूर्व भारत के राजनैतिक और सामाजिक सत्य प्रस्तुत करने वाला सशक्त और साहसपूर्ण उपन्यास।

१९७२ से १९९८ ई. तक इस उपन्यास का सजिल्द संस्करण उपलब्ध था। १९९८ ई. में यह सजिल्द संस्करण (पेपरबैक) में उपलब्ध हो गया है।

१.३.७. पांच एब्सर्ड उपन्यास (व्यंग्य) – १९६२–१९९४ ई.

जब एक उपन्यास की कलम, कार्टूनिस्ट की दृष्टि पा जाती है, तो एब्सर्ड उपन्यासों की रचना होती है। डॉ. नरेन्द्र कोहली की इन पाँच रचनाओं में आपको उपन्यास का गहन, व्यंग्यचित्रकार की पैनी दृष्टि, एक अनोखा विधान, तीखा करारा व्यंग्य तथा समकालीन जीवन की कुतर्कशीलता अपनी समग्रता में उपलब्ध होगी। सर्वथा नवीन कथा, शिल्प, शैली और विद्या। व्यंग्य लेखन का एक सर्वथा नवीन आयाम। इन रचनाओं में आपको व्यंग्य अपनी संपूर्ण गंभीरता में मिलेगा और आप समझ पाएंगे कि व्यंग्य हंसाने के साथ रुला भी सकता है, घावों को कुरेद भी सकता है; और व्यक्ति को उसके आक्रोश का जीवन्त साक्षात्कार भी करा सकता है। सही अर्थों में बुरे कार्य करनेवालों की पोल भी खोलता है।

इसका पहला संस्करण १९७२ ई. में नेशनल पब्लिशिंग हाऊस से प्रकाशित हुआ था। दो एक संस्करण और भी हुए, क्योंकि यह कृति हिमाचल विश्चविद्यालय में पाठ्यक्रम में निर्धारित हो गई थी। प्रायः बीस वर्ष तक अनुपलब्ध रहने के पश्चात् १९९४ ई. में

भारतीय प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली से इस का पुनः प्रकाशन हुआ। अब यह डायमंड बुक्स में भी उपलब्ध है।

१.३.८. आश्रितों का विद्रोह (व्यंग्य) – १९७३ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली का अश्रितों का विद्रोह आज की भ्रष्ट राजनीति, समस्याओं से भरे असुविधापूर्ण जीवन तथा निष्क्रिय सहिष्णू जनता की मृत मनःस्थिति के प्रति एक सृजनात्मक विरोध है। भ्रम की अंतिम परत तक को चीर देने वाले इस उपन्यास में नए शिल्प, फैंटसी – प्रायः विद्या और सूक्ष्म व्यंग्य के बीच भी सामान्य जनजीवन अपनी संपूर्ण समस्याओं के साथ यथार्थ रुप में विद्यमान है।

इस उपन्यास में डॉ. नरेन्द्र कोहली ने कथा कहने की एक अद्‌भुत व्यंग्य प्रधान शैली, तीखी, चुभती हुई पारदर्शी भाषा के साथ अन्याय के विरुध्द शास्त्र के रुप में निर्मित एक नए जीवन दर्शन को समझाने का एक सार्थक प्रयास किया है।

महानगर दिल्ली के सामान्य जन की अपनी आवश्यकताओं – राशन, दूध, यातायात इत्यादि के लिए जूझने की एक फैंटसीय कथा। सरकार पर आश्रित जन–सामान्य सकारी व्यवस्था के बहिष्कार द्वारा अपना विद्रोह जताता है, किंतु राजनीति उसे पुनः शासनतंत्र पर आश्रित बना देती है। एक अनोखा व्यंग्य उपन्यास जो एक प्रकार से समाज के विषय में कुछ भविष्यवाणियाँ ही नहीं कर रहा, सत्ताशाहों की निरंकुशता और प्रजा की असहायता की ओर भी संकेत करता है। साथ ही साथ यह चेतावनी भी है कि जो लोग अपने आलस्य और स्वार्थ में अपना कर्तव्य पूरा नही करते, वे आत्मविनाश का मार्ग भी प्रशस्त करते है। संसार में केवल वही टिक पाता है, जो किसी न किसी प्रकार से समाज के लिए उपयोगी है।

१.३.९. जगाने का अपराध (व्यंग्य) – १९७३ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली का व्यंग्य 'तीस रचनाएँ' निश्चित् रुप से पाठकों को विभिन्न क्षेत्रों में फैली हुई प्रथम रचना है। ''गोडसे को फांसी इसलिए हुई क्योंकि उसने महात्मा गांधी

को समाधि से जगाने का प्रयत्न किया था। कैनेडी भाइयों को गोली इसलिए मारी गई, क्योंकि वे अपने देश को जगा रहे थे। प्रत्येक आंदोलन में नेताओ को दंड मिलता है, क्योकि वे किसी न किसी को जगाने का प्रयत्न करते है। चीन को हम अपना शत्रू मानते है क्योंकि उसने हमे जगाने का प्रयत्न किया। पाकिस्तान हमारा शत्रू है, क्योंकि वह हमें सोने नही देता। बडे बडे देश हमारे मित्र है, क्योंकि उन्होंने सदा ही इस देश की जागृति का विरोध किया है। वे चाहते है कि यह देश सोता रहे....।''[२] इस प्रकार यथार्थ को उजागर करना कोहली का यह संकल्प है कि वे जगाने का यह अपराध बार बार करेंगे; क्योंकि उनका यह व्यंग्य लेखन न तो खाली की चहल है, न पाठकों के मनोरंजन का प्रयत्न बडे विडंबना के प्रति जागरुक बनाने के ईमानदार प्रयत्न है।

१.३.१०. साथ सहा गया दुख (उपन्यास) – १९७४ ई.

सामाजिक और आर्थिक संघर्षो के मध्य से गुजरती कथा के माध्यम से लेखक पति–पत्नी संबंधो को संघर्षो से उतार कर तादात्म्य के धरातल पर लाता है। विवाह–विच्छेद की वकालत के इस युग में, लेखक यह स्थापित करता है कि एक साथ सहा गया उस दम्पति के जीवन भर के तादात्म्य का आधार बन जाता है। साधारण दाम्पत्य जीवन का एक मर्मस्पर्शी उपन्यास है ।

कामवाली नवदम्पती के महानगरीय जीवन का चित्रण डॉ. नरेन्द्र कोहली ने बडे अच्छे ढंग से किया है। १९९८ ई. से केवल सजिल्द (पेपरबैक) संस्करण में उपलब्ध।

१.३.११. मेरा अपना संसार (लघु उपन्यास) – १९७४ ई.

दो लघु उपन्यासों का संकलन। व्यक्तिगत और सामाजिक, आर्थिक असफलताओं के बीच जीने वाले दो नारी पात्रों की मार्मिक कहानियाँ, जिनमें से एक क्रमशः भावात्मक आत्महत्या की ओर दूसरी अपराध की ओर ले जानेवाली कहानी है । इस प्रकार दो विभिन्न मानसिकताओं के दर्शन हो जाते है ।

१.३.१२. शंबूक की हत्या (नाटक) – १९७५ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली का अभ्युदय लेखन के बीच में ही रोक कर यह नाटक लिखा तो यह भी आरंभ में एक उपन्यास के रुप में ही था। किंतु इसकी सामग्री नाटक के अनुरुप होने के कारण इसे नाटक का रुप दिया गया। डॉ. नरेन्द्र कोहली द्वारा संपादित नाटक का रुप दिया गया। डॉ. नरेन्द्र कोहली द्वारा संपादित पत्रिका अतिमर्श के फरवरी – अप्रैल १९७४ ई. के अंक में कुछ परिवर्तन तो किए, किंतु नाटक प्रकाशित हो गया।

शंबूक की हत्या पौराणिक नाटक नही हैं इस में पौराणिक संदर्भ का सहारा मात्र लिया गया है। रामायण के उस ब्राम्हण ने तत्कालीन शासक से पूछा था; ''मेरे पुत्र की अकाल मृत्यु के लिए उत्तरदायी कौन है'' और स्वयं ही उत्तर दिया था, ''राजा की असत्वृत्तियों से ही प्रजा की अकाल मृत्यु होती है।''[3] इस कथन से स्पष्ट होता है एक दृष्टि से शंबूक पर ज्यादती हो गयी है । वह सर्व सामान्य लोगों का प्रतिनिधि पात्र है ।

अपने इस नाटक में डॉ. नरेन्द्र कोहली पूरे देश की ओर से पूछ रहे है, 'करोडो की संख्या में भारत की जनता की शारीरिक, आर्थिक और नैतिक अकाल मृत्यु के लिए दोषी कौन है ? और नाटक अपने आप ही पुकार कर कहता है, 'शासन का पाप ही जनता की अकाल मृत्यु के लिए दोषी है।

हिंदी का अव्दितीय व्यंग्य नाटक जिसकी कथा ही नही, शिल्प भी, व्यंग्य की अपूर्व ऊंचाइयों को छूता है। पहली बार इस का मंचन चंद्रमोहन के निर्देशन में लिट्ल थियेटर ग्रुप, नई दिल्ली में जनवरी १९७८ ई. में हुआ।

१.३.१३. दीक्षा (उपन्यास) – १९७५ ई.

तीस वर्ष पूर्व प्रकाशित यह उपन्यास (अथवा यह उपन्यास श्रृंखला) आज अपनी उत्कृष्टता तथा लोकप्रियता को प्रत्येक मानदंड पर प्रमाणित कर चुकी है। उसके अनेक सजिल्द और पॉकेट बुक संस्करण प्रकाशित हो चुके है। समाचारपत्रों तथा प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में खंड रुप से अथवा धारावाहिक रुप में प्रकाशित हो कर लोकप्रियता का प्रतिमान बन चूकी है। विभिन्न भारतीय भाषाओं तथा अंग्रेजी में उसका अनुवाद हो चुका है।

उसपर दर्जनों शोधकर्ताओ ने शोध कर विभिन्न विश्वविद्यालयों से उपाधिया प्राप्त की है। पुरस्कारों के विषय में तो कहना ही क्या। इसकी लोकप्रियता किसी भी लेखक के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकती है।

रामकथा संबंधित अपने उपन्यास–अभ्युदय – की रचना प्रक्रिया के विषय में डॉ. नरेन्द्र कोहली ने लिखा है, ''शायद तभी यह बात मेरे मन में आई थी कि इस पूरी कृति को एक जिल्द में न रख कर, कुछ खंडो में बांट कर लिखा जाए, ताकि जो भी खंड पूरा हो, वह अपने आप में संपूर्ण और स्वतंत्र रचना हो। यदि दूसरा खंड किन्ही कारणों से न भी लिखा जा सके, तो मेरी कृति अधूरी न रहे। कोई व्यक्ति एक खंड के बाद दूसरा खंड न पढना चाहे; अथवा उसे प्राप्त न कर सके, तो उसे यह न लगे कि उसने कोई अधूरी रचना पढी है। फिर इतनी बडी रचना के लिए मै प्रकाशक कहा से लाऊंगा। जिस प्रकाशक को कहो कि मेरा उपन्यास दो सौं पृष्ठों से ऊपर जा रहा है, वही कन्नी काटने लगता था। उन दिनों बाबा नागार्जुन प्रायः हमारे घर आया करते थे। वे कहा करते थे कि उपन्यास सौ सवा सौ पृष्ठों से बडा हो तो किसी के पास उसे पढने का समय नही होता। कदाचित् ऐसे ही कुछ और कारणों से मैने रामकथा को चार खंडो में लिखने की योजना बनाई । पहला खंड 'दीक्षा' था ....''[४]

तो दीक्षा डॉ. नरेन्द्र कोहली के प्रसिध्द और समसिध्द उपन्यास अभ्युदय – का प्रथम खंड है। घटनाओं कि दृष्टि से इस उपन्यास में विश्वमित्रा के सिध्दाश्रम में राक्षसों के उत्पात से लेकर राम के विविध और परशुराम कि पराजय तक की कथा वर्णित हैं लेखक ने स्थापित किया है कि इस विशाल जम्बुदिप में हो रहे राक्षसी उत्पात और उसके परिणामस्वरुप सद्मूल्यों के हनन और राक्षसी मूल्यों के भयावने आतंक के विस्तार को देखने और उसका प्रतिरोध करने की दीक्षा ऋषि विश्वामित्रा ने राम को दी थी। इस कथा के कर्तव्य समाज में नारी का स्थान, स्त्री–पुरुष संबंध, जाति और वर्ण की विभीषिकाओं, लोलूप और स्वार्थी बुद्धिजीवियों, शासनाधिकारियों इत्यादि विषयों के संदर्भ में अत्यंत क्रांतिकारी विश्लेषण करता है; और अपनी मान्यताओं के सहारे एक प्रख्यात कथा को पूर्णतः मौलिक तथा और आधुनिक उपन्यास के रुप में प्रस्तुत कर देता है।

इसका सजिल्द संस्करण अब उपलब्ध नही है। यह अभ्युदय १९८९ ई. (अभिरुचि प्रकाशन) में ही सम्मिलित है। हिंद पॉकेट बुक्स में इसका संक्षिप्त रुप अब भी स्वतंत्र रुप से उपलब्ध है।

रामकथा पर आधृत यह उपन्यास श्रृंखला १९६४ ई. से १९७९ ई. के मध्य प्रकाशित हुई। इन उपन्यासों के नाम थे – दीक्षा, अवसर, संघर्ष की ओर तथा युध्द (दोभाग) १९८९ ई. में ये चारों उपन्यास एक रचना के रुप में एकीकृत हो कर, अभ्युदय के नाम से प्रकाशित हुए। यह कृति २००४ ई. में वाणी प्रकाशन से प्रकाशित हो गई है। साथ ही इसका सजिल्द संस्करण डायमंड पेपरबैक ने प्रकाशित किया है।

हिंद पॉकेट बुक्स प्रा. लि. के द्वारा अभ्युदय के संक्षिप्त रुप को सात खंडो – दीक्षा, अवसर, संघर्ष की ओर, साक्षात्कार पृष्ठभूमि, अभियान तथा युध्द – के रुप में प्रकाशित किया गया है।

१.३.१४. अवसर (उपन्यास) – १९७६ ई.

अभ्युदय का दूसरा खंड। इस की आधारभूमि है रामकथा के अयोध्याकांड की कथा। मूल कथा तो पौराणिक है; किंतु प्रस्तुत कृति सर्वथा रामकालीन आधुनिक उपन्यास है, जिस में आधुनिक परिप्रेश्य और मूल्य मानकों के आधार पर उस प्राचीन कथा के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक चेतनाओं का विश्लेषण किया गया है।

इसका सजिल्द संस्करण अब उपलब्ध नही है। यह अभ्युदय – १९८९ । वाणी प्रकाशन – डायमंड बुक्स' में ही सम्मिलित है। हिंद पॉकेट बुक्स में इस का विश्लेषण किया गया है।

इसका सजिल्द संस्करण अब उपलब्ध नहीं है। यह अभ्युदय – १९८९ ई. (वाणी प्रकाशन – डायमंड बुक्स) में ही सम्मिलित है। हिंद पॉकेट बुस्क में इसका संक्षिप्त रुप अब भी स्वतंत्र रुप से उपलब्ध है।

१.३.१५. प्रेमचंद (आलोचना) – १९७६ ई.

प्रेमचंद पर तीन महत्वपूर्ण निबंध, जो आलोचना से अधिक सृजनात्मक साहित्य का अंग प्रतीत होते है। संकलित निबंध है : १. प्रेमचंद का महत्व, २. प्रेमचंद और जनक्रांति, ३. प्रेमचंद के साहित्य सिध्दांत। यह पुस्तक अब उपलब्ध नहीं है। इसकी सामग्री प्रेमचंद – १९९१ ई. (वाणी प्रकाशन) में सम्मिलित कर ली गई है।

१.३.१६. जंगल की कहानी (उपन्यास) :–

एक शताब्दी पूर्व के पंजाब के उस क्षेत्र की कथा, जहा चारों ओर वन और पर्वत थे। मनुष्य की वन्यवृत्तियो के साथ शासन का जंगल का कानून भी यहा मार्मिकता से चित्रित हुआ है। इस की सामग्री लेखक ने अपने पिता के अनुभवों और उन के द्वारा तैयार की गई टिप्पणियों से ली है।

इस का पहला संस्करण १९७७ ई. में नेशनल पब्लिशिंग हाऊस द्वारा प्रकाशित हुआ था। वह संस्करण अब अनुपलब्ध है। सन् २००० ई. में इस का अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण राजपाल एंड संस, से प्रकाशित हुआ है।

१.३.१७. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं (व्यंग्य) – १९७७ ई.

हिंदी का व्यंग्य साहित्य जिस तीव्र गति से आगे बढा, उसी तेजी से पाठकों तथा समीक्षकों ने उससे स्वयं को दोहराने तथा चूक जाने की शिकायत भी की। कदाचित यही कारण है कि सजग व्यंग्यकारों ने कदाचित कभी नही किए। किंतु ये प्रयोग केवल प्रयोग के लिए हो नही है। 'डॉ. नरेन्द्र कोहली का कहना है कि प्रत्येक विषय अपने लिए एक विशिष्ट शिल्प की मांग करता है।' अतः विषय की विवेचना तथा नवीन दृष्टि के अभाव में नए शिल्प का जन्म नहीं हो सकता है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने व्यंग्य को सदा सार्थक व्यंग्य के रुप में ग्रहण किया है। वह तीखा, गहरा और नुकीला व्यंग्य है, जिस से कभी अभिधात्मक कटाक्ष हो जाने की शिकायत तो हो सकती है, किंतु वह हल्का नही हो सकता।

श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाओं के संकलन के साथ लेखक की व्यंग्य संबंध एक विस्तृत भूमिका। व्यंग्य लेखन की प्रवृति, सामाजिक – राजनैतिक – सांस्कृतिक परिस्थितियाँ, व्यंग्य के स्वरुप तथा व्यंग्य विधा पर लेखक के मौलिक स्वानुभूत विचार। व्यंग्य के शोधार्थियों के लिए महत्वपूर्ण सामग्री व्यंग्य में प्रकाशित हुई है।

१.३.१८. कहानी का अभाव (कहानियां) – १९७७/२००० ई.

संपूर्ण कहानियां श्रृंखला का पहला खंड। लेखक की आरंभिक कहानियां, जिन में किशोर मन के प्रति खुलता हुआ संसार बहुत रोचक ढंग से चित्रित हुआ है। कहानी का अभाव कहानी की विधा संबंधी पूर्वमान्यताओं को सशक्त चुनौती देती है।

इसका पहला संस्करण पराग प्रकाशन, दिल्ली से १९८८ ई. से प्रकाशित हुआ था। कुछ समय तक अनुपलब्ध रह कर अब सन् २००० ई. में इसका प्रकाशन क्रिएटिव बुक कंपनी से अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है। इस की सामग्री समग्र कहानियाँ – १९९१ (वाणी प्रकाशन) तथा डायमड बुक्स में भी सम्मिलित है।

१.३.१९. हिंदी उपन्यास : सृजन और सिध्दांत (शोधग्रंथ) – १९७७/१९८९ ई.

हिंदी उपन्यास के आरंभ से सन् १९६० ई. तक के महत्वपूर्ण उपन्यासकारों के सिध्दांतों का मौलिक और शोधपूर्ण विवेचन/उपन्यास के संदर्भ में उठाए गए मूलभूत साहित्यशास्त्रीय प्रश्न। कथात्मक साहित्यशास्त्र की आधारभूत स्थापनाएं।

डॉ. नरेन्द्र कोहली को शोधग्रंथ, जिस पर उन्हें दिल्ली विश्वविद्यालय से विद्यावाचस्पति (पी.एच.डी.) की उपाधि प्राप्त हुई। इसका प्रथम संस्करण सौरभ प्रकाशन, दिल्ली से १९७७ ई. में प्रकाशित हुआ था। उस संस्था के बंद हो जाने के पश्चात यह १९८९ ई. में वाणी प्रकाशन से प्रकाशित हुआ।

१.३.२०. संघर्ष की ओर (उपन्यास) – १९७८ ई.

अभ्युदय का तीसरा खंड। इस की कथा रामकथा के अरण्यखंड पर आधृत है। आदिवासी जातियों के उत्पात, उन के शोषण के विभिन्न आयामों और शोषण के विरुध्द जनसंगठन की समस्याओं का औपन्यासिक कलात्मक विवेचन।

इस का सजिल्द संस्करण अब उपलब्ध नही है। यह अभ्युदय – १९८९ (वाणी प्रकाशन तथा डायमंड बुक्स) में ही सम्मिलित है। हिंद पाकेट बुक्स में इस का संक्षिप्त रुप अब भी स्वतंत्र रुप से उपलब्ध है।

१.३.२१. गणित का प्रश्न :– १९८९ ई.

बच्चो के लिए आधुनिक ढंग की गई कहानियां जो उनके अपने जीवन से ही ली गई है। यह पुस्तक अब उपलब्ध नहीं है। इस की सामग्री एक दिन मधुरा में तथा अन्य कहानियां (हिंद पॉकेट बुक्स) – २००४ ई. में सम्मिलित कर ली गई है।

१.३.२२. आधुनिक लडकी की पीडा (व्यंग्य) – १९७८/२००० ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने व्यंग्य रचनाओं का चौथा संकलन। नए विषयों पर तीव्र व्यंग्यात्मक शैली में अपने समसामयिक समाज का विश्लेषण। अब यह पुस्तक उपलब्ध नही है। इसकी समग्र व्यंग्य (वाणी प्रकाशन) – १९९७ ई. में संकलित कर ली गई है। स्वतंत्र रुप से इस का अजिल्द संस्करण २००० ई. में क्रिएटिव बुक कंपनी, दिल्ली से प्रकाशित हुआ है।

१.३.२३. युध्द (दो भाग) (उपन्यास) – १९७९ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने अभ्युदय का चौथा और अंतिम भाग। रामकथा के किष्किंधा, सुंदर और लंका कांड के आधार पर, दो जिल्दों में लिखा गया बृहद् उपन्यास (अभिरुचि प्रकाशन) – १९८९ में ही सम्मिलित है। हिंद पाकेट बुक्स में इस का संक्षिप्त रुप अब भी स्वतंत्र रुप से उपलब्ध है।

१.३.२४. दृष्टि देश में एकाएक (कहानियां) – १९७९/२००० ई.

कहानियां का संपूर्ण श्रृंखला का दूसरा खंड, पारिवारिक और सामाजिक परिवेश का एक युवा दृष्टि द्वारा मर्मभेदी और बेबाक विश्लेषण । महत्वपूर्ण तथ्य है कि विद्रोह पीढियों के विपरीत तथा परंपरा विरोध के इस युग में भी इस युवा लेखक ने अपनी पिछली पीढी को अपनी कहानियों में भरपूर सहानुभूति दी है। अब यह संकलन स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नही है। इस की सामग्री समग्र कहानियां (वाणी प्रकाशन तथा डायमंड बुक्स) – १९९१ में सम्मिलित कर ली गई है।

इसका पहला संस्करण पराग प्रकाशन, दिल्ली से १९७९ ई. में प्रकाशित हुआ था। कुछ समय तक अनुपलब्ध रह कर अब सन् २००० ई. में इस का प्रकाशन क्रिएटिव बुक कंपनी से अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है।

१.३.२५. अभिज्ञान (उपन्यास) – १९८१ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने कृष्ण और सुदामा की प्रख्यात कथा पर आधृत पौराणिक दार्शनिक उपन्यास जिसमें गीता के कर्म सिध्दांत की नई रोचक और औपन्यासिक व्याख्या की गई है। उन्हीं बातों को निम्न संदर्भों से आधार प्रदान किया जा सकता है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने, ''कृष्ण सुदामा के चरित्रों द्वारा कर्म सिध्दांत की जिस शैली से स्थापना की है, वह दर्शन की गूढ गंभीर गुत्थी न हो कर, अनुभव और व्यवहार की सहज भाषा है। यही उपन्यास की शक्ति है। कृष्ण सुदामा की कथा को इस प्रकार सार्थक बताया गया है।''[५] इससे स्पष्ट है कि मनुष्य का सुख–दुःख उसका प्रारब्ध तय करता है । ''अभिज्ञान में बुध्दिजीवियों की आप ने अपेक्षित और उचित खिंचाई की है। मुझे तो कभी कभी लगता है कि हमारे देश की जो दुर्दशा हो रही है, उस का सारा दायित्व बुध्दिजीवियो पर ही है। जो लोग कृष्ण और उन के कर्मयोग को नही समझते उन के लिए तो यह उपन्यास अवश्य पठनीय है। दोनों ही बिंदूओ को आपने बडी सहृदयता के साथ आख्यापित किया है।''[६] इससे स्पष्ट होता कै कि देश का घाटा अनपढ़ लोगों की अपेक्षा पढे–लिखे लोगों द्वारा होता है । ''अभिज्ञान में वैदिक ऋत सिद्धांत अथवा प्रकृति की नियमबध्दता

में मानवीय कर्म की कडी को जोडते हुए यह स्थापित किया गया है कि कर्म का फल और अकर्म का दंड प्रकृति देती है। हम प्राकृतिक सहज तंत्र से स्वयं को पृथक कर लेते है, इसीलिए हमें इन विरोधों और विसंगतियों को भुगताना पडता है। इसके लिए दोषी व्यक्तिगत मानवीय कर्म और सामूहिक रुप में सामूहिक मानवीय कर्म है। जिसे न समझ पाने के कारण, हम यह शिकायत करते है कि हमें कर्म का उचित फल नही मिला।

एक बात और – पाठकों को सूचित करना मेरा कर्तव्य होगा कि ऋत, कर्म सिध्दांत, अध्यात्म, विज्ञान आदि भारी भरकम शब्दों से बिना आतंकित हुए, इस उपन्यास को पढा जा सकता है; क्योंकि बौध्दिक रस के साथ ही साथ, कथा का अद्‌भुत प्रवाह भी इस रचना में है।''[७] इससे स्पष्ट है साहित्य को किसी एक क्षेत्र में बाँध लेना कठिन है । साहित्य सभी क्षेत्रों की जानकारी रखना है ।

१.३.२६. शटल (कहानियां) – १९८२/२००० ई.

संपूर्ण कहानियां शृंखला का तीसरा खंड। डॉ. नरेन्द्र कोहली की कुछ प्रौढ कहानियों का महत्वपूर्ण संकलन। अब यह संकलन स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नही है। इस की सामग्री समग्र कहानियां (वाणी प्रकाशन तथा डायमंड बुक्स) – १९९१ ई. में सम्मिलित कर ली गई है।

इस का पहला संस्करण पराग प्रकाशन, दिल्ली से १९८२ ई. में प्रकाशित हुआ था। कुछ समय तक अनुपलब्ध रह कर अब सन् २००० ई. में इसका प्रकाशन क्रिएटिव बुक कंपनी से अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है।

१.३.२७. त्रासदियां (व्यंग्य) – १९७२ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली की व्यंग्य रचनाओं का संकलन। व्यंग्य के साथ विनोद की ओर विशेष झुकाव। अब यह संकलन स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नही है। इस की रचनाएं समग्र व्यंग्य (वाणी प्रकाशन) – १९९८ ई. में सम्मिलित कर दी गई है।

१.३.२८. नेपथ्य (आत्मपरक निबंध) – १९८३ ई.

अपनी रचना प्रक्रिया, कृतित्व और संबंधो के विषय में लेखक के ईमानदार, बेबाक सृजनात्मक निबंध, जो उतने ही रोचक है, जितनी कोई कथाकृति हो सकती है। अब यह पुस्तक स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नही है। इसके अधिकतर निबंध एक व्यक्ति डॉ. नरेन्द्र कोहली (संपादक : कार्त्तिकेय कोहली, प्रकाशक : क्रिएटिव बुक कंपनी, दिल्ली) – २००० ई. में सम्मिलित कर लिए गए है।

१.३.२९. नमक का कैदी (कहानियां) – १९८३/२००० ई.

संपूर्ण कहानियां शृंखला का चौथा खंड। १९६७–६८ के दौरान लिखी गई, कुछ महत्वपूर्ण कहानियों का संकलन अब यह संकलन स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नही है। इस की सामग्री समग्र कहानियां (वाणी प्रकाशन तथा डायमंड बुक्स) – १९९१ ई. में सम्मिलित कर ली गई है।

इसका पहला संस्करण पराग प्रकाशन, दिल्ली से १९८३ ई. में प्रकाशित हुआ था। कुछ समय तक अनुपलब्ध रह कर अब सन् २००० ई. में इस का प्रकाशन क्रिएटिव बुक कंपनी से अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है।

१.३.३०. आत्मदान (उपन्यास) – १९८३ ई.

सम्राट हर्षवर्धन के बडे भाई, राज्यवर्धन के जीवन पर आधृत एक अनोखा और रोचक उपन्यास, जो राज्यवर्धन के चरित्र के नए आयाम उद्धाटित करता है।

१.३.३१. निचले फ्लैट में (कहानियां) – १९८४/२००० ई.

संपूर्ण कहानियां शृंखला का पांचवां खंड १९६९–७० ई. के दौरान लिखी गई कहानियां। समाज में बढती हुई अमानवीयता के स्पष्ट चित्रण करने का प्रयास किया । उपन्यास तत्व की वृद्धि होती है । अब यह संकलन स्वतंत्रा रुप से उपलब्ध नही है।

इसकी समग्र कहानियां (वाणी प्रकाशन तथा डायमड बुक्स) – १९९१ ई. में सम्मिलित कर ली गई है।

इसका पहला संस्कण पराग प्रकाशन, दिल्ली से १९८४ ई. में प्रकाशित हुआ था। कुछ समय तक अनुपलब्ध रह कर अब सन् २००० ई. में इसका प्रकाशन क्रिऐटिव बुक कंपनी से सजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है।

१.३.३२. डॉ. नरेन्द्र कोहली की कहानियां – १९८४ ई.

अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण में पहला कहानी संग्रह। छह लंबी और औपन्यसिक कहानियों का पठनीय और आकर्षक संकलन। अब यह संकलन स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नही है। इस की सामग्री समग्र कहानियां (अभिरुची प्रकाशन) – १९९१ ई. में सम्मिलित कर ली गई है।

१.३.३३. संचित भूख (कहानियां) –१९८४/२००० ई.

१९६९–७४ ई. की अवधि में लिखी गई कहानियां। इन कहानियों में जन सामान्य के मनोविज्ञान का साथ, प्रशासन की क्रूरता तथा परिस्थितियों द्वारा प्रताडित लोगों की असहायता प्रमुख है। अब यह संकलन स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नही है। इसकी सामग्री समग्र कहानियां (वाणी प्रकाशन तथा डायमड बुक्स) – १९९१ ई. में सम्मिलित कर ली गई है।

इसका पहला संस्करण पराग प्रकाशन, दिल्ली से १९८४ ई. में प्रकाशित हुआ था। कुछ समय तक अनुपलब्ध रह कर अब सन् २००० ई. में इसका प्रकाशन क्रिएटिव बुक कंपनी से अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है।

१.३.३४. आसान रास्ता (बाल कथाएं) – १९८५ ई.

किशोरों के लिए दस आकर्षक कहानियों का संकलन। अब यह पुस्तक उपलब्ध नही है। इस की सामग्री कुकर तथा अन्य कहानियां (हिंदी पाकेट बुक) २००० ई. में सम्मिलित कर ली गई है।

१.३.३५. निर्णय रुका हुआ (नाटक) १९८५ ई.

निर्णय रुका हुआ एक साधारण परिवार की इच्छाओं–आकांक्षाओं की कहानी है, किंतु जैसे जैसे नाटक आगे बढता जाता है, परत दर परत इस देश की जडों में समाया भ्रष्टाचार उद्घाटित होता जाता है। सामान्य जन ईमानदारी से अपनी सीधी सच्ची राह पर चले या सुख सुविधा पाने के लिए भ्रष्टाचार की दलदल वाला सुगम मार्ग अपना ले – यह द्वंद्व इस समाज में अभी चल रहा है। सामान्य जन सीधी सच्ची राह का समर्थक है, किंतु अपने मार्ग में खडी विघ्न बाधाओं से टकरा जाने का निश्चय अभी कर नही पा रहा है। इसलिए निर्णय अभी स्थगित है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली की कलम के कई आयाम हैं इस कृति में आपको उनके नाटककार, कथाकार और व्यंग्यकार का समन्वित रुप मिलेगा। आप इस में डूबते, आकस्मिकता में चौंकते और कचोट से तिलमिलाते, एक विराट प्रश्न के आमने सामने ''खडे हो जाएंगे – कौन सा मार्ग आप का है।''[८]

राजनैतिक, प्रशासन और न्यायपालिका के बीच घिरे और धन के अभाव तथा आकांक्षाओं के बाहुल्य से प्रताडित समाज की कहानी। भ्रष्टाचार के राक्षस का रोम रोम उद्घाटित करता, पाठक में जगाता, एक पूर्ण और सहज मंचनिय नाटक।

१.३.३६. हत्यारे (नाटक) – १९८५ ई.

हत्यारे एक हत्या की कहानी है, जो मानव समाज के संदर्भ में अनेक मौलिक प्रश्नों का साक्षात्कार कराती है। हत्याएं केवल शस्त्रो से नही होती। हत्याओं के अनेक रुप है और हत्यारों के भी। अपने स्वार्थवश व्यक्ति यह भी नही जानना चाहता कि उस के किस कृत्य का परिणाम क्या होगा। अपने कृत्य से वह कार्य–कारण की एक ऐसी श्रृंखला आरंभ कर देता है, जिस के मध्य और अंत की वह कल्पना भी नही कर सकता।

हत्यारे भारतीय समाज के अनेक आयामों को इतनी नाटकीयता से उद्घाटित करता है कि दर्शक दंग रह जाता है। घटना एक ही है, किंतु प्रत्येक नई स्थिति के साथ,

उस का रुप बदल जाता है। दर्शक अपने पहचाने हुए समाज को कुछ और अधिक पहचानने लगाता है।

घट और घट के बाहर, समाज और प्रशासन में छिपे, हत्यारों के कृत्यों को उद्घाटित करनेवाला एक प्रखर व्यंग्यात्मक नाटक। एक साधारण सी घटना को प्रत्येक अगली पंक्ति के साथ नाटककार असाधारण और गंभीर घटना में बदलता चलता है। सहज मंचनीय, गहरी पकड वाला नाटक।

१.३.३७. गारे की दिवार (नाटक) – १९८६ ई.

समाज में धन का महत्व बहुत बडा है। धन के महत्व के अनुपात में व्यक्ति में अहंकार भी बढा है। अहंकार ने प्रदर्शनप्रियता और ईर्ष्या–व्देष को प्रोत्साहित किया है और क्रमशः यह खेल खतरनाक होता गया है। सामाजिक मूल्यों का क्षय हुआ और घर घर में अपराध मनोवृत्ति फलने फूलने लगी। यह नाटक एक साधारण परिवार की एक बहुत छोटी सी घटना को लेकर आरंभ होता है, किंतु प्रत्येक नई पंक्ति के साथ वह सामाजिक संबंधो की परते, उधेडता चलता है और अंततः वह हमें एक व्यापक सत्य के सामने खडा कर देता है। वह सत्य जो किसी एक वर्ग विशेष के सम्मुख नही, आज सारे राष्ट्र और संपूर्ण मानवता के सामने खडा है।

मध्यम वर्ग की आडंबरप्रियता, ईर्ष्यां और अहंकार का चित्रण, जो अंततः उनके जीवन को अपराध के विष से भरता जा रहा है।

१.३.३८. प्रतिकथा (उपन्यास) – १९८८ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली की प्रत्येक नई कृति उन के लेखकिय व्यक्तित्व का एक नया आयाम उद्घाटित करती है। जब तक आलोचक तथा पाठक उन्हें किसी एक विशेष वर्ग अथवा धारा से जोड कर, किसी एक घेरे में घेर कर, देखने के अभ्यस्त होने लगते है तब तक वे उन घेरों को तोड कर आगे बढ जाते है तथा कुछ और नया और मौलिक लिखने लगते है।

प्रतिकथा डॉ. नरेन्द्र कोहली का नया उपन्यास है। डॉ. नरेन्द्र कोहली ने प्रेमकथा लिखी है – यह सूचना कुछ लोागों के लिए विस्मयकारी भी हो सकती है; किंतु अधिक विस्मयकारी तथ्य तो यह है कि यह प्रेमाध्यापक उपन्यास, जीवन के कुछ मूलभूत सत्यों का स्वरुप स्पष्ट करता है। कुछ लोग इसे चिंतन प्रधान ही नही, दार्शनिक उपन्यास, जीवन के कुछ मूलभूत सत्यों का स्वरुप स्पष्ट करता है। कुछ लोग इसे चिंतन प्रधान ही नही, दार्शनिक उपन्यास भी कहना चाहेंगे। प्रेम का विश्लेषण करते करते ही, मनुष्य अपनी प्रकृति और ईश्वर के स्वरुप तक को पहचान पाया है। किसी भी वर्ग में रखें, किंतु है यह उपन्यास ही – पहले से भिन्न, नया, ताजा और आकर्षक है । इस बात को नकारा नहीं जाता । अब यह हिंद पाकेट बुक्स में भी उपलब्ध हैं ।

१.३.३९. परेशानियां (व्यंग्य) – १९८६ /२००० ई.

व्यंग्य का नवीन संकलन, जिस में हास्य और व्यंग्य के साथ कुछ उत्कृष्ट विनोदी रचननाएं भी है। यह पुस्तक अब उपलब्ध नही है। इस की रचनाएं समग्र व्यंग्य (वाणी प्रकाशन) – १९९८ ई. में सम्मिलित कर ही गई है।

इसका पहला संस्करण किताबघर, दिल्ली से १९८६ ई. में प्रकाशित हुआ था। कुछ समय तक अनुपलब्ध रह कर अब सन् २००० ई. में इस का प्रकाशन क्रिएटिव बुक कंपनी से अजिल्द (पेपरबैक) संस्करण के रुप में हुआ है।

१.३.४०. बाबा नागार्जुन (संस्मरण) – १९८७ ई.

बाबा नागार्जुन के विषय में संस्मरणात्मक लंबा निबंध तथा डॉ. नरेन्द्र कोहली के नाम लिखे गए, बाबा के लगभग डेढ सौ पत्र है।

१.३.४१. महासमर – १ (बंधन) (उपन्यास) – १९८८

पाठक पूछता है कि यदि उसे महाभारत कि ही कथा पढनी है तो वह व्यासकृत मूल महाभारत क्यों न पढे, डॉ. नरेन्द्र कोहली का उपन्यास क्यों पढे ? वह यह भी पूछता है कि

उसे उपन्यास ही पढना है, तो वह समसामयिक सामाजिक उपन्यास क्यों न पढे, डॉ. नरेन्द्र कोहली का 'महासमर' क्यों पढे ?

'महाभारत' हमारा काम भी है, इतिहास भी और अध्यात्म भी। हमारे प्राचीन ग्रंथ शाश्वत सत्य की चर्चा करते है। वे किसी कालखंड के सीमित सत्य में आबध्द नही है, जैसा कि यूरोपिय अथवा यूरोपियकृत मस्तिष्क अपने अज्ञान अथवा बाहरी प्रभाव में मान बैठा है। डॉ. नरेन्द्र कोहली ने न महाभारत को नए संदर्भो में लिखा है, न उस में संशोधन करने का कोई दावा है। न व पाठक को महाभारत समझाने के लिए, उस की व्याख्या मात्रा कर रहे है। वे यह नहीं मानते कि महाकाल की यात्रा, खंडो में विभाजित है, इसलिए जो घटनाएं घटित हो चुकी, उन से अब हमारा कोई संबंध नही है। सत्य तो यह है कि न तो प्रकृति के नियम बदले है, न मनुष्य का मनोविज्ञान। मनुष्य की अखंड कालयात्रा को इतिहास खंडो में बांटे तो बांटे, साहित्य उन्हें विभाजित नहीं करता, यद्यपि ऊपरी आवरण ही बदलते रहते है।

महाभारत की कथा भारतीय चिंतन और भारतीय संस्कृति की अमूल्य राशि है। जो उसे अपने बाहरी और भीतरी शत्रुओं के साथ निरंतर करना पडता है। वह उस संसार में रहता है, जिस में चारों ओर लोभ और स्वार्थ की शक्तियाँ संघर्षरत है। बाहर से अधिक उसे उपने भीतर लडना पडता है और यदि वह अपने धर्म पर टिका रहता है, तो वह इसी देह में स्वर्ग जा सकता है, इस का आश्वासन 'महाभारत' देता है। लोभ, त्रास और स्वार्थ के विरुध्द धर्म के इस सात्विक युध्द को डॉ. नरेन्द्र कोहली एक आधुनिक और मौलिक उपन्यास के रुप में प्रस्तुत कर रहे है और वह है 'महासमर'। आप इसे पढे और स्वयं अपने आप से पूछें आप ने इतिहास पढा ? अथवा आप का विकास हुआ ? क्या आप ने इस से पहले कभी ऐसा कुछ पढा था ?

महासमर का पहला भाग है बंधन। इस खंड की कथा सत्यवती के हस्तिनापुर आगमन से आरंभ हो, हस्तिनापुर से विदा होकर वेदव्यास के आश्रम में जाने तक चलती है। संपूर्ण उपन्यास महासमर के नायक यद्यपि युधिष्ठिर है किंतु इस खंड के मुख्य पात्रा भीष्म और सत्यवती है।

आचार्य विष्णुकांत शास्त्री का मत है ''प्रसिध्द उपन्यासकार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने रामकथा के यशस्वी समकालीन चित्रण के अनंतर, महाभारत की औपन्यासिक पुर्नसृष्टि करते समय भी अपने उतरदायित्व का गंभीरतापूर्वक निर्वाह करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है। महाभारत यह सामान्य काम नही, बल्कि संपूर्ण भारतीय संस्कृति का विश्वकोश है। उस पर कलम चलाते समय, दायित्वबोधसंपन्न सृष्टा को एक साथ हो चुनौतियों का सामना करना पडता है। वह प्राचीन को अपनी इच्छा और सुविधा के अनुसार न तो बदल सकता है और न उसे तहत् चित्रित कर अपने विवेक और समकालीन बोध को संतुष्ट ही कर सकता है। उसे पुरानी प्रामाणिकता को बनाम रख कर नई व्याख्याओं के द्वारा उस की सर्वकालीनता को आधुनिक संदर्भो में उजागर करने का दुरुह कार्य करना पडा है। हमें इस बात का संतोष है कि, डॉ. नरेन्द्र कोहली एक बडी सीमा तक आने इस गहन पुनसृष्टिपरक यज्ञ में सफल हो पाए है।''[१] इस प्रकार डॉ. कोहलीजी ने इसे समकालीन परिवेश से जोडने का कार्य किया है ।

१.३.४२. माजरा क्या है? (सर्जनात्मक, संस्मरणात्मक,विचारात्मक निबंध) –१९८९ ई.

इस पुस्तक में चार सृजनात्मक, संस्मरणात्मक, विचारात्मक निबंध है। उन का विषय है – पुस्तकें । समाज में पुस्तकों के महत्व से लेकर लेखक – प्रकाशन में कोहली की महत्वपूर्ण सर्जनात्मक टिपाणियाँ इसमें पायी जाती है ।

१.३.४३. अभ्युदय – दो भाग – (उपन्यास) – १९८९/१९९८

रामकथा का जो खंड लिखा जाता रहा, प्रकाशित होता रहा। उस के सारे खंड अलग–अलग नामों से प्रसारित हुए । वह आरंभ में चार खंडों और पांच जिल्दों में प्रकाशित हुई है, अन्यथा मूल रुप से वह पहली बार एकरुप में प्रकाशित हुई । दीक्षा, अवसर, संघर्ष की ओर तथा युध्द (दोनों भाग) इसमें सम्मिलित है।

१.३.४४. महासमर – २ (अधिकार) – (उपन्यास) – १९९० ई.

महासमर का दूसरा भाग । कथा की दृष्टि से इस में पांडवों के शतश्रृंग के आश्रमों से हस्तिनापुर में आने से आरंभ हो कर युधिष्ठिर के युवराज्याभिषेक तक कि घटनाओं को

सम्मिलित किया गया है। कृष्ण का प्रवेश भी इसी खंड में होता है। प्रसिध्द उपन्यासकार शशीप्रभा शास्त्री कहती है ; ''निश्चित ही पुस्तक का रचनाक्रम तथा प्रस्तुतिकरण रोचक, व्यवस्थित और पूर्वापार से संबध्द है, महाभारत की कथा के आधार पर जिन पात्रों के चरित्र की सपाट कल्पना पाठक के मन में आज तक चली आ रही थी, उस के स्थान पर लेखक ने पाठक के मनः चुक्षुओं के सम्मुख हर पात्र का अंतःसंसार खोल कर रख दिया है, मात्र खोला नही, एक–एक कर परत–दर–परत उसे आच्छादित किया है, इस रुप में कि पाठक मात्र कथा से ही नही, पात्रों के अणु–अणु से परिचित हो कर उन से अनुकूल भावना से संयुक्त होता चलता है, उन्हे पूर्णरुपेण पहचान लेता है। भीम, नकुल, सहदेव, दुर्योधन, बिदुर – कोई भी तो अस्पष्ट, अजनबी नही रह जाता। सब खूब पहचाने से लगते है। अपने निज के सुख–दुख में मिलाते, घुनाते हुए।''[१०]

१.३.४५. डॉ. नरेन्द्र कोहली : चुनी हुई रचनाएँ (संकलन) – १९९० ई.

लेखक की पचासवीं वर्षगांठ पर प्रकाशित पुस्तक, जिस में कहानियाँ, व्यंग्य, छह उपन्यासों के महत्वापूर्ण अंश, संस्मरण, एक संपूर्ण नाटक तथा कुछ निबंध संकलित है। लेखक के संपूर्ण कृतित्व को समझने में सहायक पुस्तक । यह पुस्तक अब उपलब्ध नहीं है।

१.३.४६. समग्र नाटक (नाटक) – १९९० ई.

छह नाटक – शंबूक की हत्या, हत्यारे, निर्णय रुका हुआ, गारे की दीवार, प्रतिव्दन्दी तथा नींद आने तक – एक साथ, एक जिल्द में प्रकाशित । इस में संकलित दो नाटक – प्रतिव्दन्दी तथा नींद आने तक – पूर्वप्रकाशित नही है। प्रतिव्दन्दी महाभारतकथा के एक अंश पर आधृत है, जिस में सत्यवती, अंबा तथा भीष्म प्रमुख पात्रा है। इस का कथानक मुख्यतः सत्यवती के मनोविज्ञान पर आधृत है, जो पहले भीष्म को और बाद में अंबा को अपना प्रतिव्दन्दी मानती है।

दूसरा नाटक नींद आने तक, आकार में लघु होने पर भी, समाज में नारी के स्थान को लेकर महत्वपूर्ण हैं । यह नाटक नारी की सामाजिक स्थिति के संबंध में मात्रा सैध्दांतिक

चर्चा ही नहीं करता, वरन् घटनाओं तथा मानव मनोविज्ञान के उन कुछ महत्वपूर्ण बिंदूओं को छूता है, जो अपने यथार्थ की भीषणता से पाठक तथा दर्शक को झकझोर देते है । यह पुस्तक अब उपलब्ध नहीं है ।

१.३.४७. समान व्यंग्य (व्यंग्य) – १९९१ ई.

इस पुस्तक में लेखक की १९९१ तक की सारी व्यंग्य रचनाएं संकलित कर दी गयी है । पूर्व–प्रकाशित व्यंग्य पुस्तके – एक और लाल तिकोन, पांच एब्सर्ड उपन्यास जगाने का अपराध, आश्रितों का विद्रोह, आधुनिक लडकी की पीडा–त्रासदियां तथा परेशानियां इस में सम्मिलित है । इस एक पुस्तक के माध्यम से व्यंग्यकार डॉ. नरेन्द्र कोहली के विकास और रचना संसार को सहज ही जाना और समझा जा सकता है । यह पुस्तक अब उपलब्ध नही है ।

१.३.४८. एक दिन मथुरा में (बाल उपन्यास) – १९९१ ई.

अस्सी पृष्ठों में बच्चों के लिए एक रोचक उपन्यास, जिसमें वैज्ञानिक फैटसी के साथ–साथ, बच्चों को अपनी सांस्कृतिक परंपरा का भी परिचय दिया गया है । यह पुस्तक अब स्वतंत्र रुप से उपलब्ध नहीं है । इसे एक दिन मथुरा में तथा अन्य कहानियाँ (हिंद पॉकेट बुक्स) – २००४ ई. में सम्मिलित कर लिया गया है ।

१.३.४९. हम सब का घर (बाल उपन्यास) – १९९१ ई.

पर्यावरण के विषय में लिखा गया, बच्चों के लिए एक अत्यंत रोचक उपन्यास है। इसमें सारी घटनाएँ एक परिवार के प्रत्येक के जीवन के चारों ओर घूमती है । बच्चों की क्रीडाओं और मनोरंजन को साथ लेकर चलती है, और उन्हे समझाती हैं कि पर्यावरण क्या है, उस का महत्व क्या है, उसे दूषित कौन कर रहा है और उस की रक्षा कैसे की जा सकती है ।

१.३.५०. समग्र कहानियाँ (कहानियाँ) – भाग – १ – १९९१ ई. भाग – २, १९९२ ई.

१९९२ ई. तक लिखी गई सारी कहानियों का संग्रह । लेखक ने अपनी भूमिका में कहा है : जिधर दृष्टि जाती थी, कोई न कोई कहानी दिख जाती थी – अपने भीतर भी,

अपने बाहर भी, फिर भी मेरी आरंभिक कहानियाँ इस अर्थ में काफी आत्मकेंद्रित रही है कि उनकी सारी सामग्री मैने अपने परिवार और निकट संबंधियों के व्यक्तिगत जीवन से ही ली है । अबोध शैशव को पीछे छोड आए, पहली बार आंखे खोलते हुए, तरुण मन के लिए शायद यही स्वाभाविक था । प्रतिदिन पारिवारिक सामाजिक जीवन के किसी न किसी नए तथ्य का उद्घाटन हो रहा था । अपने आस पास घटित घटनाओं की अनुभूतियों का ताजापन और उनके प्रति तिखी प्रतिक्रिया मुझे कहीं लिखने को बाध्य कर रही थी । कॉलेज के नए–नए अनुभव, हल्के–हल्के रोमांस, घर में पहला विवाह, नए बनते संबंध और पुराने संबंधो के प्रति विद्रोह जैसे उपकरण मुझे अनायास ही सुलभ हो गए थे; और मेरे पास था मस्ती से भरा तथा लोगों को कोंचने को आतुर मन, चुहल से कटाक्ष तथा विद्रूप तक जाती वाणी, स्वयं को बडों के बराबर मानने का अथक प्रयास क्योंकि बडों के गरिमायुक्त व्यक्तित्व क्रमशः हल्के पडते जा रहे थे । आरंभिक कहानियों में घटनाओं के नाटकीय संयोजन से, विसंगतियों तथा दोहरे मानदंडो पर प्रहार करना ही शायद मेरा प्रमुख उद्देश्य था । आज सोचता हूँ तो लगता है कि शायद अपने विद्रोह की घोषणा करने के लिए ही मैने कहानियां लिखी थी ।

अब यह पुस्तक वाणी प्रकाशन तथा डायमंड बुक्स से उपलब्ध है ।

१.३.५१. प्रेमचंद (समीक्षा) – १९९१ ई.

इस पुस्तक में प्रेमचंद संबंधी समीक्षात्मक – सृजनात्मक निबंध – प्रेमचंद का महत्व, प्रेमचंद का चिंतन तथा प्रेमचंद के साहित्य सिध्दांत – संकलित है । प्रेमचंद संबंधी पूर्व प्रकाशित दोनों पुस्तकों की सारी सामग्री इसमें आ गई है । इन निबंधो के माध्यम से प्रेमचंद साहित्य को समझने के अनेक नए आयाम उद्घाटित हुए है ।

१.३.५२. महासमर – ३ (कर्म) (उपन्यास) – १९९१ ई.

महासमर का तीसरा भाग, जिस में कांड से ले कर, दौपदी के स्वयंवर के पश्चात् पांडवो के पुनः हस्तिनापुर आने तथा हस्तिनापुर राज्य के विभाजन की कथा है । इस में घटनाओं का आकर्षण तो है ही, साथ ही युधिष्ठिर के साथ – साथ भीम और अर्जुन का

महत्व भी, उनके असाधारण कृत्यों के माध्यम से महत्व भी स्थापित होता है । करणावत में पांडवो को मृत्यु के मुख से बचाने तथा संपूर्ण जंबूद्वीप के राजाओं एवं महत्वपूर्ण लोगों के सम्मुख पुर्नजीवित करने के लिए, उत्तरदायी लोगों एवं घटनाओं का विस्तृत विश्लेषण एवं चित्रण है । प्रेम, विवाह तथा धर्म संबंधी मान्यताओं के बीच द्रौपदी के पंचपतित्व की व्याख्या भी उपन्यास की ही घटनाओं के समान रोचक है । अंततः पांडवो का राज्याधिकार देने का सत्य भी खुल कर सामने आता है । खांडवप्रस्थ का राज्य युधिष्ठिर का राज्याभिषेक था अथवा पांडवों को फिर एक बार हस्तिनापुर से निष्कासित कर मृत्यु के मुख में झोंक देने का एक अत्यंत जटिल षड्यंत्र रचा गया था ।

इस संदर्भ में भारत भारव्दाज लिखते है, '' डॉ. नरेन्द्र कोहली ने महाभारत की घटनाओं एवं पात्रों को इन उपन्यासों में मात्र उठाया ही नही है बल्कि उनके पीछे जो सच्चाइयाँ दब गई थी, उन्हें अनावृत भी किया है, कथा पात्रों में छिपे हुए अर्थ का पुनःसृजन किया है । सबसे बडी बात महाभारत के पात्रों के मानसिक अंर्तव्दन्द को गहराई से मूर्त किया है । चाहे वह कुंती का अंर्तव्दन्द हो या कर्ण, भीष्म पितामह का । कोहली जी ने बहुत धैर्य एवं परिश्रम से एक–एक पात्र की मानसिकता में प्रवेश कर उन का चित्रण किया है । महाभारत के अधिकांश पात्र, यहाँ एक नई अर्थदीप्ति से चमक उठे है । इस अर्थ में यह उपन्यास – श्रृंखला, जानी या कहानी को मात्र जानना या पढना या पढाना नहीं है, बल्कि हस्तिनापुर में अपनी आंखों से नए दृष्टिकोण से उन्हें देखता है । इसीलिए यह उपन्यास–श्रृंखला, मौलिक उपन्यास पढने का आनन्द देती है ।''[११] इस प्रकार उपन्यास में चित्रित वास्तविकता को उजागर करने का प्रयास किया गया है ।

१.३.५३. तोडो कारा तोडो – १ (निर्माण) उपन्यास – १९९२ ई.

'तोडो कारा तोडो' यह स्वामी विवेकानन्द की जीवन कथा पर आधृत उपन्यास है । इस बृहत् उपन्यास का प्रथम खंड का निर्माण स्वामी विवेकानन्द के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों को स्पष्ट करता है । इस की कथा उन के जन्म से, श्रीरामकृष्ण परमहंस तथा

जगन्माता महाकाली के सम्मुख निर्द्वंन्द तथा पूर्ण आत्मसमर्पण तक की घटनाओं पर आधृत है ।

'तोडो कारा तोडो' प्रख्यात कथाओं का आश्रय ले कर लिखे गए उपन्यासों की परंपरा का विकास होते हुए भी, रचना कर्म की दृष्टि से पर्याप्त भिन्न तथा अभिनव उपन्यास है । पौराणिक गाथाओं पर आधृत उपन्यासों के लेखन की कल्पना तथा सृजन के लिए पर्याप्त अवकाश होता है । उस में प्राचीन कथा तथा पात्रों पर लेखक का अपना व्यक्तित्व और चिंतन भी मौलिक उद्‌भावनाओं के रुप में आरोपित हो सकता है । स्वामी विवेकानंद का जीवन निकट अतीत की घटना है । उन के जीवन की प्रायः घटनाएं सप्रमाण, इतिहासांकित है । यहां उपन्यासकार के लिए अपनी कल्पना अथवा अपने चिंतन को आरोपित करने की सुविधा नही है । अपनी बात न कह कर उपन्यासकार को वही कहना होगा, जो स्वामी विवेकानन्द ने कहा था । अपने नायक के व्यक्तिव्य और चिंतन से तादात्म्य ही उस के लिए एक मात्र मार्ग है । इस उपन्यास के प्रत्येक पृष्ठ पर उपन्यासकार के द्वारा चित्रित नायक के साथ तादात्म्य को देख कर आप चकित रह जाएंगे ।

अंग्रेजी तथा बांगला में स्वामी जी की कुछ विस्तृत तथा प्रामाणिक जीवनियाँ उपलब्ध है । ये जीवनियाँ विभिन्न दृष्टिकोणों से लिखी गई है; फिर भी उन में स्वामीजी के आध्यात्मिक साधक तथा समाज सुधारक होने पर ही सर्वाधिक बल दिया गया है । जीवनीकार तथा उपन्यासकार में अंतर होता है । उपन्यासकार की रुचि कुछ व्यापक होती है । वह अपने नायक तथा उस के संपूर्ण युग को उन की समग्रता में चित्रित करना चाहता है । अतः साधना को केन्द्र में मानते हुए भी वह अन्य पक्षों को उपेक्षा नही कर सकता । वह जीवनीकार के समान एकांगी नहीं हो सकता ।

उपन्यास का शिल्प भी जीवनी के शिल्प से भिन्न है । उपन्यासकार घटनाओं तथा चरित्रों को अलग–अलग स्थानो में रख, उन का एक दूसरों से सर्वथा असंपृक्त विकास नही दिखाता । वह अलग अलग स्त्रोतास्विनियों के असंबध्द प्रवाह का वर्णन कर ही संतुष्ट नहीं हो सकता; उसे उन स्त्रोतास्विनियों के साथ साथ, उन्हें संपृक्त करने वाली भूमि का भी चित्रण करना होगा । डॉ. नरेन्द्र कोहली ने अपने नायक को उनकी परंपरा तथा परिवेश

से पृथक कर नहीं देखा । स्वामी विवेकानन्द ऐसे नायक है भी नहीं, जिन्हें अपने परिवेश से अलग थलग किया जा सके । वे तो जैसे महासागर के किसी असाधारण ज्वार के उद्‌दातम चरम अंश थे । ‘तोडो कारा तोडो’ उस ज्वर को पूर्ण रुप से जीवंत करने का औपन्यासिक प्रयत्न है, जो स्वामी विवेकानन्द को पूर्वापार के मध्य रख कर ही देखना चाहता है । अतः इस उपन्यास के लिए न श्रीरामकृष्ण परमहंस पराए है; न स्वामी विवेकानन्द के सहयोगी तथा गुरुभाई; और न ही उन की शिष्य परंपरा की प्रतीक भगिनी निवेदिता ।

स्वामी जी का जीवन बंधनो तथा सीमाओं के अतिक्रमण के लिए सार्थक संघर्ष था; बंधन चाहे प्राकृतिक हो, सामाजिक हो, राजनैतिक हो, धार्मिक हो या आध्यात्मिक हो । उन्होंने सारे मानव समाज का उठ खडे होने मात्र का नहीं, बंधनों को तोडने का आवाहन किया था । ‘तोडो कारा तोडो’ के आगामी खंड उस अभूतपूर्व अनुपमेय ज्वर को उस की पूर्णता में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है ।

१.३.५४. जहां है धर्म, वहीं है जय (महाभारत का विवेचनात्मक अध्यपन) – १९९३

महाभारत को पढने से पूर्व भी लेखक का उस से परिचय था, प्रायः सभी का होता है । कुछ श्रुति परंपरा से, कुछ महाभारत कथा पर आधृत साहित्यिक कृतियों के माध्यम से और कुछ सामाजिक मान्यताओं के माध्यम से । कितनी ही घटनाएं अच्छी लगती है, कितने ही पात्र, कितनी ही उक्तियां और कितनी ही धारणाएं मुग्धकारी होती है लेकिन शिकायतें भी कम नही होती । जब मनुष्य अपने ज्ञान, चिंतन और सिध्दांत को समयसिध्द चरित्रों और घटनाओं पर आरोपित करता है, तो वह स्वयं को अपने मन में उन से कुछ बडा समझने लगता है । न तो वह तटस्थ भाव से उन चरित्रों और घटनाओं को उन के अपने में जानने का प्रयत्न करता है और न उन ग्रंथो से अपना संभावित विकास कर पाता है । यह तभी संभव हो पाता है, जब उन पात्रों को उन्हीं के देशकाल और मनोविज्ञान में रख कर उनसे परिचय प्राप्त किया जाए ।

लेखक के अनुसार – जब उन्होंने ने महाभारत को साहित्यिक कृति के रुप में पढना आरंभ किया था, तो उनके मे मन में भी अनेक प्रश्न थे । किंतु जब महाभारत उस पर

आच्छादित होने लगा तो उस ने अनुभव किया कि यदि वह स्वयं को महाभारत पर आरोपित करने का प्रयत्न करता है तो महाभारत मौन है और यदि जिज्ञासू बन कर उस के सम्मुख जाता है तो वह उस की समस्याओं का समाधान करता है ।

१.३.५५. महासमर – ४ (धर्म) उपन्यास – १९९३ ई.

महासमर का चौथा भाग । इस खंड की कथा, पांडवों को राज्य के रुप में मिले, खांडवप्रस्थ से आरंभ होती हुई, अर्जुन के बारह वर्षो के ब्रम्हचर्यपूर्ण वनवास, खांडववन–दहन, राजसूय यज्ञ, जरासंघ वध, इत्यादि पडावों से होती हुई द्यूतसभा तक पहुँचती है ।

ईशान महेश ने लिखा है; ''धर्म की कथा में डॉ. नरेन्द्र कोहली ने जहाँ अपनी कथानक निर्माण की प्रतिभा से पाठक को मंत्रमुग्ध किया है, वही तर्को से उस की बुध्दि को चमत्कृत भी किया है । निस्संदेह महाभारत की कालजयी कथा पर आधृत यह कृति कालजयी तो है ही एक मौलिक तथा युगानुकूल कृति भी है, जिस से आज के शंकालु, बुध्दिजीवि पाठक का सहज ही तादात्म्य हो जाता है ।''[१२] इसी तरह हर बात को समझने के लिए पाठकों के पास प्रौढ मस्तिष्क की आवश्यकता होनी चाहिए ।

१.३.५६. तोडो कारा तोडो – २ (साधना) उपन्यास – १९९३ ई.

'तोडो कारा तोडो' का दूसरा खंड । इस में स्वामी विवेकानन्द तथा उन के गुरुभाइयों द्वारा अपने गुरु की सेवा, उन के द्वारा एक भुतहे मकान में मठ की स्थापना और उनकी कठोर तपस्या की कथा है । स्वामी विवेकानन्द अपने गुरु के मृत्यु के पश्चात् अपने गुरुभाइयों को उन के घरों से खींच लाते है और उन्हे मठ में बसा कर स्वयं एक अज्ञात संन्यासी के रुप में भारत भ्रमण के लिए निकल जाते है ।

१.३.५७. महासमर – ५ (अंतराल) उपन्यास – १९९६ ई.

इस खंड में द्यूत में हारने के पश्चात् पांडवों के वनवास की कथा है । कुंती पांडु के साथ शतश्रृंग वनवास करने गई थी । लाक्षागृह के जलने पर वे अपने पुत्रों के साथ हिडिंब

वन में थी । महाभारत की कथा के अंतिम चरण में उन्होंने धृतराष्ट्र, गांधारी तथा विदुर के साथ भी वनवास किया था, किंतु अपने पुत्रों के विकट कष्ट के इन दिनों में वे उन के साथ अपने मायके चली गई; किंतु द्रौपदी कांपिल्य नही गई । वह पांडवो के साथ वन में ही रही । क्यो ?

कृष्ण चाहते थे कि यादवों के बाहूबल द्वारा दुर्योधन से पांडवो का राज्य छीन कर पांडवों को लौटा दें । किंतु वे ऐसा नहीं कर सके । क्यों ? सहसा ऐसा क्या हो गया कि बलराम के लिए धृतराष्ट्र को यह अधिकार मिल गया कि वह कृष्ण से सैनिक सहायता मांग सके और कृष्ण उसे यह भी न कह सकें कि वे उस की सहायता नहीं करेंगे ।

इतने शक्तिशाली सहायक होते हुए भी युधिष्ठिर भयभीत क्यों थे ? उन्होने अर्जुन को किस अपेक्षाओं के साथ दिव्यास्त्र प्राप्त करने के लिए भेजा था । अर्जुन क्या सचमुच स्वर्ग गए थे, जहाँ इस देह के साथ कोई नहीं जा सकता ? क्या उन्हें साक्षात महादेव के दर्शन हुए थे ? अपनी पिछली यात्रा में तीन–तीन विवाह करने वाले अर्जुन के साथ ऐसा क्या घटित हो गया कि उसने उर्वशी के काम–निवेदन का तिरस्कार कर दिया?

इस प्रकार के अनेक प्रश्नों के उत्तर निर्दोष तर्को के आधार पर अंतराल में प्रस्तुत किए गए है । यादवों की राजनैतिक, पांडवों का धर्म के प्रति आग्रह तथा दुर्योधन की मदांधता संबंधी यह रचना पाठक के सम्मुख इस प्रख्यात कथा के अनेक नवीन आयाम उद्‌घटित करती है । कथानक का ऐसा प्रवाह डॉ. नरेन्द्र कोहली की लेखनी से ही संभव है।

१.३.५८. क्षमा करना जीजी । (उपन्यास) – १९९५ ई.

यह उपन्यास एक परिवार के संबंधो के भावुक वातावरण को लेकर रचा गया है; किंतु इस की मूल व्यथा, पारिवारिक संबंधो तक ही सीमित नहीं है । कोहली ने पूर्व स्मृति के शिल्प में प्रायः वे सारे प्रसंग उठाए है जो निम्न मध्यवर्ग की नारी के जीवन में, विकास–पथ के विघ्नों के रुप में उस के सामने आते है । परिवारजनों का स्नेह, बंधन भी हो सकता

है, बाधा भी और अंततः छोटे–छोटे स्वार्थो तथा असमर्थताओं के कारण वह स्नेह का पाखंड भी हो सकता है ।

इस उपन्यास की नायिका जिजीविषा से भरी एक जुझारु महिला है, जो अपने सामर्थ्य, श्रम तथा साहस के बल पर विकास–पथ का निर्माण करना चाहती है । वह अपना विकास कर पाती है या नही, इस में मतभेद हो सकता है, किंतु वह अपने सम्मान की रक्षा में सफल होती है, इस में कोई संदेह नहीं है ।

१.३.५९. अभी तुम बच्चे हो (बाल कथा) – १९९५ ई.

एक रोचक बालकथा, जिस में बच्चों को बाल्यावस्था अपनी स्वतंत्रता के मार्ग में बाधा बनी खडी दिखाई देती है । सुंदर, सचित्रा प्रकाशान ।

१.३.६०. प्रतिनाद (पत्र संकलन) – १९९६ ई.

साहित्य विधा की दृष्टि से पत्र – साहित्य एक प्रकार से विविधा है । पत्रों में संस्मरण भी हो सकते है, रेखाचित्र भी, समीक्षाएं भी, हास्य–व्यंग्य भी और अपवाद स्वरुप कुछ पत्रों में कहानियां भी । लिखने वाला तो अपने किसी मित्रा, परिचित, अथवा किसी संबंधी को एक आत्मीय पत्रा ही लिख रहा है; किंतु अनेक बार वह स्वयं भी नहीं जानता कि उस का वह पात्र कौन सा रुप ग्रहण करेगा । पात्र औपचारिक भी होते है और अनौपचारिक पात्र तो एक प्रकार से पात्र कोहली का अपने विषय में दिया गया वक्तव्य ही होता है ।

१.३.६१. आत्मा की पवित्रता (व्यंग्य) – १९९६ ई.

इस पुस्तक के संदभ्र में कार्तिकेय कोहली कहते है, ''अनुचित, अन्यायपूर्ण अथवा गलत होते देख कर जो आक्रोश जागता है, वह अपनी असहायता में वक्र होकर जब अपनी तथा दूसरों की पीडा पर हंसने लगता है, तो वह बिकट व्यंग्य होता है । वह पाठक के मन को चुभलाता सहलाता नहीं, कोडे लगाता है।''[१३] आत्मा की पवित्रता में संगृहीत व्यंग्य रचनाएं इस दृष्टि से सर्वथा खरी है ।

१.३.६२. किसे जगाऊ? (सांस्कृतिक निबंध) – १९९६ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली के सांस्कृतिक निबंधो का यह पहला संग्रह है, और आप यह पढ कर ही जान सकते है कि एक सर्जक साहित्यकार जब जीवन की गहन दार्शनिक तथा सांस्कृतिक समस्याओं पर विचार करता है तो किस प्रकार उन सूक्ष्म विचारों को भी आकार और शरीर देकर उन्हें प्राणवान बनाना है, सामान्य जन के जीवन के रोजाना क्रम के सहज बना देता है । वह उन सारे विचारों को किसी ग्रंथ से नहीं जीवन से उठाता है । वह विचारों से जीवन को ओर नहीं, जीवन से विचारों की ओर जाता है । उस के लिए वे मात्र सूचना के नहीं, संवेदन के विषय है । इसीलिए वे समस्याएँ, जीवन से संपृक्त अथवा उसके समानांतर न हो कर, उस का अंग ही है । स्वयं जीवन है ।

इन निबंधो में विचारों की गंभीरता के बावजूद, कथा साहित्य की सरसता और पठनीयता है । भाषा का ललित और बिंबो की सजीवता आप को मुग्ध कर लेगी । आप पाएंगे कि चिंतन जब सृजन के मार्ग से आता है, तो अपरिचित, परिचित हो जाता है, परिचित आत्मीय हो जाता है तथा वह आत्मीयता आप के लिए बोझ अथवा आप के जीवन में अवांछित हस्तक्षेप न होकर, सहज उत्फुल्लता एवं जीवन का सार हो जाती है।

इस संकलन का पहला निबंध स्मरणशक्ति का क्षरण शिकागो में दिए गए स्वामी विवेकानन्द के भाषण के अनुसार हिंदू धर्म के स्वरुप की व्याख्या करता है, किंतु वह एक मौलिक तथा सृजनधर्मा निबंध है । पाठक जान भी नहीं पाता कि जब डॉ. नरेन्द्र कोहली अपने व्यक्तिगत अनुभवों और विचारों से उसे क्रमशः उन दार्शनिक अवधारणाों की ओर ले चलते है । यह साहित्य, अध्यात्म और दर्शन को एक साथ पढने का आनन्द है ।

१.३.६३. महासमर – ६ (प्रच्छन्न) उपन्यास – १९९७ ई.

महासमर का छठा भाग । पांडवों के वनवास काल में दुर्योधन तथा उसके भाइयों और मित्रों द्वारा की गई घोषयात्रा, दुर्वासा का अपने शिष्यों के साथ पांडवों के आश्रम में

पहुँचना, जयद्रथ द्वारा द्रौपदी का हरण, यक्ष प्रश्न, तथा पांडवों का विराटनगर में अज्ञातवास इत्यादि घटनाएं इस खंड में बहुत आकर्षक स्थल है ।

उपन्यास का सौन्दर्य इस दृष्टि से आकृष्ट करता है कि जो कुछ घटित हो रहा है वह प्रच्छन्न रुप से हो रहा है । वास्तविकता कुछ और है और विराटनगर में बिखेर दिया है । इस प्रकार कथा एकांगी नही लगती । वह अपनी समग्रता में पाठक के सम्मुख अनावृत होती है । इस कथाखंड में चमत्कारिक घटनाएं कदाचित् सबसे अधिक है, किंतु डॉ. नरेन्द्र कोहली की लेखनी उन्हें उद्भुत और चमत्कारिक नहीं रहने देती । वे सब हमारे जीवन की सहज घटनाओं के अनुरुप, स्वाभाविक हो जाती है ।

इस खंड में दो बातें सब से अधिक ध्यान आकृष्ट करती है, एक तो राजनैतिकों का अधिक से अधिक अपराधीकरण अथवा अपराधियों का सत्ता के केन्द्र में आ जाना और दूसरा कृष्ण के देवत्व का क्रमशः उद्घाटन । लेखक की आस्था अपनी पूर्ण प्रबलता से अभिव्यक्त हो रही है, किंतु कृष्ण का देवत्व जिस रुप में उद्घटित होता चलता है, उस का तर्कशीलता और बौध्दिकता से कहीं कोई विरोध नहीं है । इस कला का वास्तविक रुप तो उपन्यास पढने के पश्चात् ही समझ में आ सकता है ।

दुर्योधन की गृध दृष्टि से पांडव कैसे छिपे रह सके ? अपने अज्ञातवास के लिए, पांडवों ने विराटनगर को ही क्यों चुना ? पांडवों के शत्रूओं में प्रच्छन्न मित्र कहां थे और मित्रों में प्रच्छन्न शत्रू कहां पनप रहे थे ? ऐसे ही अनेक गंभीर एवं रहस्यमय प्रश्नों की कथा, इस खंड में प्रच्छन्न है ।

समीक्षकों का कहना है :

१.३.६३.१. अटलबिहारी वाजपेयी इस संदर्भ में कहते है, ''उन्होने कर्ण के संबंध में जो लिखा है, उस पर काफी चर्चा हुई है । मुझे लगता है कि वह विवाद और भी गहराएगा । गहराना चाहिए ... मै कर्ण के प्रशंसको में था, लेकिन उनका उपन्यास पढने के बाद मुझे लगा कि कर्ण ने द्रौपदी के साथ जो किया, उसे क्षमा नहीं किया जा सकता । पांडवों से प्रतिशोध लेने के लिए, राजदरबार में, द्रौपदी को इस प्रकार अपमानित करना, उस के विरुध्द अपशब्द कहना कोई जरुरी नहीं है ... (उसमें) कर्ण के प्रति गहरी सहानुभूति है ।

लेकिन कर्ण के चरित्र के कुछ अंश ऐसे है? जो सचमुच व्यालिख बन जाते है । मै चाहूंगा, इस पर और चर्चा है आप उसे स्वीकार करें, लेकिन उन्होंने एक चुनौती दी है और मुझे लगता है कि यह चुनौती एक विचार मंथन को प्रवृत्त करेगी ।''[१४] इस प्रकार सोच बदलने का साहित्य द्वारा हो जाता है ।

१.३.६३.२. डॉ. गोपालराय महासमर की भूमिका में कहते है, ''डॉ. नरेन्द्र कोहली में अपने पात्रों की क्षमता और स्वभाव के अनुरुप भाषा और विचार गढने की उल्लेखनीय क्षमता है । कही–कही तो उनकी वाणी आर्ष वाणी जैसी प्रतीत होती है, अनुभव और संवेदना से दीप्त, सटीक और मंत्रा के निकट पहुंचती हुई । ऐसा महर्षि व्यास, कृष्ण, भीष्म पितामह और धर्मराज युधिष्ठिर के प्रसंगो में हुआ है । वस्तुतः वास्तविक जीवन की तरह, उपन्यास के पात्रों की पहचान भी उस की भाषा से ही होती है । कोहली ने अपने हर पात्र को उस के वर्ग और स्वभाव के अनुरुप भाषा प्रदान कर उसे विश्वसनीय और आकर्षक बना दिया है।''[१५] इससे स्पष्ट है कि पात्र के अनुरूप भाषा स्वरूप दिखायी देता है ।

१.३.६३.३. महासमर की भूमिका में डॉ. शशिभूषण सिंघल कहते है, ''डॉ. नरेन्द्र कोहली इतिहास के जड दिखने वाले प्रकरणों और पात्रों को सजीवता प्रदान कर उन्हे पाठक की कल्पना में साकार करने में समर्थ है । यही तत्व उन के हाथों महाभारत की कथा को उपन्यास का रुप देता है । कथा क्या है ? यह है परिणामयुक्त, कुतूहलप्रद देता है और उन्ही के सूत्रों से बनती बिगडती घटनाओं को साधनरुप में पृष्ठभूमि में रख कर शनैः शनैः मंथर गति से सांकेतिक रुप में कथा कहना कम, उस का दृश्यांकन अधिक करता चलता है । घटना उपन्यासकार के लिए एक माध्यम भर जिस के चारों ओर सजीवता प्रदान करती है और इसी तकनीक से पात्र साक्षात् हमारे जीवन और उस की समस्याओं के समीप आते है ।''[१६] इस प्रकार पात्रों का सजीव वर्णन करने में वे कामयाब हो गए है। ''आज जब संचार माध्यमों के द्वारा विदेशी संस्कृति ने शिक्षा और साहित्य को एक 'वस्तु' बना दिया है, ऐसे में सत्य, धर्म, न्याय, मानवता, सामाजिकता आदि मूल्यों की स्थापना में डॉ. नरेन्द्र कोहली

का स्वर 'एकला चलो रे' के साहस से युक्त लगता है । आज परिवार की इकाई टूट रही है, संबंध चरमरा रहे है और सत्ता मात्र अपने स्वार्थ साधने का मंच सह गया है । आज नेताओं के मुख से राष्ट्रहित और समाजहित की बातें मगरमच्छ के आँसुओ को भी लज्जित करती है । पूरा माहौल ही भ्रष्ट लगता है । ऐसे में रचनाकार पौराणिक परिवेश की ओर मुडता है जो लगता है कि जैसे वह पलायन कर रहा है । इस तरह के लेखन में अप्रासंगिक होने के खतरे बहुत बढ जाते है और जब कोहली अधिक प्रासंगिक होने के मोह में वैज्ञानिक दृष्टिकोण देने लगता है तो कथासूत्र छूटने लगते है । नरेन्द्र कोहलीने महाभारत की कथा को आज से जोडने का कोई अलग प्रयास नहीं किया है, परंतु जैसा कि उनका मानना है, मनुष्य की प्रकृति वही है, केवल काल बदलता है । इस आधार पर लगता है जैसे उनके सभी पात्र आज की बातें कर रहें है । महाभारत जो राजनैतिक उठा पटक का अखाडा है, उसमें हमारे देश की वर्तमान राजनैतिक विसंगतियां अपनें संपूर्ण रुप में दिखाई देने लगें तो कैसा आश्चर्य । कीचक वध के पश्चात् बल्लव अर्थात् भीम से हुई विराट की बातचीत के दो उध्दरण प्रस्तुत है । शक्तिशाली और प्रशासन में उंचे पदों पर बैठे लोगों को जब उनके अपराधों का दंड नही दिया जाता, तो समाज की शुभ तथा कल्याणकारी शक्तियां हतोत्सहित हो जाती है । इस संदर्भ में डॉ. प्रेम जनमेय कथन सही लगता है, ''महाराज अपराध का दंड वैसे तो सबको मिलना चाहिए किंतु समाज के महत्वपूर्ण लोगों को तो उनके अपराधो का दंड तत्काल और कठोरता से मिलना चाहिए।''[१७] इस प्रकार सत्ताप्राप्त लोगों द्वारा शासन व्यवस्था पर का दबाव सामने आता है ।

१.३.६४. डॉ. कोहली ने कहा (आत्मकथा तथा सूक्तियां) – १९९७ ई.

कहा तो यह सब कुछ डॉ. नरेन्द्र काहली ने ही है, किंतु इस प्रकार पुस्तक के रुप में नही कहा था । कभी आत्मकथा के रुप में कहा, अपने विषय में बात करते हुए, कभी अपनी सृजन प्रक्रिया की गुत्थियां सुलझाने की प्रक्रिया में कहा और कभी किसी के प्रश्नों और जिज्ञासाओं का उत्तर देते हुए कहा । इतना ही नही, लेखक की विभिन्न रचनाओं के पात्र जो कुछ कहते है, वस्तुतः कहता तो वह भी लेखक ही है । तो यह सब डॉ. नरेन्द्र कोहली

ने कहा । व्यक्ति के विषय में भी कहा और समाज के विषय में भी । वे समाज के मन में बैठे, व्यक्ति के मन में भी और अपने मन में भी । इस पुस्तक ने तो बस एक मंच प्रस्तुत कर दिया है, जहां डॉ. नरेन्द्र कोहली की उक्तिया मिल बैठी है । वक्तव्य एकत्रित हो गए है और अनुभव रेखांकित हो गए है । यह मंच इसीलिए बनाया गया, कि उस के सम्मुख बैठा श्रोता अपनी जिज्ञासाओं का समाधान पा सके और अपने प्रश्नों की तृषा को उन के वास्तविक उत्तरों से तृप्त कर सके ।

लेखक जो कुछ अपने पात्रों के माध्यम से कहता है, जो वह अपनी बातचीत में कहता है, कहता तो अपना अनुभव ही है । तो उस के कहे से समाज और व्यक्ति अनुभव ही है । तो उस के कहे से समाज और व्यक्ति मन को जानना, उस के सृजन को जानना, उस की सृजन प्रक्रिया को जानना, एक सर्जक साहित्यकार के अंतस को जानना, उस की आत्मा को जानना ।

हमारे पास इस प्रकार की पुस्तके बहुत कम है, जिनके माध्यम से उन पुस्तकों के सर्जक के वास्तविक व्यक्तित्व, उसके मन, उसके सृजन–संसार तथा उस के चिंतन को जान सकें, जो हमें बेहद प्रिय है । सामान्य पाठक के लिए लेखक और कलाकार जिज्ञासा की वस्तु ही बन रहता है – एक गयवीय अस्तित्व । पर यह पुस्तक आपके लिए, अपने प्रिय लेखक को एक वायवीय अस्तित्व नहीं रहने देगी । यह उसके चिंतन को ही नहीं, उसके अनुभव को भी एक स्पष्ट रुपाकार देकर आपके सम्मुख प्रस्तुत कर देगी । आप सृजन को ही नहीं, उस सर्जक को भी जान पाएँगे, जिसने वह सृजन किया है ।

और फिर आप उस के चिंतन के निष्कर्षो को सूक्तियों के रुप में भी जानेंगे । इस पुस्तक के प्रकाशन के पश्चात् यह कहना कठिन हो जाएगा कि हिंदी का पाठक, अपने लेखक के विषय में जिज्ञासा नहीं करता, वह उससे प्रेम नहीं करता । यह पुस्तक एक पारदर्शी चिलमन है, जो आपके और लेखक के मध्य के सारे पर्दे उठा देती है । आप अपने आत्मीय रुप में जान सकते है, उस तक पहुँच सकते है ।

१.३.६५. मेरी इक्यावन व्यंग्य रचनाएं (व्यंग्य) – १९९७ ई.

कहानीकार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने १९६५ ई. में व्यंग्य लिखना आरंभ किया तो वे व्यंग्यकार ही हो गए । इन बत्तीस वर्षो में डॉ. नरेन्द्र कोहली ने कभी व्यंग्य की अवहेलना नहीं की । समय के साथ उनका व्यंग्य और पैना और प्रखर हुआ । अट्टाहास और चकचलस पुरस्कारों से सम्मानित डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य लेखन में पिछले दिनों राजनीति का रंग कुछ गहरा हुआ । वे दूसरों की बताई हुई रुढ सीमाओं में बंध कर फैशनेबल तारों को ध्यान में रख कर रचना नहीं करते, नही वे साहित्यिक रुढिवादियों की मान्यता और स्वीकृति की चिंता करते है । इसीलिए वे उन विसंगतियों पर भी लिखते है, जिसे लोगों ने देखा और भोगा तो है, किंतु जिस के विषय में लिखने का साहस वे नहीं कर सकते ।

समग्र व्यंग्य में से चुने हुए इक्यावन व्यंग्यों का संकलन है, जो आज के यथार्थ पर लागू होता है ।

१.३.६६. गणतंत्रा का गणित (व्यंग्य) – १९९७ ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली जीवन में ही नही, साहित्य में भी रुढियों का विरोध करते है। इसीलिए वे उन विषयों पर भी लिखते है । जिन पर देश के प्रखर व्यंग्यकार लेखनी उठाने से कतरा जाते है । डॉ. नरेन्द्र कोहली के लिए वे क्षेत्र भी निषिध्द नही, जिन में प्रवेश करने से देश की सरकार और राजनैतिक ही नही, साहित्यिक प्रभु भी रुष्ट हो जाते है । विडंबना यह है कि समाज की विडंबनाओं का चित्रण करने वाला व्यंग्यकार स्वयं साहित्यिक विडंबनाओ का शिकार है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहली दूसरों की बनाई हुई रुढ सीमाओं में बंध कर, फैशनेबल नारों को ध्यान में रखकर व्यंग्य नहीं लिखते, न वे रुढिवादियों की स्वीकृति की चिंता करते है । इसीलिए उनके व्यंग्य पढ कर पाठक यह अनुभव करता है कि वह उन विसंगतियों को पहली बार साहित्य के रुप में पढ रहा है, जो उस की आंखो ने देखी तो थी, किंतु जिन्हे

यह देकर किसी ने भी साक्षात् नही किया था । वह पहली बार अपनी पीडा को डॉ. नरेन्द्र कोहली के शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति पाते देखता है और के साथ में पूर्ण तादात्म्य का अनुभव करता है ।

१.३.६७. कुकुर (बाल कथा) – १९९७ ई.

कुकुर नामक लंबी बाल कथा को सचित्र रुप में एक स्वतंत्र पुस्तक के रुप में प्रकाशित किया अभिरुचि प्रकाशन ने । बालकों की पशुओं को पालने संबंधी मोह की कहानी, जो बच्चों का ही नही उन के माता पिता का भी मन मोह लेती है ।

१.३.६८. समाधान (बाल कथा) – १९९७ ई.

एक आकर्षक कथा जिस में बच्चों की समस्याएं, घर के बडों की समस्याएं बन जाती है । फिर समाधन तो सब को मिल कर ही खोजना होता है ।

१.३.६९. समाधान – ७ (प्रत्यक्ष) उपन्यास – १९९७ ई.

महासमर का सातवां खंड । जिस में युध्द के उद्योग और फिर युध्द के प्रथम चरण अर्थात् भीष्म पर्व की कथा है । कथा तो यही है कि पांडवों ने अपने सारे मित्रों से सहायता मांगी । कृष्ण से भी । पर डॉ. नरेन्द्र कोहली का प्रश्न है कि जो कृष्ण आज तक युधिष्ठिर से कह रहे थे कि वे कुछ न करें, बस अनुमति दे दें तो यादव ही दुर्योधन का वध कर पांडवों का राज्य उन्हें प्राप्त करवा देंगे, वे कृष्ण युध्द के उद्योग की भूमि उपलव्य से उठ कर व्दारका क्यों चले गए ? पांडवो को उनसे सहायता माँगने के लिए व्दारका क्यों जाना पडा ? कृष्ण ने पापी दुर्योधन को अपने परम मित्र अर्जुन के समकक्ष कैसे मान लिया? प्रश्न यह भी है कि जो कृतवर्मा कृष्ण के समधी थे, जिसने कौरवों की राजसभा से कृष्ण को सुरक्षित बाहर निकाल लाने के लिए अपनी जान दी, वह दुर्योधन के पक्ष से युध्द करने क्यों चला गया ? ऐसा क्यो हो गया कि यादवों के सर्वप्रिय नेता कृष्ण जब पांडवो की ओर

से युध्द में सम्मिलित होने आए तो उन के साथ न उन के भाई थे, न उनके पुत्र ? कोई नहीं था कृष्ण के साथ । यादवों में इतने अकेले कैसे हो गए कृष्ण ?

जिस युधिष्ठिर के राज्य के लिए यह युध्द होना था, वह युधिष्ठिर ही युध्द के पक्ष में नहीं था । जिस अर्जुन के बल पर पांडवों को यह युध्द लडना था, वह अर्जुन अपना गांडीव त्याग कर हताश होकर बैठ गया था । उसे युध्द नहीं करना था । जिन यादवों का सबसे बडा सहारा था, उन यादवों में से कोई नहीं आया लडने, तो महाभारत का युध्द कौन लड रहा था? कृष्ण? अकेले कृष्ण? जिन के हाथ में अपना कोई शस्त्र भी नहीं था?

अर्जुन शिखंडी को सामने रख भीष्म का वध करता है अथवा पहले चरण में वह भीष्म को शिखंडी से बचाता रहा है और फिर अपने जीवन और युग से हताश भीष्म को एक क्षत्रिय की गौरवपूर्ण मृत्यु देने के लिए उनसे सहयोग करता है । कर्ण का रोष क्या था और क्या था कर्ण का धर्म? कर्ण का चरित्र? इस खंड मे कुंती और कर्ण का धर्म? कर्ण का चरित्र? इस खंड में कुंती और कर्ण का प्रत्यक्ष साक्षात्कार हुआ है और कुंती ने प्रत्यक्ष किया है कर्ण की महानता को । बताया है उसे कि वह क्या कर रहा है, क्या करता रहा है । बहुत कुछ प्रत्यक्ष हुआ है, महासमर के इस सातवें खंड में ।

किंतु सब से अधिक प्रत्यक्ष हुए है नायकों के नायक श्रीकृष्ण । लगता है कि एक बार कृष्ण प्रकट हो जाएं तो अन्य प्रत्येक पात्र उनके सम्मुख वामन हो जाता है । और इसी खंड में है कृष्ण की गीता ... भगवद्‌गीता ... । एक उपन्यास में गीता, जो गीता भी है और उपन्यास भी । इस खंड को पढने के पश्चात् रुप से आप अनुभव करेंगे कि आप कृष्ण को बहुत जानते थे, पर फिर भी इतना तो नहीं ही जानते थे ।

१.३.७०. समग्र व्यंग्य – १ (देश के शुभचिंतक) व्यंग्य – १९९७ ई.

१९९१ ई. में किताबघर से समग्र व्यंग्य प्रकाशित हुआ था । उसमें १९९१ ई. तक की व्यंग्य रचनाएं थी । इधर सात वर्षो में और भी बहुत कुछ लिखा गया था । फिर किताबघर वाला संस्करण उपलब्ध भी नहीं था । अतः पुनः समग्र व्यंग्य को प्रकाशित करने की योजना बनी । उसके विस्तार को देखते हुए यह निश्चय किया गया कि एक जिल्द में

उस सारी सामग्री का प्रकाशित होना सुविधाजनक नहीं होगा, अतः उसे तीन खंडो मे प्रकाशित किया जाए, ताकि समय आने पर भविष्य में लिखे जाने वाले व्यंग्य साहित्य को लेकर, समग्र व्यंग्य का चौथा खंड तैयार किया जा सके ।

अनासक्त विवेक जब न्याय के पक्ष में अपने आक्रोश को कलात्मक रुप में अभिव्यक्त करता है, तो व्यंग्य का जन्म होता है । व्यंग्य की आत्मा है, उसकी प्रखरता और तेजस्विता । हास परिहास, विनोद, कटाक्ष इत्यादि उसके सहयोगी हो सकते है, किंतु उनका असंतुलित प्रयोग उसकी प्रखरता की हानि भी कर सकता है, जैसे पक्षपात अथवा पूर्वाग्रह, उसके तेज को नष्ट कर देता है ।

विद्या के रुप में व्यंग्य का केन्द्रीय रुप यद्यपि निबंध के रुप में ही उभरा है, किंतु कथा तथा काम के ही समान व्यंग्य एक ऐसा तत्व है, जिससे व्यंग्य निबंध, व्यंग्य कथा, व्यंग्य उपन्यास तथा व्यंग्य नाटक का जन्म होता है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहली के सृजन में कथा तथा व्यंग्य दोनों का ही संयोग है । उनकी आरंभिक कहानियों में भी व्यंग्य की झलक देखी जा सकती है । किंतु इस संकलन में वे ही रचनाएं सम्मिलित की गई है, जो व्यंग्य के ही रुप में लिखी गई – उनका शिल्प चाहे निबंध का हो, संस्मरण का हो, आत्मकथा का हो, कथा का हो, उपन्यास का हो, अथवा नाटक का हो, उनकी व्यंग्य रचनाओं में मौलिक प्रयोगों का अपना महत्व है । वे प्रयोग आश्रितों का विद्रोह, जैसी फंतासी के रुप में भी हो सकते है और पांच एब्सर्ड उपन्यास जैसे नवीन और मौलिक अवरूध्द कथा रुप में भी ।

इस पुस्तक में पहली बार में उन की सारी व्यंग्य रचनाएं एक स्थान पर उपलब्ध कराई जा रही है ।

१.३.७१. समग्र व्यंग्य – २ (त्राहि – त्राहि) – व्यंग्य – १९९८ ई.

समग्र व्यंग्य का दूसरा खंड । इस खंड में व्यंग्य निबंधो के एक पूरे संकलन के साथ व्यंग्य उपन्यास आश्रितों का विद्रोह तथा पूरी पुस्तक पांच एब्सर्ड उपन्यास पाए जाते है ।

१.३.७२. समग्र व्यंग्य – ३ (इश्क एक शहर का) व्यंग्य – १९९८ ई.

समग्र व्यंग्य का तीसरा खंड । इसमें १९९१ तक की सारी व्यंग्य रचनाएं आ गई है ।

१.३.७३. मेरी तेरह कहानियां (कहानियां) – १९९८ ई.

अपने लेखन के इन चालीस वर्षो मेंमैने पाया है कि विभिन्न विधाओं में लिखने पर भी मूलतः मै कथाकार ही हूँ । कहानियां लिखू, बडी कहानियां लिखू, छोटा उपन्यास लिखू अथवा बडा उपन्यास – हूं मै कथाकार ही । व्यंग्य भी लिखता हूं, किंतु कथा तत्व उस में भी छूट नहीं पाता, जैसे कहानियों और उपन्यासों में वक्रता को नही छोड पाता ।

पहली कहानी कब लिखी, यह स्मरण करना कठिन है । किंतु पहली प्रकाशित कहानी १९६० ई. की है । अब तक की अंतिम कहानी लिखे हुए कई वर्ष हो चुके है, जो मित्र पाठक, संपादक और प्रकाशक नई, अप्रकाशित कहानी मांगते है, कि मैने कहानियां लिखना बंद क्यों कर दिया ? उत्तर में एक दूसरा ही प्रश्न मन में जन्म लेता है, क्या मैने कहानियां लिखनी बंद कर दी ?

मै मान नहीं पाता हूं कि मैने कहानियां लिखनी बंद कर दी है । ऐसा संकल्प मैने नहीं किया है और मुझे अपनी लिखी हुई कहानियां आज भी उतनी ही प्रिय है, जितनी उस समय थी, जब वे लिखी गई थी । तो फिर ? वस्तुतः रामकथा संबंधी उपन्यास लिखने के समय से ही दीर्घाकार और जटिल कथानक मेरे भीतर घुमडते रहे है । जब मन में किसी कहानी का बीजवपन होता है तो या तो उस दीर्घाकार उपन्यास के कारण कहानी लिखना स्थगित हो जाता है, या फिर वह कहानी अपना रुप बदल कर उसी उपन्यास में समा जाती है । मै तो अपनी ओर से वह कहानी लिख चुका होता हूँ । मै तो अपनी ओर से वह कहानी लिख चुका होता हूं । किंतु वह पाठक तक कहानी के रुप में नहीं पहुंचती । मेरे लिए वे कहानियां आज भी उपन्यास के मध्य एक व्दीप के समान है, किंतु पाठक उसे उपन्यास रुपी उस सागर का अंश ही मानता है ।

पर जो कहानियां कहानी के शिल्प में कहानी विधा के अंर्तगत लिखी गई, वे आज भी मुझे मुग्ध करती है । कौन है जो तरुणाई में किया गया अपना प्रथम प्रेम भुला सकता है? अथवा झुठला सकता है ? मै तो ऐसा सोच भी नहीं सकता ।''[१८]

डॉ. कोहलीजी ने अपनी उन्हीं कहानियों में से तेरह कहानियां चुनी है । ये कहानियां प्रतिनिधि है – अपनी उन संगिनी कहानियों की, जो पंक्ति में ठीक उनके पीछे खडी है । किसी सभा में सारे लोग प्रथम पंक्ति में नहीं बैठ सकते । प्रथम पंक्ति के लोग शेष लोगों से कुछ महत्वपूर्ण भी हो सकते है किंतु अभिनेता को अपना वह दर्शक भी प्रिय होता है, जो प्रेक्षागृह में पीछे की पंक्तियों में बैठ कर धैर्यपूर्वक उसका अभिनय देख रहा होता है ।

१.३.७४. संघर्ष की ओर (नाटक) – १९९८ ई.

अभ्युदय के प्रकाशन काल से ही एक ओर यह अनुभव किया जाता है कि उसमें नाटकियता का गुण प्रभूत मात्रा में विद्यमान है और दूसरी ओर यह विचार भी अभिव्यक्त किया गया कि नाटक के रुप में उसका मंचन होना ही चाहिए, ताकि जो लोग उपन्यास जैसे महत्त्वपूर्ण कृति के रसास्वादन से वंचित न रह जाएं ।

विमल लाठ ने अनामिका (कलकत्ता) के तत्वावधान में पहली बार दीक्षा का नाट्यपाठ १४ अप्रैल १९८५ ई. को शिक्षायतन (कलकत्ता) के प्रांगण में करवाया । उन्होंने दूसरी बार संस्कृति संसद (कलकत्ता) में १९ मार्च १९९४ ई. को पुनः उसका मंचन करवाया । इस बीच सन् १९८७ ईसवी में जफर संजरी ने उसका एक नाट्य रुप प्रस्तुत किया और अपने ही निर्देशन में उसका मंचन श्रीराम सेंटर (दिल्ली) के तलघर में किया । किंतु तब से आज तक यही माना जाता रहा है कि उस नाटक के रुप में इस कृति का एक अंश ही प्रस्तुत हो पाया था और समग्र रुप से उस की पुर्नप्रस्तुति होनी ही चाहिए । दस वर्षो के कारण, मूल कृति की आत्मा से न केवल अपना तादात्म्य कर पाए है वरन् एक सफल नाटक के रुप में उसे रुपांतरित भी कर पाए है ।

परंपरा में यदि प्रयोग न हो तो वह रुढि बन नीरस तथा अनुपयोगी होती जाती है। मात्रा प्रयोग होते रहे और वे परंपरा से अपना कोई संबंध न जोड पाएँ तो वे प्रगति का छद्म आभास देते है । इस कृति में आप परंपरा के अंतर्गत होते हुए प्रयोग देखेंगे जो अपनी परंपरा को जीवंत भी बनाते है और उसे अग्रसर भी करते है ।

१.३.७५. किष्किंधा (नाटक) – १९९८ ई.

किष्किंधा भी अभ्युदय के एक अंश पर आधृत नाटक है । इसका घटनास्थल किष्किंधा नगरी है; और दो एक साधारण काल्पनिक पात्रों के सिवाय सारे पात्र भी रामकथा के परंपरागत और परिचित पात्र है । फिर भी यह नाटक आप के अपने युग की गंभीर समसामयिक समस्याओं से परिपूर्ण विचारोत्तेजक नाटक है । जब शासक के लिए किसी ओर से कोई चुनौती नहीं रह जाती और वह स्वयं को पूर्णतः सुरक्षित पाता है तो केवल अहंकारी ही नहीं हो जाता, यह भी भूल जाता है कि शासन उस के विलास के लिए नहीं – प्रजाहित के लिए होता है । ऐसा अधिनायक कैसे सत्ता का अपने प्राणों के साथ तादात्म्य कर लेता है और सत्ता के अभाव में जीवित भी नहीं रह सकता, यह आप इस नाटक में देखेंगे ।

राजनीति मानवता के विकास, उत्थान और कल्याण का यंत्र भी है और सारे के सारे राष्ट्र को अपने स्वार्थ के लिए बेच देने का उपकरण भी । जनता सचेत और जागरुक हो तो राजनैतिक के विकास की सीढी है; और जनता अचेत और अक्षम हो तो राजनीतिक के लिए अंधकूप है । इन तथ्यों को पहचाना रंगकर्मी जफर संजरी ने । उन्हे लगा कि डॉ. नरेन्द्र कोहली के उपन्यास में यह नाटक छिपा पडा उसे उपन्यास से पृथक होकर एक स्वतंत्र नाटक के रुप में पाठकों, रंगकर्मीयो, दर्शकों तक पहुँचाना चाहिए । अतः उन्होंने यह नाटक तैयार किया ।

१.३.७६. अगस्त्यकथा (नाटक) – १९९८ ई.

अगस्त्यकथा भी अभ्युदय के ही एक अंश पर आधृत नाटक है । रामकथा के अनुसार अगस्त्य वे ऋषिज्ञ थे, जो राम के दंडकवन आने से पूर्व, राक्षसों से सशस्त्र संघर्ष कर रहे थे और जिन्होंने राम को पंचवटी भेजा था, ताकि वे राक्षसों से प्रत्यक्ष संपर्क में आएं और उनका नाश करें । इस नाटक में सारी कथा ऋषि अगस्त्य के जीवन के उस कालखंड की है, जिस में अभी राम का प्रदेश नहीं हुआ है । यह उस ऋषि की कथा है, जिन्होंने समाजविरोधी अमानवीय तत्वों से स्वयं लडने तथा समाज–निर्माण के कार्य के लिए किसी राजशक्ति का मुँह ताकने के स्थान पर स्वयं ही उन समस्याओं से जूझने की ठानी ।

अगस्त्य के नाम के साथ बहुत सारे चमत्कार जुडे हुए है – विंध्याचल को ऊपर उठने से रोकना, सागर को पी जाना, इल्विल और वातापी नाम के राक्षसों को खा कर पचा जाना इत्यादि । डॉ. नरेन्द्र कोहली ने अपने उपन्यास में उन सारी घटनाओं को यथार्थ के धरातल पर समझने का प्रयत्न किया है । उन्होंने इसी कथा के माध्यम से व्यक्तिगत सुख और समाज के हित के व्दंव्द को भी पहचाना है । जो किसी एक विशेष युग का तथ्य न होकर त्रिकाल में व्याप्त सत्य है ।

इस अंश की नाटकीयता के आविष्कारक भी जफर संजरी है । उन्हें लगा कि उपन्यास के रुप में भी यह अंश सुंदर और आकर्षक है, किंतु उसकी आत्मा तो नाटक के रुप में ही अपना स्वरुप प्रकट कर सकती है । सिध्द रंगकर्मी जफर संजरी की यह मान्यता अत्यंत महत्वपूर्ण कि कथा के मध्य से जब नाटक जन्म लेता है, तो दोनों विधाओं की ऊर्जा और क्षमता को सम्मिलित रुप से प्रकाशित करता है । इस नाटक की एक और विशेषता यह है कि इस में रंग सत्ता की कोई अपेक्षा नहीं है । बिना किसी प्रकार की रंगसज्जा के पूर्ण सफलता से इसका मंचन किया जा सकता है ।

१.३.७७. हत्यारे (नाटक) – १९९९

इस पुस्तक की भूमिका डॉ. नरेन्द्र कोहली ने लिखा है । नाटक पढने देखने और खेलने में मेरी पर्याप्त रुचि रही है; किंतु फिर भी मै स्वयं को सामान्यतः कथाकार ही मानता रहा हूं । शंबूक की हत्या का जब पहला आलेख तैयार किया था तो वह भी एक उपन्यास ही था । उसे मै प्रकाशक के यहाँ पहुँचा भी आया था । उन्होंने रख भी लिया था । किंतु न तो प्रकाशक के यहाँ से उस उपन्यास में कसर कहां है । अंततः मुझे लगा कि वस्तुतः मेरा अपना व्यक्तित्व कथा खटक रही थी और यह समक्ष में नहीं आ रहा था की उस उपन्यास में कसर कहां है । अंततः मुझे लगा कि वस्तुतः मेरा अपना व्यक्तित्व कथा के चाहे कितना ही अनुकूल क्यों न हो, शंबूक की हत्या की सामग्री केवल नाटक के ही अनुकूल हो सकती है˙ उसमें न तो कथा का विकास है और न ही कोई गति है । वस्तुतः उस में घटना नहीं स्थितियां है, संवाद है , व्यंग्य है । वह देखा जा सकता है । सुना जा सकता है । शायद पढा नहीं जा सकता । उसे तो नाटक ही होना होगा ।

मैने यह बात अपने प्रकाशक से कही तो वे उछल गए 'बोले, मै भी सोच ही रहा था कि मै न तो अस्वीकार कर पा रहा हूं और नही स्वीकृति दे पा रहा हूं । आखिर बात क्या है । अब आप के कहने से बात समझ में आई है ।'

मै पांडुलिपी अपने साथ ले आया और फिर उसको नाटक के रुप में लिखा । तभी मै यह समझ पाया कि विद्या के चुनाव में जहां लेखक का व्यक्तित्व एक महत्वपूर्ण उपकरण है, यहीं वह सामग्री भी अपना व्यक्तित्व रखती है और उसको त्याग कर किसी भी अन्य विद्या में ढल जाने को बाध्य नहीं है । आवश्यक नहीं कि किसी भी सामग्री को लेखक अपने व्यक्तित्व की प्रिय विधा में ढाल ही ले ।

मैने मान लिया था कि मेरे उपन्यासों के बीच शंबूक की हत्या अपवाद स्वरुप नाटक के रुप में लिखा गया है । मन में कहीं यह भी था कि संभव है कि फिर कोई नाटक लिखने का अवसर ही न आए; किंतु जब अपने एक परिचित परिवार में एक दुखद अकाल मृत्यु हुई तो विचित्र स्थिति उठ खडी हुई । जब पहली सूचना आई तो वह एक काा कह रही था ।

सहसा कुछ और तथ्य उद्घटित हुए तो उसका रुप ही बदल गया । फिर कुछ और मेरी कल्पना उस पर कुछ और कथाएँ भी आरोपित करने लगी । मुझे लगा कि उस में कथा आगे नहीं बढ रही, बस एक घटना पर से रहस्य के पर्दे उठने जा रहे है । अनेक व्यक्तियों के जाने पहचाने चेहरों के नीचे से नए नए चेहरे उद्घाटित होते जा रहे है, जैसे उन्होंने चेहरे नहीं नकाब पहन रखे थे । एक ही दृश्य का पर्दा हटना था तो वह बदल कर कुछ और हो जाता था, किंतु उसके रुप अनेक थे । उस सारी घटना ने मुझे बहुत आलोडित किया, किंतु वह उपन्यास नहीं बन सका । वह संवादों, मंच और रुपक तत्व के बाहर ही नहीं निकला । तो उपन्यास कैसे लिखा जा सकता था । उसे नाटक ही बनना था और मुझे नाटक लिखना पडा । वह हत्यारे के रुप में प्रस्तुत हुआ ।

'गारे की दीवार' की रचना का सत्य और भी चमत्कारिक था । हमारे तीन चार मित्रों के मकान आस–पास ही बन रहे थे । दिन भर मकान बनने की प्रक्रिया और मकान बनाने वालों के मनोविज्ञान के बीच घिर मै बहुत कुछ नया देख और सीख रहा था । मै भी अपना मकान बनवा रहा था किंतु वह तो अपने रहने के लिए था । अपने मालिक के मकान से डरा हुआ मै; अपने परिवार के लिए एक छत का प्रबंध कर रहा था । किंतु यहाँ तो यह कोई और ही संसार था । मकान बनाने के पीछे व्यक्ति के सपने भी थे । उसकी सृजन धार्मिकता भी थी, किंतु उसका एक समाज भी था । उसका अहंकार भी था । उसका आडंबर और उसके मन की अंधेरी गुफाओं में छिपा एक पशु भी था, जिसने अपने चेहरे पर एक मनमोहक मुस्कान ओढ रखी थी ।

वहीं गारे की चिनाई और एक दीवार के ढहने की चर्चा से इस नाटक का बीजवपन हुआ । वह मकान मेरे लिए एक मंच बन गया, जिस पर से अपने आप एक पर्दा हट जाता था और एक नया दृश्य और एक नया संवाद आरंभ हो जाता था । समाज का कौन सा दृश्य कहाँ से आकर उसमें जुड जाता था, यह तत्काल समझ में नही आता था; किंतु था वह हमारा समाज ही । वह समाज, जिसने अपराध को न केवल अपने जीवन में स्वीकार कर

लिया था, वरन् उसे जीवन की उत्कृष्ट शैली मान कर गौरवान्वित भी कर रहा था । सफलता और अपराध में बहुत कम दूरी रह गई थी ।

नाटक लिखने के पश्चात् सदा ही एक द्वंद्व मन में होता है कि पहले उसका मंचन हो और फिर वह पुस्तकाकार प्रकाशित हो या उस के मंचन की प्रतिक्षा किए बिना उसका प्रकाशन करवा दिया जाए, ताकि नए नाटक की पांडुलिपि खोजनेवाले रंगकर्मियों तक वह तत्काल पहुंच सके । नाटक को प्रकाशन से पहले मंचित होना है ता आपश्यक है कि या तो लेखक की अपनी नाटक मंडली हो, अथवा वह किसी मंडली के इतने निकट हो कि उसके मेज से मंडली उसका नाटक उठा ले ।

मै आरंभ से ही अपने कमरें में अकेला रहने वाला और मंडलियों से बहिष्कृत व्यक्ति हूँ । वैसे भी मेरं लेखन की व्यस्तता मुझे मंचन के लिए आवश्यक समय की सुविधा प्रदान नहीं करती । मै मानता हूँ कि मै लेखक हूँ । मै मंचकर्मी कभी नहीं बन सका । मै यह भी कभी स्वीकार नहीं कर सका कि लेखक को निर्देशक के साथ मिल कर नाटक का मंचन करवाना चाहिए । मै सदा मानता रहा हूं कि लेखक का काम आलेख तैयार करने तक है । मंचन तो निर्देशक द्वारा अपनी रचना है । एकही नाटक को दस निर्देशक दस प्रकार से प्रस्तुत कर सकते है । इसी में उनकी मौलिकता है । मैने अपने ही नाटकों के संदर्भ में देखा है कि किसी निर्देशक ने मेरे नाटक को आलेख से भी सुंदर बना कर प्रस्तुत किया और किसी निर्देशक ने अपनी नासमझी में उसे घटिया नाटक सिध्द करने में कोई कसर नहीं छोडी ।

मेरे पास अच्छे प्रकाशक थे, इसलिए नाटक पहले प्रकाशित हुए और बाद में उन का मंचन होता रहा । अपने नाटकों के मंचन के संदर्भ मे मुझे चंद्रमोहन, जफर संजरी और राकेश उग बहुत याद आते है । उन्होंने बहुत प्रयत्न किया कि मै पूर्वाभ्यासों में कहीं उनके साथ रहूं किंतु मुझे सदा दर्शक के समान हॉल में बैठ कर नाटक देखना ही अच्छा लगा । संभव है कि अपने व्यवहार के कारण मुझे कुछ हानि भी उठानी पडी हो; किंतु मै यह मानता हूं कि लेखक निर्देशक के साथ रहेगा तो उस का नाटक केवल एक ही प्रकार से मंचित हो

सकेगा, जबकि नाटक एक ऐसी ही प्रकार से मंचित हो सकेगा, जबकि नाटक एक ऐसी विधा है कि जो प्रत्येक निर्देशक, प्रत्येक मंडली और प्रत्येक अभिनेता के बदलते ही एक नया रुप ग्रहण कर लेती है । मै लेखक के रुप में अपना कार्य कर चुका हूँ । उस के पश्चात् निर्देशक और अभिनेताओं की रचना आरंभ होती है ।

एक एक कर छपने के वर्षो बाद आज ये तीन नाटक एक साथ प्रकाशित हो रहे है । यह विश्वनाथ जी की अपनी परिकल्पना है, ''मै तो चाहता था कि नाटक सीधे पाठक तक पहुंचे, मै बीच में न आऊं; किंतु विश्वनाथ जी की इच्छा है कि मै पाठको को सृजन का सत्य भी बताऊ। कैसा संयोग है कि उन्होंने भी इनमें से किसी नाटक के निर्देशकीय टिप्पणी नहीं माँगी, लेखक को ही सच बताने को कहा । शायद यह इसलिए कि नाटक अपने मूल रुप में रहे और जब इनका मंचन हो तो निर्देशक अपनी कल्पना का मौलिक और सृजनात्मक प्रयोग कर सके ।''[१९] इस प्रकार लेखक मूल काम वास्तविकता चित्रण करना होता हैं । बाद में उसकी समसामायिकता स्पष्ट होती है ।

१.३.७८. महासमर – ८ (निर्बंध) उपन्यास – २०००

निर्बंध, महासमर का आठवां और अंतिम खंड है । इसकी कथा द्रोणपर्व से आरंभ होकर शांतिपर्व तक चलती है । कथा का अधिकांश भाग तो युध्दक्षेत्र में से होकर अपनी यात्रा करता है । किंतु यह युध्द केवल शस्त्रों का युध्द नहीं है । यह टकराहट मूल्यों और सिध्दांतो की भी है और प्रकृति और प्रवृत्तियों की भी । घटनाएँ और परिस्थितियाँ अपना महत्व रखती है । वे व्यक्ति के जीवन की दिशा और दशा निर्धारित अवश्य करती है; किंतु यदि घटनाओं का रुप कुछ और होता तो क्या मनुष्यों के संबंध कुछ और हो जाते ? उनकी प्रकृति बदल जाती ? कर्ण को पहले ही पता लग जाता कि वह कुंती का पुत्र है तो क्या वह पांडवों का मित्र हो जाता ? कृतवर्मा और दुर्योधन तो श्रीकृष्ण के समधी थे, वे उनके मित्र क्यों नहीं हो पाए ? बलराम श्रीकृष्ण के भाई होकर भी उन के पक्ष से क्यो नहीं लड पाए ? अंतिम समय तक वे दुर्योधन की रक्षा का प्रबंध ही नहीं, पांडवों की पराजय के लिए प्रयत्न क्यों करते रहे , ऐसे ही अनेक प्रश्नों से जूझता है यह उपन्यास ।

इस उपन्यास श्रृंखला का पहला खंड था बंधन और अंतिम खंड है निर्बंध । बंधन भीष्म से आरंभ हुआ था और एक प्रकार से निर्बंध भीष्म पर ही जाकर समाप्त होता है । किंतु इस उपन्यास श्रृखंला के नायक भीष्म नहीं है । महाभारत की कथा के नायक तो युधिष्ठिर ही है । किंतु अलग अलग प्रसंगो में एकाधिक पात्र नायक का महत्व अंगीकार करते दिखाई देते है । शांतिपर्व के अंत में भीष्म तो बंधन मुक्त हुए ही है, पांडवों के बंधन भी एक प्रकार से टूंट गए है । उनके सारे बाहरी शत्रु मारे गए है । अपने संबंधियों और प्रियजनों में से अधिकांश को भी जीवनमुक्त होते उन्होंने देखा है । पांडवों के लिए भी माया का बंधन टूंट गया है । वे खुली आँखो से इस जीवन और सृष्टि का वास्तविक रुप देख सकते है । अब वे उस मोड पर आ खडे हुए है, जहां वे स्वर्गारोहण भी कर सकते है और संसाररोहण भी । प्रत्येक चिंतनशील मनुष्य के जीवन में एक वह स्थल आता है, जब उसका बाहरी महाभारत समाप्त हो जाता है और वह उच्चतर प्रश्नों के आमने सामने खडा होता है । पाठक को उसी मोड तक ले आया है महासमर का यह खंड निर्बंध । इस प्रकार इस किताब का महत्व स्पष्ट होने में देर नहीं लगती ।

१.३.७९. स्मराणि (संस्मरण) – २०००

संस्मरण, कुछ साहित्यक और कुछ आत्मीय। डॉ. नरेन्द्र, सावित्री सिन्हा, जैनेन्द्रकुमार, नागार्जुन, शदर जोशी, जतीफ धोंधी, पांडेय बेचन शर्मा ’उग्र’, अज्ञेय, बृहस्पतिदेव पाठक, नरेन्द्र भानावत, मेजर चंद्रभूषण सिन्हा, आचार्य तुलसी, प्रेम जनमेजय तथा सुरेश कांत के कुछ कुछ रेखाचित्र तथा संस्मरण । दो संस्मरण ‘अपने जीवन से – बडा आदमी’ और ‘धर्म परिवर्तन’ प्राप्त होते हैं । दो संस्मरण अपने दांपत्य जीवन के आरंभ होने से पहले हैं ।

’स्मरामि’ डॉ. नरेन्द्र कोहली के संस्मरणों का पहला संकलन है । ये संस्मरण एक लंबे अंतराल में विभिन्न समस्यों और अवसरों पर लिखे गए है । इनमें से कुछ किसी अवसर की माँग पर भी लिखे गए है; किंतु अधिकांश शुध्द स्मरण के रुप में सृजन की माँग पर ही

लिखे गए है । प्रवरता की शर्त भी इन पर लागू नहीं होती । कुछ संस्मरण अपने समवयस्कों और कुछ अवस्था में स्वयं से छोटे लेखकों पर भी लिखे गए है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहली कथाकार है । घटनाएं और चरित्र उनके मूल उपादान है, जिनके माध्यम से वे अपने विचार पाठकों तक संप्रषित करते है । अतः उनके संस्मरण भी जीवंत कथाए ही है । अंतर केवल इतना ही है कि इन चरित्रों को उनके पते ठिकाने के साथ अन्य लोग भी जानते है । उन चरित्रों के विषय में कहते हुए, लेखक ने बहुत कुछ अपने परिवेश और अपने संबंधो के विषय में भी कहा है । उन जिज्ञासु पाठकों के अनेक प्रश्नों के उत्तर तो इन रचनाओं में उपलब्ध है ही, उनकी पठनीयता भी अपने आप में कम नहीं है ।

१.३.८०. समात व्यंग्य – ४ (रामलुभाया कहता है) – व्यंग्य – २००० ई.

डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्यो का यह नवीन संग्रह, वक्रता और प्रखरता की अपनी परंपरा का निर्वाह करते हुए भी, उनकी पहले की व्यंग्य रचनाओं से कुछ भिन्न है। वे सदा से प्रयोगधर्मी रहे है । एक शिल्प को सिध्द कर वे उसका अतिक्रमण कर आगे बढ जाते है । किसी एक प्रकार की छवि से बंध जाना, उनको प्रिय नही है ।

इन व्यंग्यो में आपको एक ओर राजनीति की मात्रा कुछ अधिक दिखाई देगी किंतु दूसरी और यह भी लगेगा कि वे एक सीमित परिवार की सामान्य सी कथा कह रहे है, जिसमें न कोई व्यंग्य है और न वक्रता । किंतु अंत आते ही रचना कोई ऐसा मोड ले लेती है परिवार और देश एक हो जाते है और वह कथा, पारिवारिक न होकर किसी महत्वपूर्ण राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय स्थिति पर व्यंग्य करने लगती है । पती–पत्नि की कथा कहते कहते वे भारत और पाकिस्तान के संबंधों पर व्यंग्य करने लगते है । उनकी भेदक दृष्टि पारिवारिक संबंधो से लेकर अंतर्राष्ट्रीय संबंधों तक समान रुपसे विसंगतियों को चुन लेती है । पत्नी हो, भाई हो, मित्र हो या कोई पडोसी हो, वे अपने व्यवहार से अंतर्राष्ट्रीय स्वार्थो और स्वार्थपूर्ण संबंधों को प्रकट करते रहते है ।

वे केवल विसंगतियों पर व्यंग्य ही नहीं करते; क्षुद्रता, लोभ, स्वार्थ और विभाजक प्रवृत्तियों का खंडन करते हुए कुछ भावात्मक स्थापनाएँ भी करते है । तथाकथित सुशिक्षित लोग अपने विशेषाधिकारों का दुरुपयोग कर अपने समाज का अहित करते दिखाई पडते है तो डॉ. नरेन्द्र कोहली कुछ अधिक उग्र हो उठते है । इस संग्रह में आपको अनेक ऐसी रचनाएं मिलेंगी, जिनमें आदर्शो के नाम पर बने घातक दुर्गो पर ध्वंसकारी प्रहार किए गए है । डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य का लक्ष्य है – निर्माण । व्यंग्य में से होते निर्माण को देख कर आप चकित रह जाऐंगे ।

समग्र व्यंग्य का चौथा तथा ताजा खंड ।

१.३.८१. कुकुर तथा अन्य कहानियां (बाल कथाएं) – २०००

डॉ. नरेन्द्र कोहली स्वयं रचना के बारे में कहते है, मैने अलग अलग अवस्था और पृथक् मानसिकता के पाठकों के लिए आरंभ से योजना बना कर कभी नहीं लिखा । न ही कभी पहले विधा निश्चित् कर रचना का आरंभ किया । वस्तुतः मै यह मानता हूँ कि सृजन के धरातल पर शायद लेखक के वश में कुछ होता ही नहीं । उस में उस की अपनी इच्छा का कोई हस्तक्षेप नहीं होता । जब मन में सृजन हो जाता है और रचना के रुप में उस की अभिव्यक्ति का क्षण आता है, तब लेखक सक्रिय होता है । लेखक का प्रयत्न उस सृजन को रचना के रुप में प्रस्तुत करने में है ।

रचना हो जाती है तो विचार किया जाता है कि इसका पाठक कौन होगा । मेरी ये सारी रचनाएं अपने दोनों बच्चों के पालन–पोषण के साथ रची गई है । अपने बच्चों का मनोविज्ञान समझने का प्रयत्न करते हुए, अथवा उनके व्यवहार का विश्लेषण करते हुए, अनेक घटनाएँ रचना बन गई । यदि रचना शिशु मानी है, तो शिशु उस समय बहुत छोटा था; और रचना माता पिता के अधिकारों पर प्रश्न चिह्न लगाती हुई है तो तब तक शिशु बडा हो चुका था ।

वैसे तो संसार का सारा साहित्य उपदेश देता है; किंतु फिर भी माना गया कि वह पिता अथवा गुरु के समान प्रत्यक्ष उपदेश नहीं देता । फिर भी मैने पाया कि बच्चों को परोसी गई कहानियों में इस सिध्दांत का विचार नहीं रखा जाता और उन्हें उपदेश दिया जाता है । मैंने उससे बचने का प्रयत्न किया है । वस्तुतः वयस्क साहित्य और बाल साहित्य के संदर्भ में लेखक के दृष्टिकोण में कोई अंतर नहीं होना चाहिए । दोनों साहित्य है, अतः दोनों में लिया और सौन्दर्यशास्त्र के नियम एक ही होने चाहिए ।

यही कारण है कि इन संग्रहो में कुछ ऐसी रचनाएं भी है, जो बच्चों के लिए न होकर किशोरों की भी हो सकती है । हम सबका घर जैसी रचना के संदर्भ में कुछ प्रश्न नहीं है, उद्देश अवश्य है । पानी के गंदे हो जानें की घटना हमारे अपने घर में घटी । उसे मेरे बच्चों ने इनते निकट से देखा कि नदियों के प्रदूषित होने की प्रक्रिया को समझने में उन्हे कोई कठिनाई नहीं है । मै यह मानता हूँ कि आपका प्रश्न भी सामान्य जीवन की छोटी घटनाओं से कुछ बहुत पृथक् नहीं होते । बच्चों और वयस्कों की सौन्दर्य चेतना में भी बहुत भेद नहीं होता, हाँ ! उनके मापदंड का अंतर अवश्य है ।

मै इन कहानियों के साथ यह कामना लेकर प्रस्तुत हुआ हूँ कि बच्चों को ये इतनी प्रीतिकर हों कि वे अपने माता–पिता को पढकर सुनाएँ और माता–पिता को वे इतनी भा जाएं कि वे पढ कर अपने बच्चों को सुनाएं।''[२०] इस प्रकार साहित्य एक–दूसरे को प्रभावित करना है ।

इस संकलन में कुकुर, के साथ साथ झबरी, आसान रास्ता, धर्म परिवर्तन, भय, प्रश्नाधिकारी, सागरपान, शिशु और मानो, पानी का जग, गिलास और केतली, लोगों के बचे, धातु का टुकडा, रात की मुसीबत, अभिषप्त, निष्कर्ष, चमकार, क्या घर क्या विद्यालय तथा फिजुलखर्ची – कहानियाँ संकलित की गई है ।

१.३.८२. एक दिन मथुरा में तथा अन्य कहानियां (बाल कथाएं) – २००० ई.

इस संकलन में एक दिन मथुरा में के साथ साथ, विरोध का विंध्याचन, गणित का प्रश्न, कुत्ते की दुम, डीलिंग, उधार, सूई, करामती तुंबी, गुड्डू की अम्मां, न मै स्कूल नहीं जाऊंगा, भुलक्कड तथा समाधान संकलित की गई है ।

१.३.८३. हम सबका घर तथा अन्य कहानियां (बाल कथाएं) – २००० ई.

इस में हम सब का घर के साथ साथ ज्योतिषी, अभी तुम बच्चे हो, चुनाव का अधिकार, इनता बडा अपराध तथा छोटी सुविधा बडी असुविधा कहानियां संकलित है ।

१.३.८४. मेरे मुहल्ले के फूल (व्यंग्य) –२००० ई.

जब साहित्य में शुध्द व्यंग्य को अपनी जगह बताने में कठिनाई आती है, तो जीवन में तो स्थिति और भी विषम हो उठती है । वैसे भी सच्ची बात सब को अच्छी नहीं लगती, खास तौर से जब वह बिना जाँच–पडताल कि परोस दी गई हो । यह नहीं की डॉ. नरेन्द्र कोहली मीठा बालते नहीं, पर वे मानते हैं कि जों कहीं भी अतिरिक्त मिठास है, वहाँ सूठ उनता ही अधिक है । बहुत अधिक मीठा बोलने वाले समाज के तथाकथित अत्यंत शिष्ट लोगों को झूठा और मक्कार कहने में उन्हें कोई संकोच नहीं होता । अपनी इसी मान्यता के कारण, उनकी प्रवृत्ति सीधी और खरी बात कह देने में अधिक है ।

प्रतिकात्मकता, विधायकता, तटस्थता, समग्र प्रभाव और संयम डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य के प्रभावक तत्व है । अपने व्यंग्य में उन्होंने हिंदी व्यंग्य साहित्य की एकरसता को तोड कर उसे एक नई दिशा भी दी है । कहना असंगत नहीं होगा कि उनकी व्यंग्य रचनाएं समकालीन जीवन में व्याप्त विसंगतियों पर जहाँ करारी चोट करती है, वहीं टूँटते जीवन मूल्यों के रेशे–रेशे अलग करते हुए, जीवन मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करने की कोशिश भी करती है । उनकी व्यंग्य रचनाओं के विषय में आचार्य हजारीप्रसाद व्दिवेदी का यह कहना सही है कि इतना सहज भाव और ऐसी भेदक दृष्टि क्वचित कदाचित् ही देखने को मिलती है ।

अपने संपूर्ण व्यंग्य साहित्य में से स्वयं लेखक द्वारा चुनी गई एक सौ रचनाएँ ।

१.३.८५. सबसे बडा सत्य (व्यंग्य) – २००३ ई.

हिंदी में हास्य व्यंग्य कम ही लिखा जाता है और इनका लेखन कुछ आज के राजनैतिक विषयों पर है – और नाम ले लेकर लिखे गए है – न केवल बहुत गहरी मार करने वाले है, वरन् इस विधा में नई जमीन भी तोडते है । इन्हें पढना अपने आप में एक अनुभव है, जो पाठक को जकड कर बाँधता है और उसे यह सोचने पर बाध्य कर देता है कि यदि यह सत्य है – जो वह है, यद्यपि उसकी बार–बार उपेक्षा की गई है – तो फिर इसका उपाय भी क्या है ?

ओसामा को ढूँढने के लिए बुश और मुशर्रफ की बातचीत, मुफ्ती मुहम्मद र्स्पद व्दार आतंकवादियों को छोडते, और कुछ भारतीयों के पाकिस्तान के साथ अच्छा व्यवहार करने के तर्क, वीरप्पन को रिश्वत देकर –जिसकी पोल कर्नाटक के एक उच्च पुलिस अधिकारी ने स्वयं ही खोल दी है – बंधक छुडाने की कार्यवाही, आज की अनेक देशी–विदेशी घटनाएँ; और उनके साथ दैनन्दिन जीवन में घटने वाली पुलिस, भ्रष्टाचार, धर्मांतरण, सांप्रदायिकता, चुनाव, हिंदी–अंग्रेजी समस्या, क्रिकेट इत्यादि – ऊप्रर से सामान्य दिखने वाली, किंतु भीतर से अत्यंत जटिल घटनाएँ – अत्यंत तेज नश्तर के तले अपनी वास्तविकता व्यक्त कर रही है । आप देखेंगे कि यह नश्तर प्रायः अन्य व्यंग्यकारों की तीखी छुरी को भोथरी सिध्द कर रहा है । ये व्यंग्य हँसाते भी है, परेशान भी करते है; और नए ढंग से कुछ करने की प्रेरणा भी देते है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहली के ये व्यंग्य आज की राजनैतिक और सामाजिक का तेजी से घूमता लाल रंग का दर्पण है । इन्हें बार बार पढने को जी चाहेगा ।

१.३.८६. परिव्राजक (तोडो कारा तोडो – ३) – २००३ ई.

इसमें स्वामी विवेकानन्द के परिव्राजक के रुप में कलकत्ता से अपने मठ से निकल कर बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, राजस्थान से होते हुए गुजरात में व्दारका तक जाने का वर्णन है ।

१.३.८७. निर्देश (तोडो कारा तोडो – ४) २००४ ई.

'तोडो कारा तोडा' के इस खंड में स्वामीजी के योजना बनती है । स्वामी शिकागो पहुँचते है और स्वयं को अनेक संकटों में घिरा पाते है । उनका शिकागो जाने की योजना बनती है । यह देवप्रेरित योजना है । स्वामी शिकागो पहुंचते हैं और स्वयं को अनेक संकटों में घिरा पाते है । उनका शिकागो से निराश होकर बॉस्टन जाना और फिर दैतीय योजना के अधीन लौटकर शिकागो आना एक रोचक कथा है । धर्म संसद में स्वामी की सफलता ने उन्हें जहां अनेक मित्र दिए, वही असंख्य शत्रू भी दिए । शत्रुओं ने न केवल उनका विरोध किया, उन्हें कलंकित किया और उनके प्राण लेने तक का प्रयत्न किया । अपने देश से सहस्त्रों मील दूर स्वामी अपने देश के सम्मान के लिए लडते रहे और समर्थन के लिए अपने देश की और देखते रहे । अंत में प्रायः एक वर्ष के पश्चात् भारत से उनके समर्थन में स्वर उठे और दिग्दिगंत तक गूँजते चले गए ।

१.३.८८. न भूतो न भविष्यति – २००४ ई.

यह स्वामी विवेकानन्द के जीवन के महत्वपूर्ण अंशों को लेकर लिखा गया एक आकर्षक, बृहद् और संपूर्ण उपन्यास है ।

१.४. पुस्तकों का अनुवाद –

१.४.१. आत्मदान (कन्नड) १९८७ अनुवादक : श्री. रा.ना.ना. मूर्ति, प्रकाशक : संक्रंति पब्लिशर्स, फोर्ट, आजमपूर (कर्नाटक)

१.४.२. दीक्षा (उडिया) १९८८, अनुवादक : अजयकुमार पटनायक, प्रकाशक : उडिया हिंदी परिवेश, सूताहाट, कटक –

१.४.३. दीक्षा (नेपाली) १९७८, अनुवादक : सुवास दीपक, प्रकाशक : सुधा, अक्तूबर १९७८ ई. गांतोक

१.४.४. दीक्षा (मराठी) १९९० अनुवादक : द.प.जोशी, प्रकाशक : मराठी साहित्य परिषद्, हैदराबाद

१.४.५. दीक्षा (कन्नड) १९८१, अनुवादक : तिप्पेस्वामी तथा नागराज, प्रकाशक – आनन्द प्रकाशन, १०५५ देवपार्थिव रोड, चामराज मुहल्ला, मैसूर

१.४.६. दीक्षा (अंग्रेजी) १९९७, अनुवादक : सोमदेव कोहली, प्रकाशक : क्रियेटिव बुक कंपनी, ई ४/२४ ए, मॉडल टाऊन दिल्ली – ११०००९

१.४.७. महासमर – १ (बंधन) उडिया १९९६, अनुवादक : सुभाषचंद्र महापात्र, प्रकाशक : प्रजातंत्र प्रचार समिती, कटक

१.४.८. महासमर – १ (बंधन) मलयालम २००४, अनुवादक : शशिकुमार, प्रकाशक : सांस्कृतिक विभाग, केरल सरकार, तिरुवनन्तपुरम्

१.४.९. अभिज्ञान (कन्नड) १९९७, अनुवादक : डी.एन. श्रीनाथ, प्रकाशक : काव्यकला प्रकाशन, १९७३, सातवां क्रॉस, चंद्र ले आऊ्ट, विजयनगर, बंगलूर – ५६००४०

१.४.१० अभिज्ञ्ज्ञान (मलयालम – कर्म योगम्) १९९९, अनुवादक : अजय, सिंधु, प्रकाशक : अमृतसागर, आतिथ्य, एट्टूमानूर

१.४.११. साथ सहा गया दुख (पंजाबी) अनुवादक : बलदेवसिंह बद्दन

१.४.१२. महासागर – २ (अधिकार) (उडिया – प्रकाश्य) अनुवादक : सुभाषचंद्र महापात्र, प्रकाशक : प्रजातंत्र प्रचार समिती, कटक

१.४.१३. निर्णय रुका हुआ (मराठी) १९८४, अनुवादक : लीला श्रीवास्तव, प्रकाशक : श्री विशाखा प्रकाशन, ५८ शनिवार पेठ, पुणे

१.४.१४. अभ्युय (मलयलम – अभ्युदयम) २००३, अनुवादक : के.सी.सिंधु तथा के.सी.अजयकुमार, प्रकाशक : डी.सी.बुक्स, तिरुवनन्तपुरम

१.५. पुरस्कार तथा सम्मान :

१.५.१. राज्य साहित्य पुरस्कार १९७५–७६ (साथ सहा गया दुख) शिक्षा विभाग, उत्तरप्रदेश शासन, लखनऊ

१.५.२. उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान, पुरस्कार १९७७–७८ (मेरा अपना संसार) उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ

१.५.३. इलाहाबाद नाट्य संघ पुरस्कार १९७८ (शंबूक की हत्या) इलाहाबाद नाट्य संगम, इलाहाबाद

१.५.४. उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान, पुरस्कार १९७९–८० (संघर्ष की ओर) उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ

१.५.५. मानस संगम साहित्य पुरस्कार १९७८ (समग्र रामकथा) मानस संगम, कानपुर

१.५.६. श्रीहनुमान मंदिर साहित्य अनुसंधान संस्थान विद्यावृत्ति १९७२ (समग्र रामकथा) श्रीहनुमान मंदिर साहित्य अनुसंधान संस्थान, कलकत्ता

१.५.७. साहित्य सम्मान १९८५–८६ (समग्र साहित्य) हिंदी अकादमी, दिल्ली

१.५.८. साहित्यिक कृति पुरस्कार १९८७–८८ (सहासमर–१, बंधन) हिंदी अकादमी, दिल्ली

१.५.९. कामिल बुल्के पुरस्कार १९८९–९० (समग्र साहित्य) राजभाषा विभाग, बिहार सरकार, पटना

१.५.१०. चकल्लस पुरस्कार १९९१ (समग्र व्यंग्य साहित्य) चकल्लस पुरस्कार ट्रस्ट, ८१ सुनीता, कफ परेड, मुंबई

१.५.११. अट्टहास शिखर सम्मान १९९४ (समग्र व्यंग्य साहित्य) माध्यम साहित्यिक संस्थान, लखनऊ

१.५.१२. शलाका सम्मान १९९५–९६ (समग्र साहित्य) दिल्ली हिंदी अकादमी, दिल्ली

१.५.१३. साहित्य भूषण – १९९८ (समग्र साहित्य) उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ

१.५.१४. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान – २००० (समग्र साहित्य) श्रीबडा बाजार कुमारसभा पुस्तकालय, कलकत्ता

१.५.१५. रामकथा सम्मान – २००३ (अभ्युदय) साकेत निधि, दिल्ली

१.५.१६. भाषा भूषण – २००४, साहित्य मंडल, श्रीनाथ द्वारा (राज्यस्थान)

१.६ सदस्यता :

१.६.१. सदस्य, हिंदी सलाहकार समिती, भारी उद्योग विभाग, उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.२. सदस्य, हिंदी सलाहकार समिति, जल संसाधन मंत्रालय,भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.३. सदस्य, हिंदी सलाहकार समिति, पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.४. भू.पू. सदस्य, केन्द्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.५. सदस्य, पांचजन्य, नचिकेता सम्मान चयन समिति, नई दिल्ली

१.६.६. सदस्य, मूल्यांकन समिति, भारतेन्दु हरिश्चंद्र पुरस्कार योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.७. सदस्य, पुस्तक चयन समिति (१९९८–२००) केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास, मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.८. सदस्य, पुस्तक चयन समिति (२०००–२००२) केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.९. सदस्य, केन्द्रीय अनुदान समिति, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

१.६.१०. सदस्य, पुरस्कार समिति, केन्द्रीय हिंदी संस्थान, अगरा

१.६.११. संरक्षक, संस्कार भारती, दिल्ली – ११००५४

१.६.१२. न्यासी, स्नेह भारती, दिल्ली – ११००५४

१.६.१३. सदस्य, विश्वहिंदी सम्मेलन, सूरीनाम – २००३, प्रबंध समिति

१.६.१४. सदस्य, सरकारी शिष्टमंडल, विश्व हिंदी सम्मेलन, सूरीनाम – २००३

१.६.१५. सदस्य, विदेश मंत्रालय, विश्व हिंदी सम्मेलन समिति – २००४

१.६.१६. विशिष्ट निमंत्रण, हिंदी सलाहकार समिति, सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

१.६.१७. सदस्य, नाट्य सलाहकार बोर्ड (१९९७–९८)

१.६.१८. भूतपूर्व सदस्य, संचालन समिति, हिंदी अकादमी, दिल्ली सरकार, दिल्ली

१.६.१९. भूतपूर्व सदस्य, कार्यकारी समिति, हिंदी अकादमी, दिल्ली सरकार, दिल्ली

१.६.२०. भूतपूर्व सदस्य, कार्यकारी समिति, हिंदी अकादमी, दिल्ली सरकार, दिल्ली

निष्कर्ष :

कहानीकार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने १९९५ ई. में व्यंग्य लिखना आरंभ किया तो वे व्यंग्यकार ही हो गए। पहला संकलन 'एक और लाल तिकोन' १९७० ई. में आया था। तो प्रथम संग्रह, किंतु व्यंग्य में पर्याप्त प्रौढता थी। १९७२ ई. में 'पाँच एब्सर्ड उपन्यास' के प्रकाशन के साथ ही यह अनुभव किया गया कि हिंदी में व्यंग्य–लेखन के नए आयाम उद्घाटित हुए है। यह शिल्प अभूतपूर्व था। कार्टून शैली में लिखी गई औपन्यासिक रचनाएँ। उपमाएँ और रूपक मौलिक थे और जीवन की तर्कहीनता अपने जान रूप में पाठक के सम्मुख थी। एक व्यंग्यकार की दृष्टि से अपनी समग्रता में देखा गया समाज। १९७३ ई. में 'आश्रितों का विद्रोह' का प्रकाशन हुआ। यह उपन्यास के शिल्प में लिखा गया व्यंग्य था । महानगर दिल्ली के जीवन की अपनी आवश्यकताओं–राशन, दूध, यातायात इत्यादि के लिए जूझने की एक फंतासीय कथा। इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक का वर्तमान भी था और भविष्य भी । उसमें उसकी दुर्दशा भी चित्रित हुई थी और उससे मुक्त होने के मार्ग का संकेत भी था। स्वाधीनता और आत्मनिर्भरता का संदेश देनेवाला यह अद्भूत उपन्यास अपने प्रकार की एक ही रचना है। १९७३ ई. ही आया 'जगाने का अपराध'। यहाँ कुछ और तीखा और धारदार हो गया है। सामाजिक चेतना, सांस्कृतिक चेतना और राजनैतिक चेतना कुछ अधिक उभर कर आई है। १९७५ ई. में पौराणिक प्रसंग पर आधृत आधुनिक जीवन संबंधी व्यंग्य नाटक 'शंबूक की हत्या' प्रकाशित हुआ, जिसमें राजनैतिक, प्रशासनिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक व्यवस्था को उधेडकर, उसमें बहुत गहरे झाँका गया है। १९७८ ई. में 'आधुनिक लड़की की पीड़ा' १९८२ ई. में 'त्रासदियाँ' और १९८६ ई. में 'परेशानियां' व्यंग्य संकलन प्रकाशित हुए। इसमें नए विषयों पर तीव्र व्यंग्यात्मक शैली में अपने समसामयिक समाज का विश्लेषण किया गया है। दस वर्षो के अंतराल के पश्चात १९९६ ई. में 'आत्मा की पवित्रता' आया और १९९७ ई. में 'गणतंत्र का गणित'।

इन बत्तीस वर्षों में डॉ. नरेन्द्र कोहली ने कभी व्यंग्य की अवहेलना नहीं की। समय के साथ उनका व्यंग्य और प्रखर और पैना हुआ। 'अट्टहास' और 'चकल्लस' पुरस्कारों से

सम्मानित डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य लेखन में पिछले दिनों राजनैति का रंग कुछ गहरा हुआ है। वे दूसरों की बनाई रूढ़ सीमाओं मे बँध कर, फैशनेबल नारों को ध्यान में रखकर, रचना नहीं करते, न तो वे साहित्यिक रूढिवादियों की मान्यता और स्वीकृती की चिंता करते है। इसलिए वे उन विसंगतियों पर भी लिखते हैं, जिन्हें लोगों ने देखा और भोगा तो है, किंतु जिसके विषय में लिखने का साहस वे नहीं कर पाते।

अनासक्त विवेक जब न्याय के पक्ष में अपने आक्रोश को कलात्मक रूप में अभिव्यक्त करता है, तो व्यंग्य का जन्म होता है। व्यंग्य की आत्मा है, उसकी प्रखरता और तेजस्विता। न्हास, परिहास, विनोद, कटाक्ष इत्यादि उसके सहयोगी हो सकते है; किंतु उनका असंतुलित प्रयोग उसकी प्रखरता की हानि भी कर सकता है, जैसे पक्षपात तथा पूर्वाग्रह उसके तेज को नष्ट कर देता है।

विधा के रूप में व्यंग्य का केन्द्रीय स्वरूप यद्यपि व्यंग्यनिबंध के शिल्प में ही उभरा है; किंतु 'कथा' तथा 'काव्य' के ही समान 'व्यंग्य' एक ऐसा तत्त्व है, जिसमें व्यंग्य–निबंध, व्यंग्य–कथा, व्यंग्य–उपन्यास तथा व्यंग्य–नाटक का जन्म होता है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली के सृजन में कथा तथा व्यंग्य–दोनों का ही संयोग है। उसकी आरंभिक कहानियों में भी व्यंग्य की झलक देखी जा सकती है; किंतु इस संकलन में केवल वे ही रचनाएँ सम्मिलित की गई है, जो व्यंग्य के रूप में ही लिखी गई हैं–उनका शिल्प चाहे निबंध का हो, संस्मरण का हो, कथा का हो, आत्मकथा का हो, उपन्यास का हो, नाटक का हो। उनकी रचनाओं में मौलिक प्रयोगों का अपना महत्त्व है। वे प्रयोग 'आश्रितों का विद्रोह' जैसी फैंटासी के रूप में भी हो सकते है और 'पाँच एब्सर्ड उपन्यास' जैसे नवीन और मौलिक अवरूद्ध कथा रूप में भी व्यंग्य का अपना अलग अंदाज स्पष्ट किया है।

संदर्भ सूची

१. उपाध्याय नर्मदाप्रसाद – डॉ. नरेन्द्र कोहली– व्यंक्तित्व और कृतित्व पृ. २८३

२. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ. १०६

३. कोहली नरेन्द्र – शंबूक की हत्या, पृ. ३७६

४. पांडेय सतीश – डॉ नरेन्द्र कोहली – चिंतन और सृजन, पृ. ३२

५. कोहली नरेन्द्र, अभिज्ञान की भूमिका– डॉ. विजयेन्द्र स्नातक, पृ. १५

६. कोहली नरेन्द्र, अभिज्ञान की भूमिका – कौशल किशोर, पृ. ०६

७. कोहली नरेन्द्र, अभिज्ञान की भूमिका – श्रवणकुमार गोस्वामी, पृ. १७१.

८. कोहली नरेन्द्र, निर्णय रूका हुआ, पृ. ७६

९. कोहली नरेन्द्र, महासमर की भूमिका डॉ. शशिप्रभा शास्त्री, पृ. १५

१०. यादव हितेन्द्र – कवितासुरभि, सुनीता सक्सैना–पौराणिक उपन्यासः समीक्षात्मक अध्ययन, (डॉ. नरेन्द्र कोलही के तीन उपन्यासों –अभिज्ञात, तोडो कारा तोडो तथा प्रच्छन्न का शोधपरक अध्ययन), पृ. १२५

११. कोहली नरेन्द्र – महासमर की भूमिका भारत भारव्दाज, पृ.१०

१२. कोहली नरेन्द्र – महासमर की भूमिका दशनु महेश, पृ.३४

१३. स संपादकः कोहली कार्तिकेय एक व्यक्ति डॉ. नरेन्द्र कोहली, पृ.११०

१४. कोहली नरेन्द्र – महासमर की भूमिका –अटलबिहारी वाजपेय, पृ. ६१

१५. कोहली नरेन्द्र – महासमर की भूमिका– डॉ. गोपाल राय, पृ. ५७

१६. कोहली नरेन्द्र – महासमर की भूमिका– डॉ. शशिभूषण सिंघल, पृ.४७

१७. कोहली नरेन्द्र – महासमर की भूमिका– डॉ. प्रेम जनमेय, पृ.८१

१८. कोहली नरेन्द्र – मेरी तेरह कहानियाँ, पृ. २०१

१९. कोहली नरेन्द्र – हत्यारे (नाटक), पृ.१२

२०. कोहली नरेन्द्र – कुकुर तथा अन्य कहानियाँ, पृ.२५

२.०. प्रस्तावना :-

हिंन्दी व्यंग्य साहित्य के विधाओं की दृष्टि से वैविध्य पूर्ण हो रहा है। व्यंग्य यह गद्य साहित्य की विशेष उपलब्धि है। व्यंग्य में गद्य और पद्य सभी विधाओं में व्यंग्य रचनाकारों ने समाज की सच्चाईयों को अधिक मात्रा में अभिव्यक्ती दी है। व्यंग्यकारों ने राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक आदि परिस्थितीयों में बढती हुई विसंगतीयों को कटु व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। व्यंग्यकारों ने समाज में व्याप्त अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार आदि को उद्घाटित करते हुए इनके विरूध्द संघर्ष करने की प्रेरणा समाज को प्रदान की है।

समाज का दर्पण कहनेवाला साहित्य मानवी जीवन की अभिव्यक्ति है। मानवीय जीवन की अनेक भाव भंगिमाओं की अभिव्यक्ति साहित्य में होती है। व्यंग्य अर्थात परिहास साहित्य का एक अंग है। साहित्य की रचना में बीज रूप में व्यंग्य होता है।

व्यंग्य में उपहास भी है, और करारी चोट भी होती है। व्यंग्य में हँसी मजाक के माध्यम से मनोरंजन है। साहित्य में व्यंग्य द्वारा उपजीविका होने की परम्परा बहुत प्राचीन है। साहित्य में व्यंग्य की धारा कभी मन्थर गति से तो कभी तीव्र गति से सदैव प्रवाहित होती रही है। व्यंग्य के छिटे प्रायः साहित्य की सभी विधाओं में कहीं न कहीं मिल ही जाते है।

प्रत्येक कालखंड की राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक परिस्थितियाँ व्यंग्य के लिए पोषक वातावरण निर्माण करती है। हिन्दी साहित्य व्यापक जीवन परिवेश में तो यह स्थिति अधिक उपजीव्य मानी है। आज कही पुराने के स्थान पर नये की स्थापना के प्रयास हो रहे है। जीवन से सम्बध्द पूरी मान्यता, मूल्य तथा पुराणी रीतियाँ, सब कुछ अपने स्थान से दूर जा रहा है। जीवन को सुव्यवस्थित बनाने के लिये जो भी प्रयास हो रहे है, वहाँ विसंगतियाँ उभरती हुई दिखाई देती है। अपने आसपास का सच्चा रूप देख सके, उसके अपने दोष भी उसे दिखायी दें तथा उन्हें हटाने के लिये वह सोच सके ऐसा साहित्य आज

जनप्रिय हो रहा है। साहित्य में व्यंग्य का दर्शन होता है। जीवन की अभिव्यक्ति साहित्य में होती है। अंतः व्यंग्य का सम्बन्ध जीवन से है।

२.१. व्यंग्य क्या है ?

आज के व्यापक जीवन – परिवेश में चारों ओर विद्रुपता,मिथ्याचार, असामजस्य, बेइमानी, असत्य, भ्रष्टाचार, उपेक्षा, अनादर, प्रशासनिक भ्रष्टाचार, नेताओं की स्वार्थपरता फैली है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक शैक्षिणीक परिवेश में विसंगति, विकृती, विद्रूपता फैली है, जिसमें आम आदमी घुठन और कुंठा में साँस लेता है। जीवन में व्याप्त विसंगतियों से लडने के लिए व्यंग्य मनुष्य को तैयार करता है। व्यंग्य व्यक्ति तथा समाज जीवन के भीतरी तहों में जाकर विसंगति, विकृतियों को खोजकर उन्हें अर्थ देता है। तथा उसे सशक्त विरोधाभास से पृथक करके जीवन की समीक्षा करता है। वह विसंगतियों भ्रष्टाचार, मिथ्याचारों का पर्दाफाश करते हुए जीवन की आलोचना करता है। व्यवस्था की बुराई को सूचित करता है। जरूरी नहीं की व्यंग्य में हंसी आए। व्यंग्य चेतना को झकझोर देता है। आत्मसाक्षात्कार करते हुए, सोचने को बाध्य करता है, जितना व्यापक परिवेश होगा, जितनी गहरी विसंगति होगी और जितनी तिलमिला देनेवाली अभिव्यक्ति होगी, व्यंग्य उतना ही सार्थक होगा।

व्यंग्य सुधारक का कोरा उपदेश नही होता जो एक कान से सुना, दसरे कान से निकाल दिया। वह तो तीक्ष्ण बाण की तरह होता है। जैसे मनुष्य हृदय को ठेंस पहुँचती है। वैसे व्यंग्य भी सालता रहता है व्यंग्य समस्त विसंगतियों को बेपरदा करते हुए, क्षोभा से क्रोध को जगाकर अन्याय के विरूध्द अतिशयोक्तिपूर्ण तथा अतिरंजित किन्तु पूर्ण सत्य रूप में पीडा और आक्रोश का ऐसा संयमपूर्ण सृजन अथवा साहित्यिक तीखा आघात है। जो कथनी और करनी के अन्तर को स्पष्ट करता है, वह अन्त योग्य कहलाता है।

२.१.१. व्यंग्य शब्द की उत्पति :–

व्यंग्य शब्द भारतीय साहित्य में नया नहीं है। भारतीय संस्कृत साहित्य में व्यंग्य का सृजन हुआ है। पुराणों और आख्यानों में तत्कालीन कुरीतियों और कुप्रथाओं पर व्यंग्य किया गया है। भक्तिकाल में कबीर एक सशक्त व्यंग्यकार के रूप मे सामने आते है। कबीर के साहित्य में व्यंग्य घन की चोट के समान प्रहार करनेवाला सिध्द हुआ है। रीतिकाल में बिहारी, रहिम तथा वृन्द आदि कवियों ने अपने काव्य में व्यंग्य का छिटपुट प्रयोग किया है। आधुनिक काल में व्यंग्य दिन दूना रात चौगुना बढता हुआ दिखाई देता है। भारतीय साहित्य में गुजराती में 'छप्पा' संधि साहित्य में 'तुंज' बंगाल में उपहास तथा प्रहसन उर्दू साहित्यमें 'फकारिया' शब्द व्यंग्य के लिए प्रयोगित किये गऐ है। अंतः भारतीय साहित्य में सभी काल में व्यंग्य मिलता है ।

२.१.२. हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार :–

हिन्दी साहित्य कोश में 'व्यंग्य' शब्द की उत्पत्ती इस प्रकार है ''वि', तथा 'अंग' के संयोग के व्यंग्य शब्द का निर्माण हुआ है, जो 'वि+ अंग = व्यंग्य' है।''[१] उक्त कथन का स्पष्टिकरण इस प्रकार है कि, व्यंग्य 'वि' उपसर्ग पूर्वक 'अज्ञ' धातु में 'व्यत' प्रत्यय लगाकर बना शब्द है। इसका का अर्थ है, व्यंजनों शक्ति द्वारा निर्देश है, जो विभिन्न प्रकार की समाज में व्याप्त विकृति, असमानता, विसंगति, विद्रुपता, विषमता को देखकर संवेदनशील लेखक इस आक्रोश को देखकर भावोद्रेक होते हुए 'व्यंग्य' की अभिव्यक्ती करता है। इसी अभिव्यक्ति को 'व्यंग्य' कहा जाता है। इस मत से स्पष्ट हो जाता है कि, व्यंजना शक्तिद्‌वारा निर्देशित अर्थ 'व्यंग्य' है। व्यंग्य शब्द की उत्पत्ती के मूल में अंजना शब्द शक्ती है।

२.१.३. 'नालन्दा विशाल शब्द सागर' के अनुसार :–

नालन्दा विशाल शब्द सागर में भी 'व्यंग्य' की व्युत्पति शब्द शक्ति के बीज रूप में मानते हुए व्यंजना से प्रकट होने वाले अर्थ को 'व्यंग्य' माना है। जैसे ''व्यंजना कृति से प्रकट होने वाले अर्थ को व्यंग्य की उत्पति का उत्स माना गया है।''[२] जो समाज जीवन में व्याप्त विसंगति, विकृति, विषमताओं पर प्रहार है। लेखक संवेदनशील होते हुए असमानताओं पर अपन कृति द्वारा 'ताना' या 'चुटकी' लेता है, जिसका कुछ गूढ अर्थ होता है। इसी कृति द्वारा प्रकट होने वाले अर्थ को व्यंग्य कहा गया है। नालन्दा विशाल सागर में व्यंग्य के व्युत्पति के परंपरागत प्रचलित अर्थ के अतिरिक्त 'ताना' या 'चुटकी' के रूप में भी अर्थ लिया गया है। ताना या चुटकी के अतिरिक्त ''लगती हुई गूढ बात जिसका कुछ गूढ अर्थ हो, जैसे शब्दावली में भी इस शब्द की विवेचना की गई है।''[३]

इस प्रकार नालन्दा विशाल शब्द सागर में व्यंग्य शब्द की व्युत्पति के संदर्भ में द्वारकाप्रसाद शर्मा और तारनीश झा यह स्पष्ट करते है कि, उक्त कथन में व्यंग्य के लिए विविध शब्दों का प्रयोग किया है, जो प्रचलित व्यंग्य के प्रस्तोता है। ताना को ही काव्यशास्त्र में 'उपालंभ' कहते है। नायक, खलनायक में से किसी के भी अनुचित व्यवहार के लिए दिया गया है। उलाहना ताना है। चुटकी भी विषमताओं पर किया गया तीखा आघात है। लगती हुई गूढ बात जिसका कुछ न कुछ गूढ अर्थ होता है, जिससे अभिव्यक्त की गयी बात से विडंबना स्पष्ट हो जाती है। यह सभी शब्द 'व्यंग्य' के ही प्रस्तोता है।

२.१.४. कालिका प्रसाद :–

'बृहत हिन्दी कोश में' व्यंग्य का अर्थ इस प्रकार दिया है, ''व्यंग्य को व्यंजना शब्द शक्ति द्वारा विसंगति, विकृति एवं विषमताओं गूढार्थ को व्यंग्य कहा गया है।''[४] कालिका प्रसादजी ने व्यंजना शब्द शक्ति द्वारा विसंगति, विकृति, विषमता पर किए गये सांकेतिक गूढार्थ को व्यंग्य शब्द के लिए अलग अलग अर्थ दिया है, यह सभी शब्द विसंगतियों पर

तीखा आघात करते हुए विषम परिवेश को संकेतित करते है एवं गूढ अर्थ को ही स्पष्ट करते है, यह सभी शब्द व्यंजना शब्द शक्ती से उत्पन्न व्यंग्यार्थ को स्पष्ट करते है।

२.१.५. डॉ. शेरजंग गर्ग :–

व्यंग्य शब्द के अर्थ पर प्रकाश डालते हुए गर्गजी ने लिखा है की '' प्राचीन भारतीय वाडमय में व्यंग्य हमारे अभीष्ट अर्थ में कहीं–कहीं तो लिखा गया है, किन्तु इस संज्ञा का अस्तित्व इस अर्थ में नही था।''[५] शेरगंज गर्ग ने व्युत्पत्ती के संबंध में जो मत व्यक्त किया है यह व्यंग्य को स्पष्ट करता है, वे कहते है कि प्राचीन भारतीय वाडमय में व्यंग्य अभीष्ट अर्थ में कहीं–कहीं लिखा गया है, लेकिन उस समय व्यंग्य शब्द का अस्तित्व इस अर्थ में नहीं था।

२.१.६. व्यंग्य सटायर के रूप में :–

हिन्दी साहित्य में व्यंग्य के विकास से पूर्व साहित्य में 'व्यंग्य' का संदर्भ मिलता है। रोम में इ.स. पूर्व ६५ में व्यंग्य का जन्म हुआ। इटली में लोक, संगीत, त्यौहार नृत्य करती, होलियों में नाचती, गाती घूमती थी। ये पद्य में अश्लील विषयों को चुनकर, उनपर चुटकियाँ लेते थे । फसल कटाई के समय गृहनिर्मित अगुंर की मदीरा के नशे में धुत ग्रामीणों के अश्लील व्यंग्यात्मक हँसी– ठिठोली के रूप में भी उसका दर्शन होता है। इन्ही रोमन गीतों और कॉमेडी से रोमन व्यंग्य का प्रारंभ हुआ है। रोमन साहित्य में अमर्यादित नाटको के लिए 'saturge' शब्द प्रचलित था। बाद में 'saturge' यहि शब्द लॅटीन में 'satura' बन गया और अंग्रेजी में उसका रूप 'safire' हो गया जिसका अर्थ होता है, 'पूर्ण या भरा–पूरा'।

इसके पश्चात इस शब्द का प्रचलित अर्थ 'सटुरा' कहलाता था। और उद्यान से निकलनेवाली पहली फसल को ईश्वरार्पित करने कि रीति को भी 'लेक्स सटुरा' कहा जाता था। संभव है कि यह शब्द कभी भोजनालय से सम्बन्धित रहा हो। आज वह इस अर्थ

का द्योतक नही रह गया। 'सटायर' शब्द के पर्याय रूप में हिन्दी में व्यंग्य, उपहास, ताना, खिल्ली, विडबंना, वक्रोक्ति, वाग्वैदग्ध, विकृति, प्रहसन, पॅरोडी, सांकेतित, चुटकी आदि शब्दों का प्रचलन है। आधुनिक व्यंग्य समीक्षक संस्कृत के प्रचलित अर्थो की अपेक्षा व्यंग्य को अंग्रेजी के 'सटायर' का पर्याय मानते है।

२.१.७. हिन्दी में 'सटायर' का अर्थ :–

हिन्दी के विद्वानों में अंग्रेजी 'सटायर' शब्द के अर्थ को लेकर मतैक्य नहीं है। हिन्दी साहित्य के वीरगाथाकाल में आज के प्रचलित व्यंग्य शब्द का पर्याय 'भर्त्सना' और 'निन्दा' के रूप में ही मिलता है। भक्तिकाल में भर्त्सना, गाली–गलौज, आक्रोश–युक्त कटू व्यंग्य, निन्दा, उपालम्भ, वाक्पटुता, विडम्बना, उपहास अन्योक्ति आदि के रूप में मिलता है। रीति काल में व्यंग्योक्ति, उपालम्भ, ताने, निन्दा, खिल्ली आदी के रूप में मिलता है। आधुनिक काल में वक्रोक्ति, प्रहसन, पॅरोडी, सांकेतित, चुटकी आदी पर्यायी शब्द का प्रयोग व्यंग्य के लिए मिलता है। हिन्दी विद्वानों में सटायर को लेकर मतैक्य नही है । डॉ. हरदेव बाहरी, डॉ. रामचन्द वर्मा ने इस संदर्भ में अपन मत व्यक्त किए है।

२.१.७.१. डॉ. हरदेव बाहरी :–

बृहत अंग्रेजी – हिन्दी कोश में डॉ. हरदेव बाहरीने 'व्यंग्य' 'बनाम सटायर' के संदर्भ में अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है ''सटायर के लिए प्रहसन काव्य, विद्रुपात्मक साहित्य, व्यंग्य साहित्य, व्यंग्य लेखन, उपहास, मजाक आदि अर्थो का प्रयोग किया है और उसकी सीमाओं को विस्तारीत किया है।''[६] किसी अवगर में अगर बेसिलसिलापन दृष्टिपात हुआ तब वहाँ उपहास निर्मित होता है। आप्त जीवन में विसंगति, विकृति, विषमता दिखाई देती है, जिसे व्यंग्यकार अपनी लेखनी द्वारा व्यक्त करते है व्यंग्यकार, व्यंग्य साहित्य, व्यंग्य लेख, विद्रूपात्मक साहित्य, आदि द्वारा 'व्यंग्य' साहित्य का सृजन करते है।

२.१.७.२. डॉ. रामचन्द वर्मा :–

मानक हिन्दी कोश में इस संदर्भ में डॉ. वर्मा जी का व्यक्त मत इस प्रकार है ''व्यंग्य–गीत को ही 'सटायर' कहकर उसे केवल काम की एक विधा विशेष में सीमित कर दिया है।'' [७]

इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि, रामचन्द वर्मा व्यंग्य को सिर्फ काम तक ही सीमित रखते हुए, काव्य विधा की एक विशेषता मानते है। गद्य की विविध विधा में व्यंग्य को वह मानने के लिए वे तैयार नही है।

२.१.७.३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी :–

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ख्यातिलब्ध समीक्षक है जो 'व्यंग्य' की पुष्टि करते हुए मानते है कि ''व्यंग्य' की अपेक्षा 'व्यंग्य' का प्रयोग अधिक प्रचलित एवं चिन्तकों द्वारा समर्थित है । अतः एवं 'satire' के पर्याय स्वरूप व्यंग्य को ही स्वीकृती दी जा सकती है।''[८] तिवारीजी 'व्यंग्य' को इसलिए स्वीकृती दी जानी चाहिए ऐसा मानते है क्योंकि व्यंग्य में कार्यशक्ति अधिक होती है। व्यंग्य में अधिक तर भाव प्रकट करने की क्षमता होती है। व्यंग्य कमियों दोषों पर कठोर आघात है। तो व्यंग्य कार्यशक्ती में को माना है। इसलिए तिवारीजी 'व्यंग्य' कि उपेक्षा 'व्यंग्य' को उचित मानते है ।

२.१.७.४. अमृतलाल नागरः–

अमृतलाल नागर ने 'व्यंग्य' शब्द की दृष्टि की है, उन्होंने प्रेमनारायण टंडन की तरह ''व्यंग्य के प्रयोग पर ही बल दिया है, व्यंग्य को अंगहीन या मेंढक माना है।''[९]

नागरजी के कथन से यह स्पष्ट होता है कि, व्यंग्य शरीर के किसी अवयव का ना होना याने कार्य शक्ति में कमी तथा संस्कृत में व्यंग्य का पर्यायी शब्द मेंढक का प्रयोग

बताया गया है। किन्तु व्यंग्य तो कमियों विषमताओंपर आघात करता है, जो कार्य शक्ति में अधिक है ।

उपर्युक्त कथन से सह स्पष्ट होता है कि, संस्कृत एवं हिन्दी भाषा में प्रचलित ’व्यंग्य’ के जितने भी अर्थ उपलब्ध होते है वे प्रायः व्यंग्य अर्थ के द्योतक है। व्यंग्य शब्द का बीज रूप में व्यंजना शब्द शक्ती से निर्मित तथा उत्पन्न हुआ शब्द है।

उपयुक्त हिन्दी विद्वानों की ‘व्यंग्य एवं व्यंग्य’ के समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि, हिन्दी के प्रायः समस्त प्रतिष्ठित व्यंग्यकारों द्वारा ‘व्यंग्य’ शब्द का ही प्रयोग उचित माना है। तथा हिन्दी के अधिकांश व्यंग्य समीक्षको द्वारा व्यंग्य शब्द को ही स्विकृति एवं मान्यता दी गयी है और व्यंग्य की अपेक्षा ’व्यंग्य’ को ही अधिक प्रमाण माना गया है।

२.२.१. व्यंग्य के पर्यायवाची शब्द :–

साहित्य में व्यंग्य शब्द के पर्यायवाची शब्द प्रचलित है। अंग्रेजी के सटायर के लिए हिन्दी में विकृत, उपहास, खिल्ली उडाना, थट्टा, नकल, ताना जैसे शब्द प्रचलित है।

डॉ. मलय ने व्यंग्य रूपो की चर्चा करते हुए उसके पर्यायवाची शब्द दिये है। १) तीक्ष्ण वैदग्ध्य २) विडम्बना ३) उपहास ४) हेयहास ५) निन्दा ६) विनोद ७) कटाक्ष ८) आक्षेप ९) प्रभर्त्सना

पश्चिम के एच. डब्ल्यु.फाडलर से लेकर भारत के डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी तक अनेक विद्वानों ने व्यंग्य के पृथक वर्गीकरण की आवश्यकता का अनुभव नहीं किया है। हास्य के व्यंग्य पक्ष पर जोर देनवाले पश्चिम के साहित्य शास्त्री उसके पाच प्रमुख भेद मानते है। इनके मतानुसार ह्युमर (हास्य), विट(वाग्वैदग्धता), सटायर (व्यंग्य), आइरनी (वक्रोक्ती) और फार्स (प्रहसन) यह पाँच भेद है। हास्य और व्यंग्य की परस्परता के कारण समीक्षकों ने व्यंग्य के भेदों पर पृथक से विचार नहीं किया है।

भारतीय विद्वानों ने इस पर विस्तार से प्रकाश डाला है उनके मत से हास–उपहास, परिहास, वाग्वैदग्धता, पॅरोडी, वक्रोक्ति, प्रहसन, उपालम्भ, गाली–गलोज, और दोषपूर्ण आक्षेप आदि व्यंग्य के पर्याय या निकटार्थी रूप है। कुछ आलोचक इन्हें व्यंग्य के साधन मानते है। प्रेरणा और प्रभाव के आधार पर व्यंग्य को दो भागों में बाँटा है १) वैयक्तिक व्यंग्य २) र्निवैयक्तिक व्यंग्य इन्हें आत्मव्यंग्य और परस्थव्यंग्य नाम भी देते है।

१) परिस्थितियों या उसकी विडम्बना को उभारनेवाला ।

२) दैवी एवं नियति की दारूणता को दर्शाने वाला व्यंग्य।

इस आधार पर डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी व्यंग्य दो तरह का मानते है।

१) व्यक्तिगत व्यंग्य २) समष्टिगत व्यंग्य इस के अंर्तगत धर्म, समाज, साहित्य, राजनीति, और मानवीय दुर्बलता से सम्बन्धित व्यंग्य को समाहित किया है। हिन्दी में व्यंग्य के लिए बहुत से पर्यायी शब्द है, जो इस प्रकार है

२.२.१.१. व्यंग्यः–

'व्यंग्य' शब्द के अनेक अर्थ है, जैसे – गूढ अर्थ, ताना, बोली, चुटकी, विकलांग, वास्तविक व्यंग्य और व्यंग्य में काफी अंतर है। फिर भी कई स्थानों पर व्यंग्य का पर्याय व्यंग्य को माना है। व्यंग्य का मतलब है शरीर के किसी एक अवयव का न होना अर्थात यहाँ कहना अप्रस्तुत होगा कि व्यंग्य शब्द का अर्थ संस्कृत में मेंढक भी है। फिर भी प्रसिध्द व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई ने 'दुघटनारस' रचना में 'व्यंग्य' के लिए 'व्यंग्य' का प्रयोग किया है। इसी प्रकार व्यंग्यकार शरद जोशी भी व्यंग्य के स्थान पर 'व्यंग्य' प्रयोग के समर्थक रहे है। लेकिन अब नौवे शतक में नहीं बल्कि ' व्यंग्य ' को ही मान्यता प्रदान की गयी है। उसका प्रचार–प्रसार अधिक हुआ है। व्यंग्य कम है, तो 'व्यंग्य' कमियों, दोषों पर कठोर आघात है। संक्षेप में व्यंग्य कमियों, दोषोंपर कठीण आघात है। व्यंग्य शब्द का ही अधिक प्रचलन है, जो उचित प्रतीत होता है।

२.२.१.२. उपहास :–

उपहास को अंग्रेजी में 'Surecasm' कहतें है। मराठी साहित्य में जितना भी व्यंग्य मिलता है, वह पूरा उपहास में समाहित है। यह निंदासूचक हास है, अंतएवं इसे व्यंग्य का प्रतिरूप माना जाता है। इसका प्रयोग किसी व्यक्ति, समूह या वस्तु का मजाक कर उसे हीन या नीचा दिखाने के लिए किया जाता है। जब इसका प्रयोग काम में होता है, उसे व्यंग्य कविता कहतें है, उसे मराठी में उपहासात्मक कविता का संबोधन है। मराठी साहित्य में आचार्य प्र. के. अत्रे., चि. वि. जोशी., आदि का साहित्य उपहास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उपहास जो व्यंग्य का पर्याय है।

२.२.१.३. ताना:–

'ताना' को ही काव्य शास्त्र में उपालंभ कहते है। ताना अर्थात व्यंग्य, आक्षेप वाक्य, बोली–ढोली आदि । नायक, नायिका, खलनायक या खलनायिका में से किसी के भी अनुचित व्यवहार के लिए दिया गया उलाहना ताना है। कविश्रेष्ठ सूरदास के भ्रमरगीत परम्परा की गोपियों ने उध्दव के साथ अपनी सारी बातचीत इसी धारा में संपन्न की। ताना ने भक्तिकाल से अब तक बहुत स्तरगत प्रगति की है। व्यंग्य साहित्य में ताना का उपयोग खुलकर किसी के भी साथ करतें है क्योंकि वह असंतोष तथा तकरार का प्रांगीमाओं की प्रस्तोता है।

२.२.१.४. कटाक्ष :–

गुजराती साहित्य में व्यंग्य का पर्यायी शब्द कटाक्ष है। कट + अक्ष= कटाक्ष है। कटाक्ष का अर्थ है तिरछी चितवन, व्यंग्य, आक्षेप, टेढी नजर आदि। कटाक्ष वट्ट कथा है, जो सपाट बयानी को एक उल्लेखपूर्ण आवेश का संदर्भगत आँच देकर तीखा प्रहार करता है।

हिन्दी साहित्य में कटाक्ष का प्रयोजन प्रवक्ता सहज आक्रोश की स्थिति में कट होता है। प्राचीन गुजराती तथा आधुनिक गुजराती भाषा में कटाक्ष से सम्बधित रचनाएँ मिलती है।

२.२.१.५. खिल्ली :–

खिल्ली अर्थात ठट्टा, हँसी, मजाक, दिल्लगी, किल, काँटा आदि है। जहाँ–जहाँ व्यंग्य है, वहाँ–वहाँ हास या खिल्ली है। जो विसंगतिपूर्ण कार्यविधी हम सहज भाषा में नहीं कर सकते उसी तथ्य को हम खिल्ली कहतें है। खिल्ली, उपहास, परिहास, उपरोध के साथ संकल्पित आमतौर पर पारिवारीक तथा सामाजिक असंगतियों को प्रस्तुत करने के लिए वक्ता इसका इस्तमाल करता है। हमारे परिवार में अगर कोई साला–साली, देवर–देवरानी, जेठ–जेठानी, बहनोई आदि है, तो दोष दिग्दर्शन हेतु खिल्ली का सरेआम प्रयोग किया जाता है। जो व्यंग्य की प्राथमिक अवस्था है। आमतौर पर अनपढ लोग इसका प्रयोग अधिक करते है, जिसे पढे लिखे लोग या साहित्य में व्यंग्य कहते है। अतः साहित्य में व्यंग्य प्रतिरूप खिल्ली माना जाता है।

२.२.१.६. विडंबना :–

अंगेजी में व्यंग्य के पर्याय रूप में 'विडंबना' शब्द का प्रचलन है, लेकीन विडंबना व्यक्तिगत तथा सामाजिक स्थिति पर प्रहार करने के लिए उपयोग में अधिक लाई जाती है। किसी को 'चिढाने या तुच्छ ठहराने के लिए' उपयोग में अधिक लाई जाती है। मराठी साहित्य में व्यंग्य पर्याय के रूप में इसका खुलकर प्रयोग मराठी व्यंग्यकारों ने किया है। मराठी में श्रीपाद कृष्ण कोल्हटकर तथा आधुनिक काल में रामदास फुटाणे का राजनीतिपूर्ण साहित्य विडंबना के अंतर्गत आता है। यह विडंबना उस, गाय दूध के समान है, जो चूल्हे पर रखने पर स्थिर दिखता है। लेकिन भीतर से अस्थिर होता है। व्यंग्य में भी यही परिवेश होता है। साधारण शब्द तथा अर्थो में देखा जाए तो वह सरलतम लगता है, लेकिन अन्य

अर्थो में लिया जाए तो वह भीतर से आंदोलित होता है। अंतः विडंबना को व्यंग्य साहित्य का प्रतिरूप समझा जाता है। असंगति तथा विरोधाभास से लबालब परिस्थितियाँ विडंबना की ही प्रस्तावना करती है।

२.२.१.७. वक्रोक्ति :-

वक्र है उक्ती इति वक्रोक्ति। वक्रोक्ति को ही टेढा, बाका, तिरछा, कुटिल, नामाभिधान है। व्यंग्य में यही टेढा, तिरछा, बाँका, कुटिल हनन चलता है। साहित्य में व्यंग्य कथन की इस टेढी भंगीमा को वक्रोक्ति कहा जाता है। यह एक बहुचर्चित संप्रदाय है। आचार्य कुंतक ने चर्चित कथन से भिन्न और वैदग्धपूर्ण भंगीमाद्वारा प्रस्तुत उक्ति स्वरूप वक्रोक्ति को परिभाषित किया है। व्यंग्य के समकालीन संदर्भ में इसका अर्थ संकोच हुआ और अब केवल यही कथन वक्रोक्ति कहा जा रहा है। वक्रोक्ति में बिच्छू के समान तीखी डंक व्यक्त होती है। जिससे प्रस्तुत करनेवाला अपना लक्ष प्राप्त करता है। वक्रोक्ति में आक्षेपपूर्ण भंगिमा सम्मुख आती है। आमतौर पर इसका प्रयोग जो काम या, जो हेतु सरल भाषा में नहीं हो सकता, लेकिन मन में क्रोध तथा द्वेष तो काफी होता है। जिसे उगलना तो चाहते है। किन्तु उसे व्यक्त करने में संकोच होता है। अर्थात वक्रोक्ति यह एक ऐसे वैद्यराज की दवा है जो मिठी तो लगती है। लेकीन अंदरसे पूरी कडवाहट होती है, जो मन का मैल साफ कर देती है। विशेषतः वक्रोक्ति में उपरी तौर पर प्रशंसा तो दिखाई देती है लेकिन अतंर मन में निंदा होती है। इसका उद्देश्य भी व्यंग्य के समान है जो रहस्योद्घाटन कर सुधार करना चाहता है। अंतः व्यंग्य साहित्य में वक्रोक्ति होती है।

२.२.१.८. वाग्वैदग्ध :-

बात करने में निपुणता, चमत्कारपुर्ण उक्तियों की चपलता अर्थात वाग्वेदग्ध है। लेकिन इन सब में वाग्वेदग्ध ही सर्वाधिक युक्त है। वाग्वेदग्ध्य तथा व्यंग्य दोनों का स्वरूप, गुण, कार्य व्यापार एक जैसा ही है। अंतः इसका पर्याय में प्रयोग किया जाता है।

वाग्वेदग्ध्यवाणी का यह करिश्मा है, जो शब्द तथा अर्थ की सम्मिलित विद्ग्धता के सहारे व्यंग्य की संवेदना को एक साथ प्रकट करता है । वाग्वेदग्ध माना तो सहज है अन्यथा सोद्देश्यपूर्ण है ।

वाग्वेदग्ध्य में सत्य प्रस्फुटीत होता है, जो सुनने तथा पढनेवालों को कटु अनुभुति कराता है। व्यंग्य की संवेदना और करूणा को आत्मसात करनेवाले वाग्वैदग्ध शब्द एवं अर्थ दोनों ही स्तरोंपर प्रभावित एवं चमत्कृत कर देता है, जिससे श्रोता या पाठक आग–बगुला हो जाता है। वाक् में विदग्धता होने के कारण कभी–कभी सहन न होने पर पाठक भीतर लडने के लिए असंगति से मुकाबला करने के लिए उद्दत हो जाता है। इसका आखरी तथा अंतिम प्रयोग होने पर हाथापाई की नौबत आ जाती है। इतनी शक्ति वाग्वैदग्ध्य में है, जिसे सुनकर व्यक्ति तिलमिला जाता है। अस्वस्थ हो जाता है।

२.२.१.९. व्यंजना :–

आर्चाय विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में व्यंजना पक्ष को देखते हुए ही लिखा है कि
''विरत्तास्वभिताधाधासु यत्रा ऽ थों बोध्यते परः ।
सा वृत्तिव्यञ्जनानां शब्दस्यर्थदिकस्यच ।।''[१०] व्यंजना का सीधा रिश्ता व्यंग्य के प्रयोजन और अभिप्रेत के संदर्भ से है। व्यंजन धातु में उपसर्ग लगाने से व्यंजन शब्द कि निर्मिती हुई है। व्यंजन का अर्थ है विशेष प्रकार का अंजन। जिस प्रकार आँखों में लगा हुआ अंजन दृष्टि दोष को दूर कर उसे निर्मल बना देता है, उसी प्रकार व्यंजना शब्द शक्ति शब्द के मुख्यार्थ तथा लक्षार्थ को पीछे छोडती हुई उसके मूल में छिपे हुए अकथित अर्थ को द्योतीत कराती है। भारतीय भाषा शास्त्राकारों ने व्यंजना को ही व्यंग्य का बीज माना है। अंतः व्यंग्य साहित्य के पर्याय रूप में व्यंजना प्रयोग प्रचलित दिखाई देता है।

२.२.१.१०. विकृति :–

साहित्य में विकृति अर्थात सत्य, औचित्य, न्याय तर्क नियम, विधान के सिध्दांतो से 'विपरीत' या 'विरूध्द' होने की अवस्था है। किसी व्यक्ति के आचार–विचार, रहन–सहन या लेन–देन में कोई भी विसंगति विकृती कहलाती है, जो कभी हास्य बनती है। सकृति की दुरावस्था में विकृति कार्य करती है। विकृती यानी बिगाड, विकार, खराबी या मन में होने वाला क्षोभ, किसी वस्तु का बिगडा रूप, फिर वह व्यवहार जगत का हो या साहित्य धरातल के कभी–कभी कथनी और करनी में विभेद पैदा होनेपर विकृति तैयार होती है। तो दूसरी और कथनी और करनी के अंतर को व्यंग्य कहा जाता है। यानी दोनों का कार्य, स्वरूप. उद्देश्य एक होने के कारण व्यंग्य का पर्याय विकृति समझा जाता है। किसी व्यक्ति का विकृत रूप धारण करने पर पूरा परिवेश बिगड जाता है। तब वहाँ अपने आप व्यंग्य दिखाई देता है। विकृती संबंध तन के बजाय मन से अधिक है। आदमी जब सठीया जाता है, तब असंगतीपूर्ण व्यवहार करनेवाले व्यक्ति को विकृत व्यक्ति कहा जाता है।

२.२.१.११. प्रहसन (कॉमेडी, फार्स) :–

कॉमेडी का मुख्य उद्देश्य मनोरंजन करना है। फार्स के सम्बध में कहा गया है, कि यह व्यंग्यात्मक और हास्ययुक्त पत्रों से युक्त हल्की– फुल्की नाट्य रचना होती है, जिसमें घटनाओं की संभाव्यता और चरित्रों की स्वाभाविकता के मामले में अधिक से अधिक उदारता बरती जाती है। भरतमुनी के अनुसार ''प्रहसन में सामान्य जनता में प्रचलित दुराचरण– एवं–दम्भ–पाखल का प्रदर्शन अनिवार्य है। ''[११] प्रहसन को कॉमेडी का पर्याय मानते हुए उसे मुख्य पाँच प्रकारों में विभाजित किया जाता है। १) शास्त्रीय २) समानी ३) भावप्रधान ४) सामाजिक ५) समस्या मूलक कई समानताओं के बावजूद और व्यंग्य में संक्षिप्त अन्तर है।

२.२.१.१२. पॅरोडी :–

यह अंग्रेजी शब्द है। इसका अर्थ शब्दकोश के अनुसार मूल शब्दों का उलट–पुलट कर उनमें हास्य और व्यंग्य को पिरोना है। इसे विडम्बना गीत और आभास भी कहा गया है। वैबस्टर के मतानुसार'' किसी लेखक अथवा कृति की शैलीगत विशेषताओं की पुनःस्थापना द्वारा उपहास कराने के लिए जिस साहित्यिक शैली का प्रयोग किया जाता है, उसे पॅरोडी कहते है।''[१२] व्यंग्य के पर्यायवाची शब्द के अलावा परोक्ष संकेत उपलक्षित चुटकी, सांकेतिक विद्रूपात्मक साहित्य, हेयहास, व्याजोक्ति यह भी है। इस प्रकार व्यंग्य के लिए पर्यायी शब्द प्रचलित है।

२.३. व्यंग्य की परिभाषा :–

विचारकों ने और समीक्षकों ने व्यंग्य को परिभाषित करने का प्रयास किया है। व्यंग्य को परिभाषित करनेवाले विद्वानों में पाश्चात्य अर्थात अंग्रेजी और भारतीय हिन्दी के विद्वान है।

२.३.१. व्यंग्यकारों की व्यंग्य की परिभाषायें :– स्विप्ट :–

व्यंग्य की परिभाषा स्विप्ट के 'बेटल ऑफ बुक्स' में इस प्रकार मिलती है, "व्यंग्य एक ऐसा आईना है, जिसमें मुखमुद्राओं को देखते हुए लेखक अपने को भी प्रतिबिम्बित होते हुए देखता है और व्यंग्य के कारण लेखक एकांत में मुस्कुरा उठता है, किन्तु उसे अधिक उपहासात्मक कार्य भी करना होता है। व्यंग्य दूसरों को भी हँसाने में सहाय्यता पहुँचाता है ।''[१३] इस प्रकार व्यंग्य का प्रयोग उपहास और हास्य के लिए किया जाता है । सुप्रसिध्द अंग्रेजी व्यंग्यकार स्विप्ट के मतानुसार व्यंग्य एक जैसा दर्पण है, जिसमें झाँकने वाले को अपनी छाया के अलावा सभी का प्रतिबिंब दिखाई देता है, याने व्यंग्यकार अपनी बुराईयाँ को स्पष्ट करते हुए समाज की सभी विसंगतियों को व्यंग्य साहित्य में अभिव्यक्त करता है। जिसकेकारण व्यंग्य का समाज में हार्दीक स्वागत किया जाता है। व्यंग्य में एक ऐसा पैनापन

होता है, जो लेखक को एकान्त में मुस्कुराने के लिए मद्द करता हुए पाठक एवं श्रोता को भी हँसाने में सहायता पहुँचाता है ।

२.३.२. द वर्ल्ड ऑफ एनसाइक्लापीडीया :–

''मनुष्य के किसी व्यवहार पर आक्रमण करने के लिए व्याजाक्ति अथवा उपहास का उपयोग ही व्यंग्य है।''[१४]

मनुष्य के व्यावहारिक दोषों कमजोरीयों पर व्याजोक्ती द्वारा तीखा आघात ही व्यंग्य होता है। इस प्रकार का मत एनसइक्लापीडीया की एक परिभाषा से व्यक्त होता है।

२.३.३ हरिशंकर परसाई :–

हरिशंकर परसाई की व्यंग्य संबंधी परिभाषा 'सदाचार का तावीज' में इस प्रकार मिलती है ''व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार कराता है, जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दाफाश करता है। अच्छा व्यंग्य सहानुभूती का सबसे उत्कृष्ट रूप होता है''[१५] सही व्यंग्य व्यापक जीवन– परिवेश को समझाने से मालूम होता है। व्यापक परिवेश की विसंगति, मिथ्याचार, असांमजस्य, अन्याय आदि की तरह में जाना, कारणों का विश्लेषण करना, उन्हें सही परिप्रेक्ष्य में देखना आदि बातों में है। इससे सही व्यंग्य बनता है। ऐसा परसाईजी का मत है।

२.३.४ डॉ. नरेन्द्र कोहली :–

'मेरी श्रेष्ठ रचनाएँ ' में डॉ. नरेन्द्र कोहली की व्यंग्य संबंधी परिभाषा इस प्रकार है, ''कुछ अनुचित अन्याय पूर्ण अथवा गलत देखकर जो आक्रोश जागता है, वह यदि काम में परिणत हो सकता तो अपना सहायता में कम होकर जब अपनी तथा दूसरों की पीडा पर

हँसने लगता है, तो वह बिकट व्यंग्य होता है। वह पाठक के मन को चुभता नहीं है, सहलाता नहीं तो लगता है, अतः वह सार्थक और सशक्त व्यंग्य कहलाता है।''[१६]

अन्याय पूर्ण घटना को देखकर जो आक्रोश पैदा होता है, उसे देखते हुए व्यंग्यकार कार्यरत होकर व्यंग्य की सृजना करता है। प्रहार के माध्यम से जो पाठक को जागृत करता है, वह सशक्त व्यंग्य है। जब दूसरों की पीडा एवं आक्रोश को देखकर उस पर तीखें आघात करता है। तब वह सार्थक व्यंग्य है ।

२.३.५ शरद जोशी :–

शरद जोशी जी के 'मेरी श्रेष्ठतम व्यंग्य रचनाएँ' में व्यंग्य की परिभाषा इस प्रकार है, ''अब यदि उन्हीं मूल्यों, विश्वासों और आस्थाओं से जुड़ा साहित्य सामान्य जिन्दगी से भी जुडा है, तो वह सेंस ऑफ ह्युमर साहित्य में आएग ही; जो अन्याय, अत्याचार और निराशा के विरूध्द होने से व्यंग्य में अभिव्यक्त होगा। व्यंग्य की पहचान है कि, साहित्य कष्ट सहती सामान्य जिंदगी के करीब है या उससे जुडा हुआ है, नहीं हो तो कही गड़–बड़ है।''[१७] ऐसा साहित्य जो सामान्य जिंदगी से जुडा हुआ हो, वही व्यंग्य में आएगा, जो अन्याय, अत्याचार, निराशा के विरूध्द की गयी अभिव्यक्ति है। लेकीन जिंदगी से जुडी हुयी अभिव्यक्ती नहीं है, तो वह व्यंग्य नहीं हो सकता। इस प्रकार का मत जोशी जी का है ।

२.४. हिन्दी साहित्य के प्रमुख व्यंग्यकार :–

व्यंग्यकारो ने राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक आदि परिस्थितियों में बढती विसंगति, अन्याय, अत्याचार, विडम्बना, आक्रोश, पीडा, क्रोध, सामाजिक कलह, सांस्कृतिक विसंगति, घर–परिवार कार्यालय में अनेकानेक कारणों से होनेवाली विसंगतियों को कटु व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

२.४.१ डॉ. नरेन्द्र कोहली :–

डॉ. नरेन्द्र कोहली की हिन्दी व्यंग्य साहित्य में एक अलग पहचान है। डॉ. कोहली ने रेखाचित्र भी को त्रासद शैली तो, कभी एब्सर्डता के द्वारा प्रयोगित करते हुए व्यंग्य की धार को अधिक पैना किया है। विसंगतियों पर सार्थक आक्रमण करनेवाले व्यंग्यकारों की सूची में डॉ. नरेन्द्र कोहली का बहुत आदरणीय स्थान है। डॉ. कोहलीजी हिन्दी के श्रेष्ठ व्यंग्य साहित्यकार है। उनके व्यंग्य संकलन की सूची निम्नानुसार प्रकाशित है।

१) एक और लाल तिकोण	– १९७०
२) आव्रितो का विद्रोह	– १९७३
३) जगानें का अपराध	– १९७३
४) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ	– १९७७
५) आधुनिक लडकी की पीडा	– १९७८/२०००
६) त्रासदियाँ	– १९८२
७) परेशानियाँ	– १९८६/२०००
८) समग्र व्यंग्य	– १९९१
९) आत्मा की पवित्रता	– १९९६
१०) मेरी इक्यावन व्यंग्य रचनाएँ	– १९९७
११) गणतंत्र का गणित	– १९९७
१२) समग्र व्यंग्य–१ (देश के शुभ चिंतक)	– १९९८
१३) समग्र व्यंग्य–२ (त्राहि–त्राहि)	– १९९८
१४) समग्र व्यंग्य–३ (इश्क एक शहर का)	– १९९८
१५) समग्र व्यंग्य–४ (राम लु भाया कहता है)	– २०००
१६) मेरे मुहल्ले के फूल (व्यंग्य संग्रह)	– २०००
१७) सब से बडा सत्य (व्यंग्य संग्रह)	– २०००
१८) वह कहाँ है (व्यंग्य संग्रह)	– २००३

डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी के साहित्य में 'व्यंग्य' के प्रति निष्ठा तथा गंभीरता प्रशंसनीय है। उक्त व्यंग्य संकलनों को 'परिवेश का आईना' कहा जा सकता है। परिवेश की क्षुब्धता, अभाव, पीडा, अनाचार को मार्मिकता से उन्होंने व्यंजित किया है।

डॉ. कोहली ने रामकथा, कृष्णकथा आदि का कार्य किया व्यंग्य साहित्य को भी समृध्द करने का कार्य किया है। उनका 'पाँच एब्सर्ड' उपन्यास इस सदी की सर्वश्रेष्ठ व्यंग्य कृतियों में से एक कही जा सकती है। उनकी 'आव्रितो का विद्रोह' 'जगाने का अपराध', 'मेरी सर्वश्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ' यह उनकी उत्कृष्ट व्यंग्य रचनाएँ है।

पौराणिक कथा पर आधारित उनका व्यंग्य नाटक 'शम्बूक कि हत्या' अपने प्रस्तुतीकरण की नवीनता और अपनी तीखी व्यंग्य दृष्टि के कारण उल्लेखनीय है।

डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारी, डॉ. नरेन्द्र कोहली के व्यंग्य लेखन के बारे में लिखतें है ''डॉ. कोहली का व्यंग्य लेखन परिवेश और उसके अन्तविरोधों की प्रतिक्रिया स्वरूप रचित है। समाज के विविध प्रसंगो में विहीत घातक रोगों पर इनकी सूक्ष्म दृष्टि गई है और जीवन के हर कदम पर जो असंगतियाँ आम आदमी के जीवन को कष्टकर बना रही है, उनपर डॉ. कोहलीने गहराई से विचार किया है।''[१८] व्यंग्यकार डॉ. कोहलीजी केवल उपन्यासों, नाटकों की रचना में खो नहीं गये। उनके नाटकों, उपन्यासों में अनाचार का जितना कडा विरोध दिखाई देता है। उतना तिखापन उनके व्यंग्य साहित्य में दृष्टिगोचर होता है।

डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, शैक्षिक, न्याय आदि क्षेत्रों कि विसंगतियों पर व्यंग्यात्मक प्रहार किये है।

डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी धर्म के पाखण्डीयों पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''धर्म का हमारे मानस में महत्वपूर्ण स्थान है। हमारा धर्म आज पाखण्डी साधु–सन्तों का खिलवाड बना हुआ है। डॉ नरेन्द्र कोहली ने इसे सन्तो कि बिल्ली और चुहे में रूपकात्मक शैली में प्रस्तुत किया है।''[१९] इस प्रकार समाज के ढोंगी लोगों की पोल खोली है ।

डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी साहित्य के बारे में व्यंग्य करते हुए लिखते है कि, ''जब कोई लेखक किसी भयानक रोग से पीडीत होकर बिना इलाज की सुविधा पाये ही युवावस्था में मर जाता है।''[२०]

साहित्यकार को सम्मान और आदर तब मिलता है, जब लेखक किसी भयानक रोग से पीडीत होकर युवावस्था में ही मर जाता है। इसमें चुभा देनेवाला व्यंग्य है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली राजतीतिक विसंगतियों पर प्रहार करते है, आजकल सबसे कम आमदनी वाला मास्टर है। मास्टरों का वेतन कम क्यों है? इसका उत्तर उन्होंने यह दिया है। ''तीनों राष्ट्रपती मास्टर थे। निष्कर्ष यह निकला की देश का राष्ट्रपति बनने के लिए पहले मास्टर होना अनिवार्य है। हमारे देश का प्रत्येक मास्टर संभावित राष्ट्रपति है। इसलिए सरकार उनकी वेतन नहीं बढाती। वेतन बढा दिया तो हर शिक्षक, शिक्षक ही बना रहना चाहेगा, फिर राष्ट्रपति कौन बनेगा?''[२१] इस प्रकार राजनीतिक हो या शिक्षा जगत हो साहित्य को हर परिवेश का डॉ. नरेन्द्र कोहली ने पर्दाफाश करने का कार्य व्यंग्य द्वारा किया है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली नकारात्मक प्रणाली को लेकर दृष्टांत तथा उदाहरण कथन कर, साहित्यिक रस के साथ नये रसों का पुट देकर मानवीकरण के साथ साथ मृतात्मा के कथा प्रणाली से व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करते है। कोहलीजी प्रतीकों उपमानों के साथ मुहावरे, कहावतों का प्रयोग अपने समस्त व्यंग्य सकंलन में करते है। कबीर, तुलसी उक्ति, पौराणिक दृष्टांत कथन एवं अंग्रेजी वाक्य का प्रयोग खुलकर करतें हुए व्यंग्यार्थ को प्रस्तुत करना उनकी खास विशेषता रही है। व्यंग्य के माध्यम से एक विशिष्ट सोच को विकसित करनवालों में पहचान एवं सोद्देश्य प्रभावक व्यंग्य की गंभीर प्रस्तुती की है। इस प्रकार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने अपने व्यंग्य साहित्य इस देश की विभिन्न विसंगतियों पर तीखा प्रहार करने में अग्रणी है। इसी कारण उनका व्यंग्य व्यावहारिक सच के एकदम निकट है। कोहलीजी के व्यंग्य में

भर्हाना अद्भुत शिल्प और नूतन कथ्य का अनुपम समन्वय है। इसलिए डॉ कोहलीजी की पहचान व्यंग्य सर्जक के रूप में है।

२.४.२ हरिशंकर परसाई ः-

हरिशंकर परसाई का जन्म २२ अगस्त, १९२४ में मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले में 'जमानी' गांव में हुआ है। बचपन में ही माँ को खो दिया था और जब अठराह बरस के हो गये की, पिता की छाया भी चली गयी। पाँच भाई-बहनों में सबसे बडे परसाई ने कई नोकरीयाँ पकडी और छोडी और अंत में रचनात्मकता को ही आजिविका का साधन बनाया। सन १९५४ से १९५७ तक वे मासिक 'वसुधा' के प्रधान संपादक रहे। परसाईजी को हिन्दी साहित्य में योगदान के लिए 'पदमश्री', 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' और मध्यप्रदेश सरकार द्वारा स्थापित 'शिखर' सम्मान से पुरस्कृत किया गया। परसाई 'आदम' के नाम से भाकपा के पत्र में नियमित रूप से स्थायी स्तंभ लिखते थे व्यंग्य विधा को हिमालय सी उँचाई प्रदान करनेवाले इस शिखर पुरूष का देहान्त १० अगस्त, १९९५ में हुआ।

हरिशंकर परसाई हिन्दी व्यंग्य साहित्य में सर्वाधिक सशक्त व्यंग्यकार कि भूमिका में अपना स्थान प्रस्थापित कर चुके है। स्वांतत्र्योत्तर युग में कथ्य एवं शिल्प दोनो ही दृष्टि से हिन्दी व्यंग्य को निश्चित दिशा और नई पहचान प्रदान करने में उनका योगदान बडा महत्वपूर्ण रहा है। 'विकलांग श्रध्दा का दौर' के लिए 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार से सम्मानित परसाई जी ने अनेक पत्र-पत्रिकाओं में वर्षो तक स्तभं -लेखन का कार्य किया है। जिसमें भी उनकी व्यंग्यात्मकता दृष्टिगत होती है। उनकी अखबारों में प्रकाशित सभी रचनाएँ वह 'सुनो भाई साधों' में संग्रहित है। हरिशंकर परसाई की अब तक की व्यंग्य रचनाएँ निम्नलिखित है।

१) हँसते है रोते है - १९५१

२) तब की बात और थी - १९५६

३) भूत के पाँव पीछे – १९६१

४) जैसे उनके दिन फिरे – १९६५

५) बेईमानी की परत – १९६५

६) सुना भाई साधो – १९६५

७) पगडण्डियों का जमाना – १९६६

८) सदाचार का तावीज – १९६६

९) निठल्ले की डायरी – १९६८

१०) और अन्त में – १९६८

११) शिकायत मुझे भी है – १९७०

१२) ठिठुरता हुआ गणतंत्र – १९७०

१३) अपनी अपनी बिमारी – १९७२

१४) तिरछी रेखायें – १९७६

१५) वैष्णव की फिसलन – १९७६

१६) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ – १९७६

१७) विकलांग श्रध्दा का दौर – १९८०

१८) प्रतिनिधी व्यंग्य – १९८३

१९) एक लडकी पाँच दिवाने (कहानी संग्रह) – १९७३

२०) रानी नागफणी की (कहानी उपन्यास) – १९६१

२१) काग भगोडा – १९८३

२२) तट की खोज (उपन्यास) ––––

इन आदि परसाईजी की प्रसिध्द व्यंग्य रचनायें है। हर दिन नित्य नई घटनाएँ होती रहती है । नई–नई समस्याएँ उभरती रहती है, उसपर इतना गहराई से विचार करने वाला साहित्यिक कोई विरल ही होता है। परसाई ऐसे ही विरल ही रचनाकार है। परसाईजीने हर

अवसर को पकड के रखा है। यही अच्छे गुण उन्हें व्यंग्यकार बनाने में सहाय्यक बना है। इस संदर्भ में डॉ. बालून्दुशेखर तिवारी ने लिखा है की '' लिखने और पढने से सम्बध्द सभी स्थितियों में प्राप्त विरोधाभास को परसाईने व्यंग्य का निशाना बनाया है। सच तो यह है कि परसाई का व्यंग्य फलक जितना बडा है, उतनी ही वैविध्यपूर्ण उसकी शैली है।''[२२]

परसाई का व्यंग्य पाठक के ह्दय को चुभता हुआ, तीर की भाँती ह्दय– बिधं कर आरपार निकल जाता है। आमतौर पर तो उनकी रचनाएँ उपर से चाहे हास्यापद लगे किन्तु उनमें व्यक्त व्यंग्य सच्चे पाठक को मुग्ध कर देता है। पाठक उसे चिंगम की भाँति मीठा–मीठा चबाता ही रहता है। 'पहला सफेद बाल', 'आँगन में बैगन', 'नीलकंठ', 'मेरी श्रेष्ठ रचनाएँ', 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र', 'बेईमानी की परत', 'सदाचार का तावीज' आदि ऐसी ही रचनाएँ है। जिनमें परसाई ने हल्के –फुल्के व्यंग्य द्वारा विनोद के इंजेक्शन भर–भरकर दिए है, जिसे पाठक गंभीरता से सोचता भी है और मर्मर चबाता रहता है।

परसाईजी का 'व्यंग्य' – दृष्टि यद्यपी उनकी कहानियों और निबन्धे में रही है, किन्तु निबन्धो में वह अधिक रूप से सक्रीय रही है। उनका साहित्यों में व्यंग्य अधिकसा सशक्त दिखाई देता है। 'बेईमानी की परत' नामक निबंध में वे कहते है कि ''कहानी के साथ ही मैं शुरू से निबन्ध भी लिखता रहा हूँ । और यह विधा अपनी प्रकृतिगत स्वच्छंदता तथा व्यापकता के कारण मुझे बहुत अनुकुल भी प्रतीत हुई है।''[२३] स्पष्ट है कि, परसाईजी के व्यंग्य निबंधो का अधिक जुकीला रूप समाज को प्रभावित करता है। परसाई जिस समस्या को उठाते है उनकी एक–एक परत को खोल खोलकर वास्तविकता में बदल देते है। 'निठल्ले के डायरी' में रिश्वतखोर सरकारी अधिकारियों का भंडाफोड करत हुए उसकी पोल को खोलकर पर्दाफाश करते हुए उन्हें बराबर उधेडा है, ''गाली वही दे सकता है जो रोटी खाता है। पैसा खानेवाला सबसे डरता है। जो सरकारी कर्मचारी जितना नम्र होता है, वह उतने ही पैसे खाता है।''[२४]

आज भी सौन्दर्य चेतना पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाववश लुप्त होती जा रही है, जिसपर व्यंग्य करते हुए वे लिखते है, ''अच्छा तो बैगन भी जा सकते है। सुनते ही लेखक के मन को पाला मार जाता है कि, आज सौन्दर्य भावना और कोमलता का नाश हो गया, उसका तो दिवाला पिट गया।''[२५] आज भाषिक सौंदर्य मिटता जा रहा है ।

सुन्दरी भी गुलाब के बदले बैगन को महत्व देती है। सुन्दरीयों की हथेलियों को शोभा नेल पॉलीश जैसी कृत्रिमता ने ली है। परसाई की भाषा पाठक को अपने पास खिंचने में समर्थ है। बोझिल शब्द प्रयोग को उन्होंने अपनी कृतियों में पास आने ही नहीं दिया है। इसी कारण पाठक उनके व्यंग्य साहित्य पढते समय अनुभव करते है, कि परसाई स्वयं उसके साथ बोल रहे है। क्लिष्ट शब्दो से पाण्डित्य का प्रदर्शन करने के पक्ष में वे नही है। रोजाना बोल चाल के शब्दों का प्रयोग कर हिन्दी व्यंग्य साहित्य को सशक्त करने में योगदान दिया है। अंग्रेजी फारसी शब्दों की भरमार है, जैसे ''शान्ति? वॉट डू यू मीन बाइ शान्ति?''[२६]

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य में तीक्ष्णता के लिए उपमाओं का नूतनीकरण हुआ है। 'आई बरखा बहार' की पक्तियों में व्यंग्य की तीक्ष्णता इस प्रकार दृष्टिगत होती है हे हनुमान, ये बादल कैसे उमड रहे है, जैसे बीस गाने पच्चीस नाच, दो हत्या और एक आत्महत्या वाली बाक्स आफिसवाली फिल्म के पहले शो कि भीड उमड रही है। उसी तरह परसाईजी अन्य जगह पर लिखतें है। '' इस कटे पेड पर फिर एक हरी फुनगी फुट आयी है, जैसे संसद के चुनाव का हारा म्युनिसिपल चुनाव में खडा हो गया है।''[२७] आज की राजनीति का वास्तविक चित्रण करने का प्रयास किया गया है ।

इस प्रकार परसाई के व्यंग्य में तीक्ष्णता के लिए उपमाओं का नूतनीकरण हुआ है। 'सुना भाई साधो' के प्रकाशक ने ठीक लिखा है,'' कबीरदास जैसी मस्ती और फक्कडपन लेकर इन व्यंग्य खण्डों में हरिशंकर परसाई के व्यंग्य में तीक्ष्णता सामाजिक, राजनीतिक,

प्रवृत्तियों पर करारा व्यंग्य किया है।''[२८] इस प्रकार कबीर जैसी प्रकटता द्वारा व्यंगय कसने का कार्य किया है ।

समाज और राजनीति में व्याप्त होकर परसाई ने वाणी दी है। 'सदाचार का तावीज' 'दिन का अनशन', 'जैसे उनके दिन फिरे' 'बेताल की सताइसवि कथा' ऐसी रचनाओं के माध्यम से उन्होंने सुधार और आदर्श के नाम पर चलनेवाले छलकपट को उजागर किया है। 'घायल बसंत' में परसाईने प्रतीकात्मक शैली में व्यंग्य किया है। केवल विसंगतियों पर प्रहार कर परसाई चुप नही बैठते उनके कारणों को ढुँढंते है और उनका समाधान भी देते है। प्रथा गरिबी को नियति मानकर चलनेवाला आदर्श परसाई को पसन्द नही है। इसलिए वे सोते आदमी को जगाते है, ''दुनिया के कई समाजों ने लिखी को मिटा दिया है। लिखें मिटती है। आसानी से नही मिटती तो लात मारकर मिटा दी जाती है। इधर कुछ लिखी मिट रही है।''[२९] इस प्रकार सच्चाई खोल देनेवाला साहित्य नष्ट किया जाता है । यह बात सामने आती है ।

परसाईजीने राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सभी धरातल पर व्यंग्य किया है उन्होंने अधिकांश लेखन राजनीतिकपर व्यंग्य किया है। आज कि शक्ति राजनीति है। राजनीति ही मनुष्य को परिचालित करती है। स्वयं परसाई ने इस संदर्भ में कहा है कि, ''जो लेखक राजनीति से पल्ला बचाते है, वे उसमें भी सबसे बडी राजनीति करते है और वे वो कयों देते है?''[३०] वोट देने से ही राजनीति के सभी महत्वपूर्ण मुद्दो को व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है।

कबीर जैसा तीखापन परसाई के व्यंग्य रचनाओं में स्पष्ट रूप में दिखाई देता है। हरिशंकर परसाई का व्यंग्यफलक बहुत विस्तृत और व्यापक है। हमारे जीवन कि और उसके विभिन्न पक्षों की शायद ही कोई विरूपता हो, जो सूक्ष्म दृष्टि और बेलाग स्पष्टवादिता के दर्शन होते है।

समकालीन राजनीति की पैतरेबाजी अखबारों में तो खुब सनसनी पैदा करती है परन्तु उसमें इतना दम नही होता किंचित भी कोई परिवर्तन कर पायें।

''मंत्रिमंडल बदल रहे है पर आदमी की हालत दिन–प्रतिदिन गिरती जाती है। लाश तो वही है, सिर्फ कपडे बदले जाते है।..... देश को लगभग लाभ मान लिया है और आपके बदले हुए मंत्रिमंडल केवल कफन है।''[३१] इस प्रकार आज की राजनीति पर व्यंग्य कसने का प्रयास हुआ है ।

परसाई ने राजनैतिक विसंगतियों में निहीत भ्रष्टाचार, स्वार्थ, महत्वाकांक्षा, अवसरवाद, चरित्रहीनता, भाई–भतीजा वाद, पाखण्ड आदि पर डटकर लिखा है, जो 'पेट का दर्द और देश' 'इतिश्री रिसचार्य,' 'लंका विजय के बाद,' 'हम क्षेत्रे कुरू क्षेत्रे,' 'इतिहास का सबसे बडा जुआ,' 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र,' 'हम बिहार से चुनाव लड रहे है,' 'अकाल उत्सव,' आदि रचनाओं में विशेष तीखापन दिखाई देता है। हरिशंकर परसाईजी के पद्य के साथ–साथ गद्य में कहानी, उपन्यास, निबन्ध, रिपोर्ताज, डायरी, नाटक आदि सभी रचनाओं में सुरक्षित है।

हरिशंकर परसाई का आधुनिक व्यंग्य साहित्य को विकसित करनें में बडा योगदान रहा है, परसाई आधुनिक व्यंग्य के मूलाधार है। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक क्षेत्र की विसंगतियों तथा विद्रूपता से साक्षात्कार करना उनकी रचनाओं का उद्देश्य है। उन्होंने फैटासीं, मिथक, बिम्ब, मानवीकरण का प्रयोग व्यंग्य साहित्य में किया है। इसलिए परसाई को हिन्दी व्यंग्य साहित्य में शलाका पुरुष कहा जाता है।

परसाई कि रचनाओं का सृजन विशिष्ट अनुभव, प्रभाव, प्रेरणा, प्रतिक्रिया आदि से हो जाता है। उनकी भाषा साधना नही, सिध्दी है। परसाईजी सीधी–साधी बात में व्यंग्य का अवकाश भाँप लेते है, और उन्हें व्यंग्य के लिए अछूते विषय मिलते रहे है।

२.४.३. रविन्द्रनाथ त्यागी :–

रविन्द्रनाथ त्यागीजी का जन्म उत्तर प्रदेश के जिला 'बिजनौर' में स्थित 'नहटौर' नामक कस्बे में सितम्बर १९३१, में एक साधारण गरीब परिवार में हुआ था। उन्होंने पाँच–पाँच रूपये की नोकरी की एक–एक रूपये कि दर पर टयूशन भी लेते रहे। भूखे और फटेहाल रहे पर पढना नहीं छोडा। इन स्थितियों से गुजरते हुए प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए.(अर्थशास्त्र) में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। इसके पश्चात वे डिफेन्स एकाऊंटस के लिए चुने गये और वे उसी सेवां में काम करते रहे। उन्होंन सेवा करते–करते भारतवर्ष का काफि भ्रमण किया है और वे बडे–बडे लोगों के संपर्क में रहे है।

रविन्द्रनाथ त्यागी को साहित्य का प्रेम उन्हें बचपन से था। दूष्यंत कुमार, कमलेश्वर और रामावतार चेतना उनके सहयोगी थे। जब प्रयाग में पढते थे तब रघुपति सहाय 'फिराक', 'बच्चन' जगदिश गुप्त और धर्मवीर भारती उनके शिक्षकों में से एक थे। भारतीजी ने उन्हें 'परिमल' का सदस्य बनवाया एवं दिल्ली में वे सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक संस्था भारती के सद्स्य रहें। प्रयाग में ही उनकी सबसे पहली किताब छपी है। वाचस्पती पाठक, प्रकाशचन्द्र गुप्त तथा अमृतराय ने उन्हें बहुत प्रेरित किया। इन बडे साहित्श्याऐं के साथ रहकर त्यागी को अन्दर जो लेखन की इच्छा भी वह फुटकर बाहर आ गई और वह लिखते ही चले गये। इसके बारे में स्वयं त्यागीजी का कथन है, ''इतनी बुरी संगति के कारण मेरे अन्दर जो पिघला हुआ दुःख का लावा था वह कलम के रास्ते बाहर निकलने लगा। बाद में चलकर जो कुछ मैंने लिखा उसका सारा श्रेय वाचस्पति पाठक, प्रकाशचन्द्र गुप्त, अमृतराय व सुरेन्द्रपाल जैसे विशाल ह्दय के व्यक्तियों को जाता है। जिन्होंने इतना प्रोत्साहन दिया की मैं गधे से घोडे की स्थिति में आ गया।''[३२] इस प्रकार संगनि का परिणाम मनुष्य जीवन पर अपने आप पड जाता है ।

रविद्रनाथ त्यागीजी खुद को धुप के धानों का पुराना मरीज कहतें है। कवि से व्यंग्य लेखक कैसे बने इसके सम्बन्ध में त्यागीजी ने लिखा है, उनको (सम्पादकों) दुआएँ दो, हमें

कातिल बना दिया लिखते–लिखते पता चला कि मैं हास्य–व्यंग्य लिख सकता हुँ, मगर सयाने पाठक उदासी की रेखा उसमें भी देखते होंगे।

इससे स्पष्ट होता है की त्यागीजी अपन व्यंग्य लेखक बनने का श्रेय सम्पादकों को देते है।

त्यागीजी का व्यंग्य साहित्य पट बहुत ही विस्तृत है। एक भावूक कवि होनेपर भी उन्होंने हास्य–व्यंग्य गद्य रचनाओं कि जो भेट हिन्दी साहित्य को दी है, उन संकलनों की सूची इस तरह से है।

१) खुली धूप में नांव पर – १९६३

२) भित्ती – चित्र – १९६६

३) मल्लीनाथ की परम्परा – १९६९

४) कृष्ण वाहन की कथा – १९७१

५) देवदार के पेड – १९७३

६) शोकसभा – १९७४

७) अतिथिकक्ष – १९७७

८) फूलोवाले कॅक्टस – १९७८

९) सुन्दर कली – १९७८

१०) ऋतु वर्णन – १९७९

११) भद्र पुरूष – १९८०

१२) इस देश के लोग – १९८२

१३) पदयात्रा – १९८६

रविन्द्रनाथ त्यागी का लेखन कला से ऐसी व्यंग्य रचनाओं का निकलना स्वाभाविक था। पर एक साहित्य की बात स्पष्ट होती है कि, उनके व्यंग्य हरिशंकर परसाई कि तरह व्यंग्य के कठोर प्रहार नहीं करते, बल्कि चुटकियाँ काटते है। कमियों को बताते समय वे

मनोरंजन भी करते है। इसका अर्थ कदापि यह नहीं कि, उन्होंने परिस्थितियों से प्रस्तुत 'धरिया हास्य' की उन्होंने सृष्टि कि है। अपितु यह की अपने अभिव्यक्ती कौशल के आधार पर उन्होंने सरल एवं शिष्ट हास्य का ही सृजन किया है। जैसे आत्म व्यंग्य में वे लिखते है, ''भाईयों और बहनों अब मैं वाकई मर रहा हूँ । मैं एक साधारण इंसान था जो अखबारों के लिये हास्य लेख इस कारण लिखता था कि, वे मेरी कविता नही छापते थे।''[३३] इस प्रकार लेखकों को कितनी समस्याओं का सामना करना पडता है । यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है ।

त्यागीजी के कुछ राजनीति और व्यंग्य का बडा गहरा संबंध है। देश का प्रशासन राजनीतिज्ञों के हाथों में होता है तथा इस प्रशासन और राजनीतिक के मध्य अनेक क्षेत्र आते है। राजनीतिक ही जब अनाचारों से भर जाती है, तो वह अनाचार अन्य क्षेत्रों में अपने आप उतर जाता है। इस तरह फैलती जानेवाली राजनीतिक विसंगतियाँ व्यंग्य साहित्य को समृध्द बनाती है। त्यागीजी ने भी अपने कई व्यंग्य साहित्य को पृष्ठभूमि को केन्द्र बनाया है।

जैसे प्रशासन और सरकार पर व्यंग्य करते हुए 'महीनों में महीना मार्च' का यह शासन के वित्तिय वर्ष के खत्म होनेपर व्यंग्य कसते हुए लिखा है कि, ''वैसे देखा जाये तो वह महीना बसंत का होता है, होली जलती है, फाग गाया जाता है, ऐसे समय में सरकार का अकाऊंट खत्म करने का धन्दा चलता है, यह कितना गलत है यह पता नही वित्तिय वर्ष कि समाप्ति के लिए सरकार ने इसी महीने को क्यों चुना है? क्या अकाऊण्ट पूरा करके खत्म करना जरूरी है? सालभर के सारे अधूरे बिल मार्च में ही पुरे किये जाते है। दफ्तरों में ओवर टाईम चलता है, और बाकी जो कुछ होना चाहिए वह भी बदस्तुर होता है।''[३४] इस प्रकार मार्च की समाप्ति को लेकर व्यंग्य कसने का प्रयास किया गया है।

रविन्द्रनाथ त्यागीजी ने वित्तिय वर्ष को लेकर प्रशासन और सरकार की पोल खोलकर मार्च महिनों में क्या हो जाता है, इसे व्यंग्य के माध्यम से राजनीतिक एवं प्रशासनीय अफसर पर खुलकर प्रहार किया जो त्यागीजी कि विशेषता है।

व्यंग्यकार त्यागीजी की तिखी दृष्टि से भला वह कैसे बचता? त्यागीजी ने इसका परर्दाफाश किया है कि, कितने ही लोग कुछ भी लिखकर स्वंय को कवि मान लेते है। त्यागीजी ऐसें कवि को लक्ष्यकर कहतें है, ''हिन्दी के कुछ कवि वाकई ऐसे है, जिनकी वाणी सुनते ही जिंदा क्या मुर्दा लोग भी इलाका छोडकर चले जाये।''[३५] इस प्रकार स्वयं की आत्मप्रौढ करनेवाले कवियों की पोल खोली है ।

अपनी लेखनी के तीर से उन्होंने किसी को नहीं छोडा है। वह सब क्षेत्रो में जैसे कि, राजनीतिक, सामाजिक, सास्कृंतिक, शिक्षा, धर्म, प्रशासन एवं साहित्य सभी को निशाना बनाते हुए कवि के उपर आघात किये है। उस प्रकार त्यागीजी के व्यंग्य साहित्य में व्याप्त सभी विसंगतियों पर प्रहार किये है।

त्यागीजी के प्रथम 'व्यंग्य-सग्रंह' की काफी प्रशंसा करते हुए उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने लिखा है कि 'खुली धुप में नावं पर' की कहानियाँ अपनी अतिशयोक्ति एवं किंचित अतिरंजना के बावजूद अच्छी लगती है।

भित्ती चित्र में विषय कि दृष्टि से वैविध्य है। संग्रह में २० व्यंग्य रचनाएँ है, जो साहित्य धर्म, कला, समाज, शिकार, वाणिज्य, प्रेम और विवाह आख्यायिका तथा स्मरण पर लिखी है। इन रचनाओं में रस, मधुरतापूर्ण त्यागीजी का विषय ज्ञान, परिष्कृत, हास्य, कथा, रस, मधुरातापूर्ण कटाक्ष, आत्म व्यंग्य जैसी विशेषताएँ देखी जा सकती है। 'मल्लीनाथ की परम्परा' २८ व्यंग्य रचनाएँ है जो साहित्य और सांस्कृतिक, व्यक्ति और समाज, रहस्य एवं रोमांच तथा व्यक्तिगत शीर्षकों से प्रकाशित की गयी है। इस संग्रह में २० व्यंग्य-रचनाएँ है, 'सखी बसन्त आया', 'राष्ट्रिय किडे का चुनाव', 'एक बदलसा हुआ नाटक' आदि श्रेष्ठ रचनाएँ है।

हरिशंकर परसाई त्यागीजी की व्यंग्य रचनाओं के बारे में लिखते है, ''मैं त्यागीजी को एक श्रेष्ठ कवि और एक श्रेष्ठ व्यंग्यकार मानता हूँ । उनकी विशिष्टता का कारण यह भी

है कि, हमारे जो पुराने क्लासिक्स है उनमें उनकी गति है।''[३६] इस प्रकार परसाई ने त्यागीजी रचनाओं में चित्रित पुराने कलासिकस को महत्वपूर्ण स्थान दिया है ।

डॉ. रणवीर रांग्रा त्यागीजी के बारे में लिखते है कि, ''हिन्दी में हास्य – व्यंग्य साहित्य को उपेक्षा के बिन्दु से उठाकर सामान्य स्थान पर ले जानेवाले लेखकों में रविन्द्रनाथ त्यागी का अपना अलग स्थान है।''[३७] इस प्रकार व्यंग्य को सामान्य स्तर पर लाने का काम इन्होंने किया है ।

त्यागीजी के व्यंग्य को सक्षमता प्रदान करनेवाली उनकी भाषा है। आवश्यकतानुसार उर्दू, संस्कृत, अंग्रेजी शब्दो का प्रयोग वे बेझिझक करते है जैसे हुजूर, ट्रान्झिस्टर आदि कभी कभी कोई कविता कि पंक्ति, कोई शेरो शायरी कि पंक्तियाँ भी उनके व्यंग्य साहित्य में सहाय्यक बनती है। श्रीलाल शुक्ल ने रविन्द्रनाथ त्यागी पर एक टिप्पणी देते हुए कहा है कि, ''व्यंग्यकार कि हैसियत से रविन्द्रनाथ त्यागी उसी कोटि के लेखकों में आते है, जो व्यंग्य को केवल चुटकी देकर हँसने का साधन नहीं मानते– जो उसकी प्रौढत्तर और गहनत्तर सम्भावनाओं से भी परिचित है।''[३८] इस प्रकार व्यंग्य समाज की वास्तविकता पर अंगुली निर्देश करने का काम करता है,

त्यागी का व्यंग्य निर्माण, विडम्बना, वक्रोक्ति, बिट, ताना, हास्य आदि के तत्वों से हुआ है। विसंगति पर आधारित कोई बात, इस अंदाज के साथ की जाती है कि ऊपर से हंसाने वाली बात भी दर्द–सी चुभती हुई महसूस होने लगती है। मीठी कटार की मार इनके व्यंग्य कि खास विशेषता है। अफसर तथा कर्मचारी के बीच किस प्रकार का प्रेमभाव रहता है इस ओर त्यागीजी ने संकेत किया है। ''हर अफसर का एक मुर्गा होता है। वह अफसर की तरफ से बाँग देता है, अफसर को अंडे और मुर्गा लाकर देता है और वक्त जरूरत कि तरफ से बाकी लोगों को चोंचे भी लगाता है।''[३९] इस प्रकार दफ्तरों में व्याप्त भ्रष्टाचार को उजागर किया है ।

व्यंग्य साहित्य के क्षेत्र में व्याप्त विसंगतियों का भी त्यागीजी ने पर्दाफाश किया है। स्वयं को कवि सिध्द कराने के लिए वे अपनी कविताओं को पढने में जरा सा भी हिचकते नही।

रविन्द्रनाथ त्यागी आधुनिक हिन्दी व्यंग्य के प्रमुख हस्ताक्षर है। उन्होंन लगभग ३०० से अधिक व्यंग्य रचनाएँ लिखी है। व्यंग्य में रोचकता लाने का अद्‌भूत कौशल्य उनमें दिखाई देता है। त्यागीजी की भाषा में विनोद, रूप –विधान, उध्दारण–वक्रता है, जिससे व्यंग्य में मनोहरिता एवंम सहजता आ गयी है।

त्यागीजी मूलतः कवि रहे है, 'आषाढ के मेघ,' 'भाद्रपद की सांझ,' 'शरद की पुर्णिमा,' 'पलाश के दहकते फूल,' और 'कम उम्र की लडकीयों के ओंठ' त्यागी के पाँच काव्य संकलन भी है। उनका गद्य साहित्य व्यंग्य के दृष्टि से अधिक प्रसिध्द है। एक बार डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल ने पूछा था कि ''तुम्हारे लेख में इतना रोना क्यों? इस पर बडे अफसोस के साथ त्यागीजी ने कहा कि, ''काश उन्हें मेरे दुःखों का पता होता।'' इन सब बातो से उनके कवि व्यक्तित्व और लेखकीय व्यक्तित्व से हम परिचित हो जाते है।''[४०] इस प्रकार लेखक का व्यक्तित उनकी कृतियों में स्पष्ट झलकता है ।

साहित्य रचनाओं एवं प्रंसगानुकूल कथ्य रचनाओं की विषय प्रचुरता, विभिन्न भाषा के कवियों, लेखकों उदाहरण, सूक्ष्मता, रोचकता, मनोरंजन, हास्य, व्यंग्य की समरसता, मानवी मूल्यों की स्थापना विसंगतियों का जीवन्त उद्‌घाटन आदि विशेषताएँ त्यागीजी के साहित्य में दृष्टिगोचर होती है।

उनकी रचना व्यंग्य रचनाओं में स्वयं उनके साथ उनका परिवार है। उनके मित्र–शत्रू, प्रेमी–प्रेमिका, नौकर–चाकर आदि के साथ अफसर और नेता, मंत्री और विपक्ष भी है। प्रजातंत्र और राजतंत्र, भ्रष्टाचार एवं रिश्वत, महंगाई तथा बेकारी, मूल्याधिनता, विघटन, कर्मशीलता, अकर्मण्यता, रूढियाँ और अन्धविश्वास, साहित्य प्रकृति, शिक्षा और शिक्षा जगत, आलोचना और शोध कार्य, परिवार नियोजन, समाजवाद, नौकरशाही, जनता आदि

को त्यागीजी ने उठाया है। इस प्रकार त्यागी अपने साथ व्यंग्य का एक पूरा संसार समेटे हुए है। यह संसार उन्हें व्यंग्य का एक मुहावरा देता है, परसाई और जोशी से भिन्न व्यंग्य को नया और सार्थक रूप देता है। त्यागीजी हिन्दी के उन व्यंग्यकारों में से एक है, जिन्होंने हिन्दी व्यंग्य को संस्कार दिया है, एक सन्माननीय धरातल पर प्रतिष्ठीत करके नयी उर्जा नयी शक्ती दी है।

२.४.४ बरसानेलाल चतुर्वेदी :-

बरसानेलाल चतुर्वेदी का जन्म १५ अगस्त, १९२१ में हुआ है। बरसानेलाल चतुर्वेदी प्रमुख व्यंग्यकारों की सूची में अग्रणी है। आप केद्रींय विद्यालय के शिक्षणाधिकारी के पद पर कार्यरत रहे। आप हिन्दी साहित्य में हास्य पर पीएच.डी. एवं 'आधुनिक काम में व्यंग्य,' विषय पर डी.लिट. की उपाधि प्राप्त कर चुके है। आप पिछले ३५ सालों से व्यंग्य साहित्य की साधना से जुडे हुए है। चतुर्वेदीजीने अन्तर्राष्ट्रीय काव्य समारोह में भाग लेकर युगोस्लाव्हीया, जर्मनी, फ्रान्स, रूस, लंडन आदि देशों का भ्रमण किया है।

१९७० में आपको राष्ट्रपती पुरस्कारसे सन्मानित किया है। सामाजिक, राजनीति, शिक्षाजगत आदि जहां भी असंगतियाँ दिखाई दि वहाँ उनकी व्यंग्य दृष्टिने मार्मिक चोट की है। उनके व्यंग्य संकलन सूची निम्नानुसार है।

१) महामति चाणक्य राजदुत बने – १९६२

२) भोला पंडित की बैठक – १९७५

३) बुरे फँसे – १९७५

४) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ – १९७७

५) टालु मिक्सर – १९७८

६) मिस्टर चोखेलाल – १९८०

७) मुसीबत है। – १९८३

८) नेताओं की नुमाईश – १९८३

९) साली वी.आय.पी. की – १९८५

१०) प से पगडी – १९८७

११) चौबेजी की डायरी – १९८९

आदि ग्रंथो में चतुर्वेदीजी के व्यंग्यात्मक साहित्य संग्रहीत है।

डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारी के शब्दों में ''उनके व्यंग्य साहित्य में मनहुस चेहरा बनाएँ रखनेवालों के लिए उपयोगी है। व्यंग्य कि उद्देश्य योजना उनके निबन्धों में मिलती है।''[४१] इस प्रकार अपने इच्छानुसार व्यंग्य का प्रयोग लेखक कर देता है ।

तिवारीजी ने स्पष्ट किया है कि, चतुर्वेदीजी ने सोद्देश्यपूर्ण व्यंग्य साहित्य लिखे है। वे अनाचार, अत्याचार, विकृति पैदा करनेवालों की पोल खोलने में उपयोगी है। व्यंग्य विसंगति को दिखाने तथा दोषी को तिलमिला देने के उद्देश्य से ही लिखा गया है।

व्यंग्य साहित्य में दर्शनशास्त्र का प्रयोग कर व्यंग्य निर्मित करना चतुर्वेदीजी कि विशेषता है। ''माया और ब्रह्म को जैसे अलग करना कठिन है उसी प्रकार दूधवाले के साथ दूध से पानी को अलग करना कठिन है।''[४२]

दर्शनशास्त्र का प्रयोग करके व्यंग्य निर्मित करता यह भी चतुर्वेदीजी कि विशेषता है। जिस से उनका व्यंग्य अधिक मात्रा में सोद्देश्य एवं रोचक बन गया है।

बरसानेलाल चतुर्वेदी अपने व्यंग्य में शैक्षिणीक क्षेत्र का भ्रष्टाचार, शिक्षा का पतन, अकार्यक्षम प्रशासन, उपाधि की दुरावस्था, छात्रों की प्रवृत्ति आदि कई विषयों का पर्दाफाश करते हुये शिक्षा नीती पर तिखा व्यंग्य किया है, ''कई, चौदह कॅरट के विद्यालय है जिनसे पाच रूपया देकर घर बैठे 'साहित्याचार्य' जैसी श्रेष्ठ उपाधी दी जाती है।''[४३] यह एक करूणामयी स्थिति आज शिक्षा अवस्था में हो गयी है। इसी ओर संकेत किया गया है।

उन्होंने अपनी रचनाओं में समाज के विविध पक्षों पर मार्मिक चोट करते हुए मार्मिक सत्य उद्घाटित किया है । शायद ही ऐसा कोई कोना हो जहाँ उनकी नजर न गयी हो। वे

सामाजिक विसंगति को दर्शाते है, जैसे ''उनके कलम में ताकत है, बडे से बडे आदमी को कर्जदार बनाने की। वह दिनभर में करोडो का हिसाब करता है, किन्तु अफसोस जब वह अपने घर लौटता है, तो उसके जेब में फुटी कौडी भी नहीं मिलती।''[४४] इस प्रकार समाज की वास्तविकआर्थिक स्थिति पर विचार किया है ।

इस प्रकार सामाजिक विसंगति को दिखाते हुए वे उस पर प्रहार करते है।
व्यंग्य निर्मित करना चतुर्वेदीजी की विशेषता है, जैसे सामान्य देहाती लोगों की देहाती भाषा में वे कहते है। ''सो–दो सौ नाम में निगाह दऊँ जो बडे–बडे पदन पर उटे भये है और जिनके शोध प्रबंध कु या तो किराये पर लिखायो गयो का उनको चमचों ने लिखी है।''[४५] सामान्य देहाती लोगो की बोली भाषा के साथ–साथ आपने मथुरा, वृन्दावन, आग्रा के आसपास के इलाके में बोली जानेवाली प्रादेशिक ब्रजभाषा का व्यंग्य साहित्य रूप में प्रयोग किया है।

संक्षेप रूप से चतुर्वेदीजी के व्यंग्य साहित्य में वैदग्ध एवं वक्रोक्ति प्राप्त होती है। उन्होंने संवाद या कथाकथन द्वारा व्यंग्य निर्मिती में योगदान दिया है।

चतुर्वेदीजी की विशेषता है कि, गपशप करते हुए पाठकों को आत्मविश्वास में लेकर मित्र सदृश्य सलाह देकर बातों में व्यंग्य कसते है। वे प्रतीको, उपमानों, अलंकारों, मुहावरे–कहावतें, एवं प्रश्नार्थक शैली में व्यंग्य साहित्य कि निर्मिती करते है।

भाषा के सौदर्य के लिये इन्होंने सबको अपनाया है। फिर भी स्वयं चतुर्वेदीजी ने भाषा के सन्दर्भ में कहा है, ''जो कुछ है वह भाषा है। भाषा सत्यम जगत मिथ्या। इस अर्थ आदि व्यर्थ ।''[४६] इस प्रकार भाषा ही सबकुछ सत्य कहती है ।

अंतः चतुर्वेदीजी के व्यंग्य से भाषा भी नही छूटी उन्होंने अपनी बोली से व्यंग्य का दर्जा प्राप्त किया है।

अंतिम रूप में कहा जा सकता है कि, रहिम, सूरदास आदि के प्राचीन छन्दों का अर्वाचित पथ का उपयोग व्यंग्य निर्माण में कुशलता से किया है। तथा अंग्रेजी,उर्दू, संस्कृत,

फारशी आदि भाषा का व्यंग्य, निर्मिती के लिए वाक्यों मे प्रयोग किया है। यह विशेषता बरसानेलाल चतुर्वेदी की है। उन्होंने अन्य साहित्यिक व्यंग्य की तुलना में व्यंग्य साहित्य विधा को अधिक समृध्द किया है। चतुर्वेदीजी ने साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, पत्रिकांओं मे व्यंग्य साहित्य लिखकर सामाजिक विसंगतियों पर प्रहार किया है। एवं राजनीतिक साहित्यिक, शैक्षिक सभी प्रकार कि विसंगतियों पर खुलकर आघात किया है।

२.४.५. श्रीलाल शुक्ल :–

हिन्दी जगत के सुपरिचित व्यंग्य साहित्यकार श्रीलाल शुक्ल का जन्म ३१ दिसंबर, १९२५ में लखनऊ में मोहनलाल गंज कस्बे के निकटवर्ती ग्राम 'अंतरोली' में एक सुसंस्कृत कृषक परिवार में हुआ । उनके हास्य–व्यंग्य, निबंध, सामान्य आलेख, कहानियाँ तथा उपन्यास अशं ज्ञानोदय, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, नई दुनिया, सारिका आदि पत्र–पत्रिकांओं में प्रकाशित हुए है। १९७० में 'रागदरबारी' व्यंग्य उपन्यास पर साहित्य अकादमी पुरस्कार से सन्मानित किया गया है। हिन्दी जगत के सुपरिचित व्यंग्यकार तथा उपन्यास पर श्रीलाल शुक्ल के निम्मलिखित व्यंग्य संकलन है।

१) अंगद का पाँव – १९५८

२) उमराव नगर में कुछ दिन – १९५५

३) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ – १९७८

४) यहाँ वहाँ – १९९०

५) कुछ जमीन पर कुछ हवा में – १९९०

हिन्दी व्यंग्य साहित्य में व्यंग्य का प्रयोग कर उसे सशक्त बनाने में श्रीमान शुक्लजी का नाम उल्लेखनीय है। डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारीजी ने शुक्लजी के व्यंग्य रचनाओं के बारे में लिखा है कि ''श्रीलाल शुक्ला जी के व्यंग्य रचनाओं में मनोरंजन की भावना के स्थान पर

परिस्कार मूलक व्यंग्यबोध अधिक जागृत दिखता है।''[४७] इस प्रकार मनोरंजन के धरातळ से उपर उठकर व्यंग्य का प्रयोग किया जाता है ।

शुक्लाजी के व्यंग्य संकलन में परिस्कारमूल्य व्यंग्य अधिक मात्रा में मिलता है, जो समाज में जागृति कि क्षमता रखता है। श्रीलाल शुक्लजी के व्यंग्य साहित्य में राजनीति, नेता, संस्कृति, प्रशासन, साहित्य, शिक्षा, नोकरी, दूरदर्शन, समाचारपत्र, युवावर्ग, अमिरी–गरीबी आदि विसंगतियों को रेखांकित किया गया है।

श्रीलाल शुक्लजी कि यह विशेषता है कि वे किसी एक विषय को लेकर प्रहार करते समय ही अनेकानेक विषयोंपर अप्रत्यक्षतः व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करते है जैसे ''आज की परिक्षायें छात्रों के लिये भले ही बेकार हो मास्टरों के लिए बडे काम की है।''[४८] यहाँ परिक्षा को लेकर छात्र एवं मास्टर कि बखिया उधेडने का कार्य शुक्लजी ने किया है। परिक्षा को लेकर छात्र तथा मास्टर दोनों को उन्होंने लक्ष्य किया है।

श्रीलाल शुक्लजी के मत से मनुष्य से प्राणि आज अधिक वफादार है। कुत्ते को उपदेश देनेवाली प्रणाली पर व्यंग्य करते हुए आप लिखते है, ''बडे–बडे दफ्तरों, थानों में और कोतवालीयों में जो कुछ भी होता रहा है। तुम चोरो के सामने आन कायम रखना। लंबे चौडे फर्मो में और मालगोदामों के चौकीदार और कारिंदे भले ही हाथ–पैर फेंकते रहे, पर तुम्हे जिस चीज की हिफाजत के लिए रखा गया है, उसपर कभी मुहँ मत मारना।''[४९] इस प्रकार सभी ओर लाभ सोचनेवाले लोगों पर प्रकाश डाला गया है ।

यहाँ शुक्ला जी कुत्ते के पिल्ले को दिया हुआ उपदेश मानव को उद्देशित है। इन्द्रनाथ मदानजी ने श्रीलाल शुक्ल के बारे में कहा है कि ''श्रीलाल शुक्ल सामाजिक, राजनीतिक, असंगतियों, विकृतीयों पर सीधी–तिरछी चोट करते है। इनके व्यंग्य का स्वरूप भी मंजा हुआ है।''[५०]

श्रीलाल शुक्ल जी ने अपने साहित्य के माध्यम से कला, धर्म, संस्कृति इतिहास, राजनीतिक आदि क्षेत्र कि पाठक के सामने लाया है और उन्हें जागृत करने का प्रयास किया

है। इन क्षेत्रो की विकृतियों की मानो वे शल्य चिकित्सा कर इनमें सुधार लाना चाहतें है। गिरते हुए समाज को संभालकर उठने उठाने कि वे प्रेरणा देते है।

'रागदरबारी' व्यंग्य कि दृष्टि से मुक्त है। शुक्ला जीने पात्रानुकूल भाषा, ग्राम्य लोकभाषा का प्रयोग कर व्यंग्यात्मक शैली का सुंदर प्रयोग किया है। देहाती और शहराती संस्कृति का द्वंद्व स्थानीय रंगो का प्रयोग, आंशिक प्रकृति वर्णन सपरिवेश को चित्रित किया है।

प्रस्तुत संक्षेप में व्यंग्यार्थ का सजीवता निर्माण करना समाज और साहित्य की विविध विसंगतियों के प्रति एक सामान्य दर्शक की भाँति देखकर उसका पर्दाफाश करती है । नकारात्मकता में व्यंग्यार्थ प्रस्तृत करना मानवीकरणद्वारा व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, उपमाओं, प्रतिकों, उपमानों का व्यंग्यार्थ में उपयोग करना, अंग्रेजी, संस्कृत, फारशी, उर्दू शब्दों का प्रयोग व्यंग्य साहित्य में करना यह विशेषताएँ श्रीलाल शुक्लजी के साहित्य में विद्यमान है। इन्हीं विशेषताओं के कारण हिन्दी व्यंग्य साहित्य में श्रीलाल शुक्लजी का नाम उल्लेखनीय है।

२.४.६. लतीफ घोंघी :–

व्यंग्यकार लतीफ घोंघी का जन्म २८ सितंबर, १९३५ में हुआ। लतीफ घोंघी बी. ए. एल.एल.बी. है। वकालत के साथ–साथ स्वतंत्र लेखन किया है। इनकी पहली रचना 'नोंक–झोंक' आगरा में सन १९६२ में प्रकाशित हुई लतिफ घोंघी ने विविध क्षेत्रों की विसंगतियों पर कसकर व्यंग्य किये है। और पाठकों को उनपर सोचने के पर मजबुर किया है। पत्र–पत्रिकांओं में भी उनके व्यंग्य प्रकाशित हुए है। 'तिकोने चेहरे' के उपरांत आज तक व्यंग्य लेखन में व्यस्त घोंघीजी का साहित्य पर्याप्त विस्तृत है। घोघींजी की कुछ रचनायें गुजराती, पंजाबी, मराठी भाषा में अनुदित हुई है। उनकी संपदा निम्नानुसार है।

१) तिकोने चेहरे – १९६५

२) उडते उल्लु के पंख – १९६८

३) मृतक से क्षमा याचना सहित – १९७१

४) तीसरे बंदर की कथा – १९७७

५) बिमार न होने का दुःख – १९७७

६) संकटलाल जिदांबाद – १९७८

७) बब्बुमियाँ कब्रस्तान में – १९७९

८) जूते का दर्द – १९८०

९) किस्सा दाढी का – १९८०

१०) मूर्दानामा – १९८४

११) चोरी न होने का दुःख – १९८४

१२) मेरी मौत के बाद – १९८४

१३) सोने का अंडा – १९८४

१४) बुध्दिजीवि की चपलें – १९८५

१५) बधाईयों के देश में – १९८६

१६) लाटरी की तिकीट – १९८६

१७) क्षमा करना हम दुःखी है। – १९८६

१८) सडे हुए दाँत – १९८७

१९) व्यंग्य की जुगलबंदी – १९८७

२०) बुध्दिमानों से बचिएँ – १९८८

२१) टूटी टाँग पर चिन्तन – १९९२

२२) नीर क्षीर – १९९२

२३) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ ---

इसी तरह इसके अलावा व्यंग्य प्रसंग, खबरदार व्यंग्य, मंत्री हो जाने का सपना, व्यंग्य चरित्रम आदि व्यंग्य संग्रह नौवे दशक में प्रकाशित हुए है।

घोंघीजी अपनी सहज शैली और आम आदमी की भाषा में बात करते है। इस कारण पाठकों का वर्ग उन्हें चाहनेवाला है। उनका व्यंग्य बेहद सहजता से मर्म पर चोट करता है क विसंगतियों को पकडने कि सूक्ष्म दृष्टि उनके पास है। अधिकांश रचनाएँ संवाद शैली में होने के कारण पठनीयता बनाए रखता है।

लतीफ घोंघी जी के व्यंग्य साहित्य में विषय वैविध्यता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। आपने राजनीती, सरकारी नोकरी, प्रशासन, साहित्यकार, दोस्ती, दिखावा, संगीतकार, चित्रकला, रिश्वत, सच–झुठ, चुनाव, रिश्वतखोरी आदि विषयों को अनोखी शैली में व्यक्त किया है। उन्होंने व्यंग्य को साहित्य में सम्माननीय स्थान देने में अपना योगदान दिया है।

रविन्द्रनाथ त्यागी प्रभावित होकर लतीफ घोंघीजी के बारे में कहते है, ''हिन्दी में हास्य व्यंग्य की उपेक्षा के बिन्दू से उठाकर उसे समृध्द विधा बनाने की दशा में जिन गिने चुने लेखको ने काम किया है, उनमें लतीफ घोंघी का महत्वपूर्ण स्थान है। उनका हास्य बडा निश्चल और स्वाभाविक है और उनका व्यंग्य बेहद तीखा एवं मर्मांतक चोट करनेवाला है।''[५१]

त्यागीजी कहते है कि, अपनी अनोखी शैली के कारण व्यंग्य को एक समृध्द विधा बनाने में लतीफ घोंघीजी का बडा योगदान है।

लतीफ घोंघीजी कि व्यवहार कुशलता भिन्न –भिन्न संदर्भो में प्रतिफलित हुई है। वे लिखते है, ''अस्पताल वह स्थल है जहाँ भारतीय मरीजों को जीवन और मृत्यु के साथ संघर्ष करने का सुनहरा अवसर प्राप्त होता है। इससे भले ही कोई लाभ हो या न हो, लेकीन आदमी की संघर्ष शक्ती बढती है।''[५२] घोंघीजी असंगति की वास्तविकता का बोधमात्र है। घोंघीजी की व्यंग्य रचनाओं में विवरणात्मक शैली प्रचुर मात्रा में मिलती है। अस्पताल की विसंगतियों को यहाँ दृष्टिगोचर किया गया है।

लतिफ घोंघीजीने आम आदमी के प्रति सहानुभूती दिखाई है। जिसे इन्होंने इस प्रकार स्पष्ट किया है, ''अपने देश में बजट और पतझड आगे पिछे आतें है। कभी ऐसा होता है कि उधर वित्त मंत्री ने नया टॅक्स लगाया, और इधर पतझड दे दरखत ने कहा अबे आये... संभल जा तेरा बाप आ गया.... साले मरियोमेट करके धर दूँगा''[५३] बढती हुई मंहगाई के कारण आम आदमी का जीवन कितना दुष्कर हो जाता है। इसे यहाँ स्पष्ट किया है।

नकारात्मक शैली में व्यंग्य प्रस्तुत करना, पाठकों को आत्मविश्वास में लेकर बातुनी धारा में व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, उचित, सशक्त, अर्थपुर्ण, चमत्कृत अलंकारिक शब्दों का प्रयोग कर व्यंग्यार्थ प्रस्तृत करना, व्यंग्य को मनोरंजन के रूप में प्रयुक्त होनेवाले, अरबी, फारशी, अंग्रेजी, उर्दू, शब्दों का प्रयोग करना यह घोंघीजी कि अनोखी विशेषताएँ है। इस प्रकार हिन्दी व्यंग्य साहित्य कि वृध्दि करनें में उनका बडा योगदान है।

२.४.७. डॉ. बालुन्देश्वर तिवारी :–

डॉ. बालुन्देश्वर तिवारी का जन्म २१ अक्तूबर, १९४८ में हुआ। सन १९७५ में 'हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर ' हास्य और व्यंग्य पर पीएच.डी. १९९३ में 'हिन्दी व्यंग्य लेखन की शैली वैज्ञानिक विश्लेषण पर डी.लिट. उपाधि प्राप्त कि है। राँची विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्रोफेसर, संपादक, व्यंग्यकार, कवि, एकांकिकार, वक्ता, मित्र एवं गुरू के रूप में तिवारी का व्यक्तीमत्व है। इनके निर्देशन में साँठ से अधिक हिन्दी शोध प्रबंधो पर काम हुआ है। वे कई शासकीय एवं साहित्यिक संस्थाओं से सम्मानित हुए है। डॉ. बालुन्देश्वर तिवारी समीक्षा और सृजन का एक साथ छूनेवाली प्रतिभा के धनी है। शास्त्र और अवतार के धरातल पर हिन्दी का व्यंग्य साहित्य आज जिन लोंगो के कारण स्थापित हुआ है, उनके बीच बालुन्देश्वर तिवारी का नाम आता है। वे व्यंग्य के आचार्य है। वे व्यंग्य के आलोचक भी

है। इसी विशेषता को ध्यान में रखते हुए उन्हें आचार्य व्यंग्यकार कहा जा सकता है। व्यंग्यशिल्पी तिवारी ने १९७६ में व्यंग्य त्रैमासिक

'अभीक' का सम्पादन किया।

इनकी व्यंग्य से जुडी निम्नांकित प्रकाशित कृतियाँ है।

१) रिसर्च गाथा	– १९७९
२) बिना यात्रा की यात्रा	– १९८०
३) बानगी	– १९८०
४) किरायेदार का साक्षात्कार	– १९८५
५) व्यंग्य हि व्यंग्य (संपा.)	– १९८५
६) मेरी प्रिय व्यंग्य रचनाएँ	– १९८८
७) क्रिकेट किर्तन (संपा.)	– १९८८
८) इक्कीसवीं सदी में व्यंग्यकार (संपा.)	– १९८९

तिवारीजी की रचना संसार बहु–आयामी और बहुढंगी है। जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहाँ व्यंग्यकार कि नजर न गयी हो। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक आदि क्षेत्र में व्याप्त विसंगतियों कि है। युनिवर्सिटी के हिन्दी विभाग में सेवारत होने के कारण यह माहौल उनमें गहराई से प्राप्त है।

डॉ. शामसुन्दर घोष ने तिवारीजी के व्यंग्य कर्म को लेकर लिखा है। ''बालुन्देश्वर तिवारी फर्राटेदार व्यंग्य लिखतें है क फर्राटेदार से मेरा मतलब वे तेजी से लिखते है। और उसमें सहजता भी होती है। वे अपनी परिचित दुनिया पर ही नजर डालते है। वे व्यंग्य लेखन कि बनावट और दिखावट भरे परिवेश में सच को पकडने कि जोखिम भरी कोशिश करते है । ''[५४] इस प्रकार वे सच्चाई को व्यक्त करने में विश्वास करते है ।

यह तिवारीजी बस कि खचाखच भीड को लेकर लिखते है कि, ''रूस और अमरीका ने भी अभी तक बसों के मामले में ऐसा विकास नही किया है कि, इन्सान बस के

अन्दर ही नही, तो बस के उपर बैठकर सफर करे।''[५५] इस प्रकार विकास यात्रा पर भी वे लिखते है ।

बस में अन्दर बैठकर आना–जाना चाहिए लेकिन हम लोगों ने विकास इतना किया है कि, बस के उपर बैठकर भी इतना आना जाना करतें है वास्तव में एक अच्छे व्यंग्यकार कि शक्ती इन पंक्तियों द्वारा दिखाई देती है।

शिक्षा क्षेत्र पर व्यंग्य करते हुए हिन्दी कि पीएच.डी. उपाधि पर तिवारी लिखतें है, ''हिन्दी साहित्य को विषय मानकर एम.ए. करनेवाले हर प्राणि का यह परम धर्म है कि एम.ए. कर लेने के बाद वह पीएच.डी. करे। हालत यह है कि छात्रगण एम.ए. करते ही घास खोदना शुरू कर देते है।''[५६] वे कहते है रिसर्च करने के लिए गाईड के पास ऐसे छात्रो कि भीड लगी रहती है जो रिसर्च के लिए योग्य भी नहीं होते। इसमें शिक्षा व्यवस्था को लेकर व्यंग्य किया गया है।

सामाजिक एवं पारिवारिक संबंधो तथा आधुनिक प्रधान जीवन कि अनेक विसंगतियों को अपने व्यंग्य के पैने बाणों का लक्ष्य तिवारीजी ने बनाया है।

किरायादार साक्षात्कार में कार्यालयीन विसंगति पर व्यंग्य करते हुए लिखतें है, ''उनकी साँवली स्टेनो अब प्रचुर मात्रा में पाऊडर छिडकने लगी है, जैसे गदराह जामुन पर नमक छिडका हो ।''[५७]

हिन्दी साहित्य में व्यंग्य के कुशल रेफरी तिवारीजी है, व्यंग्य में भाषा कि विविधता, कथोपकथन के द्वारा व्यंग्य सहन उत्पन्न करना, आदि विशेषताएँ उनमें दृष्टिगत होती है। वे कहते है कि व्यंग्य मनोरंजनात्मक नही होता है। व्यंग्य के माध्यम से समाज कि आंकाक्षा की जाती है।

२.४.८. सुदर्शन मजीठिया :–

सुदर्शन मजीठिया व्यंग्य को मधुरता और सरसता प्रदान करनेवाले सहजता से व्यंग्य को उभारनेवाले व्यंग्यकार के रूप में सुदर्शन मजीठिया का नाम व्यंग्य साहित्य में उल्लेखनीय है। सुदर्शन मजीठिया का जन्म २५ जुलाई, १९३१ में मजीठा, जिला, अमृतसर में हुआ है। आपको हिन्दी साहित्य शिरोमणी एवं 'चकल्लस पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है। आपकी प्रमुख रचनाएँ निम्नुसार है।

१) इंडिकेट बनाम सिंडीकेट – १९७१

२) मुख्यमंत्रि का डण्डा – १९७४

३) कुछ इधर की कुछ उधर की – १९७४

४) टेलिफोन की घण्टी से – १९८३

५) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ – १९८३

६) डिस्को कल्चर – १९८५

७) इक्कीसवीं सदी – १९८५

८) छिटें – १९८९

९) पब्लिक सेक्टर का सांड – १९९९

१०) फुरसत नामा – १९९९

११) एक दाँडी दो गांधी – १९९१

हिन्दी व्यंग्य साहित्य में सुदर्शन मजीठिया के व्यंग्य की नींद में सोयी व्यक्ती के मानस में उद्वीग्नता भर जाती है। एवं सुख की निंद हराम हो जाती है। आपने समाज के सभी पहलूओं की विसंगतियों को अपनी रचना में उजागर किया है। राजनीति, समाज, धर्म, चुनाव, सांस्कृतिक, रिश्वतखोरी, भाई–भतीजा वाद, शिक्षा आदि सभी परिवेश को लेकर मजीठिया ने व्यंग्य रचनाएँ लिखी है। इनकी रचनाओं से स्पष्ट हो जाता है कि, हमारा जीवन कितना विकृत हो गया है। उसमें इतने धब्बे लग गए है कि, चेहरा लुप्त हो गया है।

'कुआ डूब गया' इस रचना से मजीठिया ने रिश्वतखोरी आज के राजनीतिक और सामाजिक जीवन का अंग बन गई है। यह सशक्त रूप से प्रस्तुत किया है।

डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारी सुदर्शन मजीठिया के व्यंग्य के बारे में कहतें है, ''डॉ. मजीठिया का व्यंग्य शिक्षा और संस्कृति, सामाजिक एवं राजनीति के क्षेत्र में फैली अराजकता का उद्घाटन करता है।''[५८] मजीठिया के व्यंग्य में राजनीति, समाज, शिक्षा एवं साहित्य की अराजकता को कुशलता से चित्रित किया है।

'गायब हुआ चमत्कार' सुदर्शन मजीठिया पुलिस की पोल खोलते है। चोरी हो जाने पर पुलिस रिपोर्ट करने से डरते है क्योंकि पुलिस रिपोर्ट करनेवाले के साथ भी चोर जैसा सलूक करती है। इसका अच्छा चित्रण किया है।

उषा दिवान ने मजीठिया के बारे में कहा है कि, ''इनकी व्यंग्य चैतन्य में लगभग सभी सामाजिक परिस्थितियों की विकृतियाँ विद्यमान है। जहाँ भी उन्हें अवसर मिला है, वहाँ पर उन्होंने सीधा प्रहार किया है। खिल्ली उडाने में यह सिध्द हस्त है। मजीठिया के व्यंग्य में प्रच्छन्न विपरित्य और व्याजस्तुती तथा वाक्छल का बाहुल्य है। इसीलिए व्यंग्यकार का व्यंग्य इतना सूक्ष्म और गहरी चोट करता है। की पाठक हंसने के लिए खीसें निपाडते रो पडता है।''[५९] उनका व्यंग्य एकदम वैष्णव तथा सहज है। जैसे बर्फ की शीतलता के पिछे सघन उष्मता छिपी हुई है।

सुदर्शन मजीठिया ने विकृतियों को वे एक साथ रौद्र रूप में और वैष्णवी सौम्यता में प्रस्तृत करते है। कथोपकथन द्वारा व्यंग्यार्थ की प्रस्तुति, शेर-शायरी, अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग, मुहावरें, प्रौढ भाषा, लोकप्रचलित भाषा आदि विशेषताएँ मजीठिया के साहित्य में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इसलिए उनका व्यंग्य रचनाओं में उनका बडा योगदान रहा है एवं उसमें वे सफल भी रहे है।

२.४.९. रोशनलाल सुरीरवाला

व्यंग्य साहित्य कार रोशनलाल सुरीरवाला का जन्म ३० जानेवारी १९३९ में सुरीर (मथुरा) में हुआ है। रोशनलाल सुरीर गाँव होने के कारण उन्हें सुरीरवाला कहाँ जाता है। आपकी व्यंग्य रचनाएँ भावुक और संवेदनशील है। वे हास्य व्यंग्य शैली में एवं रेखा चित्रों के लेखन में कुशल है। वे एक वरिष्ठ व्यंग्यकार है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, आदि पुरूषार्थ के द्वारा एक ही आधुनिक प्रसंगे को लेकर पौराणिक पात्र से व्यंग्यार्थ प्रस्तृत करने में व्यंग्यकार बहुतही माहीर बनी है। उनके व्यंग्य निम्नांकित संपदा है।

१) खाटपर हजामत – १९५९

२) डॉ. एम.ए.पीएच.डी. – १९६८

३) मंच के विक्रमादित्य – १९६९

४) शंख और मुर्ख – १९७१

५) पत्नी शरणम गच्छामी – १९७६

६) मूर्ख शिरोमणी – १९७६

७) पे माँगनेवाले – १९८६

इन सभी व्यंग्य साहित्य संगहो में रोशनलाल जी के व्यंग्य कि पहचान होती है। रोशनलालजी ने दैनिक जीवन के सभी आधुनिक विषयों पर व्यंग्य का कडा प्रहार किया है। उन्होंने इंजीनियर, वकील, शिक्षा, राजनीति, सामाजिक, सांस्कृतिक, प्रशासकीय, फॅशन, सिनेमा आदि सभी को लेकर व्यंग्य का निशाना बनाया है।

रोशललाल सुरीरवालने परिवार नियोजन को लेकर 'पर उपदेश कुशल में व्यंग्य करते हुए लिखा है ''एक परिवार नियोजन अधिकारी ने परिवार नियोजन पर बडा सुंदर और प्रभावशाली भाषण दिया और नसबंदी के लाभ इस पर मनोहर ढंग से समझाएँ कि उनके गले में माल्यार्पण करनेवाले बालक ने ...., न अपनाने का उत्तर दिया कि अभी उस

अधिकारी को सुचना दे दी गयी है कि तुरंत घर जाँए, आठवें प्रसव के लिए श्रीमती जी को प्रसुतिका गृह ले जाना है ।''[६०]

दिन पे दिन विद्यार्थियों कि नीति–प्रणाली पर रोशनलाल सुरीरवाला व्यंग्य करते हुए 'गलती करके न मानना एक कला है' में लिखते है ''आज विद्यार्थि परिक्षा भवन में नकल करना अपना जन्मसिध्द अधिकार समझते है। कभी कहता है कि कोर्स पूरा पढाया नही लगता है। अंत इस बात पर आ जाता है। कि आजकल प्रश्नपत्र आऊट ऑफ कोर्स आने लगे है। इस प्रकार का आरोप लगाते है ।''[६१] इसमें विद्यार्थियों कि नीति को लेकर सहजभाव से व्यंग्य किया हैं।

रोशनलाल सूरीरवालाजी के व्यंग्य रचनाओं में विषय विविधता दिखाई देती है। उल्टे तको का प्रयोग कर व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, सपाट बयान द्वारा व्यंग्यार्थ प्रस्तृत करना साधारण, अगम्भीर विषयों में सें भी गहरा व्यंग्यार्थ, प्रस्तुत करना मुहावरें, कहावतें, प्रतिकों, प्रतिमानों का प्रयोग करके व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, प्रौढ भाषा, अंग्रेजी, फारशी, अरबी आदि भाषाओं का प्रयोग, करना यह सभी विशेषताएँ रोशनलालजी के व्यंग्य रचनाओं में दिखायी देती है। इन सभी विशेषताएँ रोशनलाल सुरीरवाला का हिन्दी व्यंग्य साहित्य में अपना एक अलग स्थान है।

२.४.१०. मधुसूदन पाटील :–

डॉ. मधुसुदन पाटील व्यंग्य विधा को समर्पित होकर पत्थर साबित हुए है। डॉ. पाटील का जन्म १५ एप्रिल, १९४१ में हुआ। वे मराठी मातृभाषी महाराष्ट्र के मूलनिवासी है। मराठी–हिन्दी व्यंग्य विषयक तुलनात्मक अध्ययन में, एक महत्वपूर्ण कडी के रूप में उनका विशेष योगदान है। इनकी शिक्षा ग्वालियर, एम.ए. चंदीगड, पीएच.डी. मेरठ विश्वविद्यालय और अध्यापन हिसार (हरियाणा) जाट कॉलेज में कर रहे थे। आपकी व्यंग्य रचनाएँ निम्नांकित है।

१) अथ व्यंग्यम्

२) निबंध और निबंध

३) गुजरी महत्व

४) हम सब एक है

५) शिकायत है उनसे

६) देखने में छोटे उनसे

७) व्यंग्य विधा और विविधा (संपादन)

प्रस्तुत संकलन में विविध विषयों पर व्यंग्य किया है। जिसमें साहित्य, राजनीति, प्रशासन, सांस्कृतिक फिल्म, शिक्षा, पुलिस आदि विभिन्न क्षेत्रों की विसंगतियों को बखुबी शैली में प्रस्तुत किया है। व्यंग्य रचनाओं में मनोरंजक, हल्का–फुल्का व्यंग्य दिखाई देता है, जिसमें नेताओं की भ्रष्टता, लालफितशाही, भाई–भतीजा वाद, अव्यवस्था, शोषण आदि पर पाटील ने तीखें व्यंग्य किये है। यह विशेषताएँ मधुसूदन पाटील की है, इसी कारण हिन्दी व्यंग्य साहित्य में उनका विशेष योगदान है।

डॉ. पाटील ने 'नावक के तीर' भाँति विषयोंपर तिखा प्रहार किया है। इनकी रचनाओं में विधा के सारे तत्व दृष्टिगोचर होते है। पाटील ने वक्रोक्ति के माध्यम से समाज के विविध प्रवृत्ति पर कटाक्ष किया है। उनके व्यंग्य में राष्ट्रीय एकता को सुत्र खोजने और जोडने का कार्य किया गया है।

२.४.११. डॉ. शंकर पुणतांबेकर :–

डॉ. शंकर पुणतांबेकर का जन्म १९२४ में महाराष्ट्र में हुआ। डॉ.शंकर पुणतांबेकर एक सिध्दहस्त व्यंग्यकार है। वे व्यंग्यशास्त्र के ज्ञाता तथा व्यंग्य के समालोचक है। डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारी के पश्चात् व्यंग्य समीक्षा को व्यापकता प्रदान करने वाले में इन्हीं का नाम उल्लेखनीय है। आप को महाराष्ट्र हिन्दी अकादमी द्वारा मुक्तीबोध पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। वे हिन्दी के गंभीर और जिमेदार व्यंग्यकर्मियों में से एक है, जिनके लिखने

और कहने का हमेशा एक विशिष्ट अर्थ होता है। उनके साहित्य की सूची बहुत बडी है। यहाँ उनके पूरे साहित्य की नहीं केवल व्यंग्य की सूची निम्मांकित की है।

१) बचाओ मुझे डॉक्टर से बचाओ – १९७२

२) रेडिमेड कपडे – १९७७

३) श्रेष्ठ लघु कथाएँ – १९७७

४) कॅक्टस के काँटे – १९७९

५) बचाओं मुझे कवियों से बचाओं – १९८०

६) एक मंत्री स्वर्ग लोक में – १९८०

७) प्रेमविवाह – १९८१

८) विजिट यमराज की – १९८३

९) अंगूर खट्टे नहीं है – १९८५

इन व्यंग्य रचनाओं में जन की पीडा व्यथा, चिंता, दुःख को प्रकट किया है। प्रशासकीय अवस्था की साजिश को उखडने का काम इनकी रचनाओं में मिलता है। डॉ.पुणतांबेकर ने राजनीति, समाज, धर्म, साहित्य, शिक्षा, न्याय, व्यापार कला, सांस्कृतिक, प्रशासन, व्यक्ती आदि क्षेत्रों की विसंगतियों को व्यंग्य कथ्य बनाया है। शादी के पूर्व लडकी नहीं दहेज को देखा जाता है। प्रस्तुत दहेज परंपरा को लेकर तिखा व्यंग्य करते हुए पुणतांबेकरजी लिखते है कि,

''स्त्री – देखो तुम कहाँ के मैं कहाँ की

पुरूष – हाँ, न तुम मुझे जानती थी, न मैं तुम्हें

स्त्री– पर दोनों को देखो जिंदगी भर के लिए दहेज–सूत्र में बांध दिया है?''[६२]

दहेज प्रथा जो आज की समस्या बन गयी है, आज रिश्ता लडकी के लिए नहीं, दहेज के लिए जोडा जाता है। इस पर यह व्यंग्य किया हुआ है।

पुणतांबेकरजी का व्यंग्य पढने पर विविध क्षेत्रों में जो कमियाँ या दोष है, वे सब एक बार ही हमें अखरने लगते है। व्यंग्य के बारे में वे इस तरह कहतें है ''व्यंग्य का प्रगत रूप

साहित्य के लिये नाज का विषय भलेही हो, वह समाज के लिए गौरव का स्वरूप कदापि नहीं माना जा सकता। जो लब्जों का विषय है, वह व्यंग्य का विषय होता है। ''[६३]

इस प्रकार इस कथन से स्पष्ट होता है कि वे समाज की हर विसंगति को समाज के लिये लज्जास्पद ही मानते है।

शंकर पुणतांबेकरजी की दृष्टि से प्रशंसा एवं अपमान इन दोनों में 'अनुल्लेख' उपाय है। इस बारे में वे लिखते है ''आलोचना तो हिंसात्मक प्रहार है।अनुल्लेख के द्वारा तुम अपने दुश्मनको मारकर भी बखुबी मारते हो।''[६४] शत्रू की तुम किसी भी तरह उसकी प्रशंसा नही करना चाहते, अपमान करना चाहते हो पर खुलकर करना भी पसन्द नही ऐसे में एक उपाय 'अनुल्लेख' है।

पुणतांबेकरजी की दृष्टि समाज, साहित्य, शिक्षा, मनुष्य कि प्रवृत्तियाँ आदि की सुक्ष्म से सुक्ष्म विसंगति पर भी पडती है। उनकी रचनाएँ अन्य व्यंग्यकारों की रचनाओं से भिन्न है, उन्होंने उनके विषय व्यंग्य साहित्य की दृष्टि से अनोखे किन्तु समाज में इस तरह से फैले है कि, जो विविध क्षेत्रों में जो कमियाँ या दोष है, वे सब हमें अखरते है।

पुणेतांबेकरजी के व्यंग्य साहित्य को विस्तार और वैविध्य दोनों प्राप्त है। पाठक को समझाने की शक्ति तथा रोचकता ये गुण भी आप में देखे जा सकते है। उनके द्वारा गढी गयी नयी कहावतों तथा उनके नये प्रयोग में जो नुकीलापण है, उसे भुलाया जा नही सकता। यह पुणतांबेकर के व्यंग्य साहित्य की विशेषता है।

२.४.१२. इन्द्रनाथ मदान :-

इन्द्रनाथ मदान मुख्य रूप से आलोचक के रूप में ख्याति प्राप्त है। आपका पेशा पढना, पढाना एवं लिखना रहा है। जीवन की गहरी व्यथा को डॉ.इन्द्रनाथ मदान ने व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त किया है। आपके अब तक प्रकाशित व्यंग्य संकलन निम्न प्रकार है।

१) निबंध और निबंध – १९६६

२) कुछ उथले कुछ गहरे – १९६८

३) रानी और कानी – १९७४

४) बहाने बाजी – १९७८

५) विदा–अलविदा – १९८२

उनके उक्त सभी व्यंग्य संकलनो से यह बात स्पष्ट होती है कि, मदान ने अपने परिवेश को सुक्ष्मता से देखा है तथा उसके साथ अपनत्व होने के कारण ही उसके दोषों का दूर करने के प्रयास अपने निबंधो में किये है। डॉ. बालेन्दूशेखर तिवारी डॉ.इन्द्रनाथ मदान के व्यंग्य लेखन के संबध में कहा है कि, ''उनकी व्यंग्य भावना जिस आसानी के साथ दूसरों पर प्रहार करती है। उतना ही सहजता के साथ अपने आप पर कटाक्ष भी रखती है । डॉ. मदान ने अपने बहाने परिवेश की विसंगतियों का रोचक अंकन किया है।''[६५]

तिवारीजी ने कहा है कि, डॉ.मदान व्यंग्यशैली अन्य व्यंग्यकारों की व्यंग्यशैली से बहुत भिन्न प्रकार की है। उनके व्यंग्य आत्म व्यंग्य के अंतर्गत आते है।

डॉ. मदान अपना कुछ विचार भी इस प्रकार प्रकट करतें है, जैसे ''मुझे अपना मजाक उडाना अधिक पसंन्द है ताकि किसी के दिल को चोट न पहुँचे।''[६६]

उनके व्यंग्य पाठक को बहुत अधिक तिलमिलाते नहीं है, किन्तु उसे दोषों को आवश्यक दिखाते है। वे आत्मव्यंग्य के माध्यम से अपना मजाक उडाना अधिक पसन्द करते है। दूसरों का नहीं। यह एक विशेषता डॉ. इन्द्रनाथ मदानजी की है।

डॉ. इन्द्रनाथ मदानजी ने जीवन की विसंगतियों को बहुत सूक्ष्मता से देखा तथा परखा है। वे जानते है कि, हर व्यक्ति मान–सम्मान पाने के लिए अपनी योग्यता को प्रदर्शन करने के लिये लालायित रहता है । तथा इस दिशा में अग्रेसर होने के लिए भरसक प्रयत्न भी करता है । आज दोस्ती के पीछे भी स्वार्थ छुपा है। दोस्ती को व्यंग्य का लक्ष्य बनाकर वे लिखतें है, ''यह मतलब इतना खतरनाक नहीं होता जितना वह जो आज की दोस्ती की तह में होता है। जिसे पहचान पाना आसान तो नहीं होता आज का मतलबी दोस्त इसे धीरे–धीरे सींचता है और इस तरह पनपता है कि, मतलब या मकसद की कही गंध न आने पाये।''[६७] इस प्रकार आज रीश्ता जोडते समय भी स्वार्थ मन में रखकर ही जोडा जाता है ।

डॉ. इन्द्रनाथ मदानजी ने जन्मशताब्दीयों को धंदा बनानेवालों पर अभिनंदन समारोहों पर तीखें व्यंग्य किये है। दान देनेवालों पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''इस तरह दान देनेवाला सभापति बनने का अधिकारी होता है। आभार अनुभव करना भाषण में इतना महत्व नहीं रखता जितना उसे व्यक्त करना।''[६८] इस प्रकार अभिनंदन समारोहो एवं दान देनेवालों पर तीखे व्यंग्य किये हुए है। इससे वे सांस्कृतिक एवं राजनीति दोनों को उजागर करते है। डॉ.इन्द्रनाथ मदानजी की विशेषता यह है कि, अपने निबन्धों में कई बार उर्दू, अंग्रेजी आदि हिन्दीत्तर भाषा के शब्दों का प्रयोग करते है। इन्द्रनाथ मदानजी कि व्यंग्य रचनाओं में ताजगी तथा पैनापन साफ दिखायी देता है। डॉ.इन्द्रनाथ मदानजी जीवन के किसी भी क्षेत्र में विसंगति, अन्याय, अत्याचार दिखायी देने पर अवश्य व्यंग्य के बाण चलाते है, किन्तु साथ ही शीतलता भी प्रदान करते है। कभी मिठी और बारीक चुटकीयाँ तो कभी हल्काफुल्का व्यंग्य, कभी गहरी मार करनेवाले व्यंग्याघात इन विशेषताओं के कारण वे व्यंग्यकार के रूप में लोकप्रिय हुए है। उन्होंने बडी रोचकता से व्यंग्य किया है।

२.४.१३ शरद जोशी :-

शरद जोशी का जन्म २१ मई, १९३१ मध्यप्रदेश के उज्ज्ञैन में हुआ है। १९५३ में उन्होने इन्दौर के दैनिक नई दुनिया में 'परिक्रमा' नामक व्यंग्य स्तंभ लिखना शुरू किया था। बाद में वे आकाशवाणी, इन्दौर में आलेख-लेखक के रूप में कार्यरत हुए १९५३ से १९६६ के दशक में वे भोपाल में (मध्यप्रदेश) के सूचना विभाग में नौकरी करते रहे। लेकिन बंधकर रहना और बंधकर लिखना शरद जोशी के लिए संभव नहीं था। लिहाजा वे सेवा छोडकर पत्रकारिता के खुले मैदान में आ गये। इस समय तक व्यंग्यकार के रूप में उनकी पहचान देशभर की पत्र-पत्रिकाओं में स्थापित हो गई थी। परिक्रमा नावक के तीर, ताल-बेताल, बैठे ठाले, प्रतिदिन जैसे स्तंभो के लिए शरद जोशी ने बहुत लिखा है। १९८० में वे 'हिन्दी एक्सप्रेस' के संपादक बने, लेकिन इस साप्ताहिक का प्रकाशन जल्द हि बन्द हो गया अप्रैल १९८५ से वे 'नवभारत टाईम्स' में प्रतिदिन व्यंग्यस्तंभ लगातार

लिखते रहे। शरद जोशी व्यंग्य साहित्य के सर्वाधिक चर्चित एवं वैज्ञानिक दृष्टि सम्पन्न व्यंग्यकार शरद जोशी ने व्यंग्य को एक नई दिशा और नविन अर्थवत्ता प्रदान की है। भारतीय जीवन मूल्यों को अपने ढंग से परिभाषित करनेवाले इस चेतना सम्पन्न व्याख्यानकार ने समाज के विभिन्न हिस्सों में व्याप्त अन्तविरोधों, असामंजस्य, वैयक्तिक कुठांओं, कुरापतियों तथा शोषण प्रवृत्तियों एवं व्यक्ति के जीवन को घेरने वाली पारम्पारिक एवं धार्मिक जडताओं पर जमकर प्रहार किया है। उनका अधिकांश व्यंग्य साहित्यिक सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक घटनाओं की व्यंग्यात्मक प्रतिक्रिया है। जोशीजी के व्यंग्य संकलन की सुची निम्नानुसार है।

१) परिक्रमा – १९५८

२) जीप पर सवार इल्लियाँ – १९७१

३) किसी बहाने – १९७१

४) रहा किनारे – १९७२

५) तिलस्त्र – १९७३

६) दूसरी सतह – १९७६

७) पिछले दिनों – १९७६

८) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ – १९८०

९) हम भ्रष्टन के भ्रष्ट – १९८७

१०) पथासंभव – १९९१

११) मुद्रिका रहस्य – १९९२

१२) मैं.....मैं केवल मैं (व्यंग्य उपन्यास) ---

१३) नावक के तीर (व्यंग्य संकलन)

'परिक्रमा' में शरद जोशी ने आसपास की सूक्ष्म परिक्रमा ही की है। 'किसी बहाने' के प्रकाशन तक उनके व्यंग्यकार के व्यक्तिव में पैनापन आ चुका था और व्यंग्य विधा को उनकी पहचान मिल चुकी थी। यही कारण है कि, रचनाकार ने अपनी पर्यवेक्षन क्षमता और

अन्तरंग पकड का परिचय दे डाला था। आपके उपर्युक्त संकलन में हिन्दी संसार की समस्त विसंगतियाँ दिखाई देती है।

कवि, समीक्षक, अनुसंधता, प्राध्यापक, गीतकार आदि उनकी रचनाओं के आलम्बन बने है। इस देश की भाषा–दशा के संदर्भ में व्यंग्यकार की राय है, ''अपनी उच्च परम्परा के लिए संस्कृत, देश की एकता के लिए एवं अपनी बात कहने समझने के लिए हिन्दी और इस पापी पेट की खातिर अंग्रेजी जानना जरूरी और मजबूरी है।''[६९] इन व्यंग्य संकलन से शरद जोशी की शैलीगत विविधता के अभिलक्षण भी नजर आने लगे जितना विस्तार परवती संकलनों में हुआ है। जीप पर सवार इल्लियाँ १९७१ से भारतीय राजनीति और व्यवस्था के प्रति शरद जोशी की दिलचस्पी के संकेत मिलने लगे। इस संकलन की इक्कीस व्यंग्य रचनाएँ चुनाव और दलबदल, चाटुकरिता और छल, मुल्यहिनता और अवसरवादिता के विभिन्न दलदलों में फँसी भारतीय जनता की सही हालत का ब्यौरा पेश करती है। जैसे की राजनीति हलचल के अखबारी मुहावरे पर व्यंग्यकार व्यंग्य करते हुए कहते है, ''जो इस नगर में रहते है, वे जानते है कि राजनीतिक हलचल का मतलब क्या होता है? मतलब है कुछ न करनेवाले नेताओ द्वारा कुछ नही किया जाना।''[७०] इन संकलन में वर्तमान एवं भविष्य को एक साथ काम साहस व्यंग्यकार ने किया है।

'रहा किनारे बैठ' १९७२, 'तिलस्म', १९७३, 'दूसरी सतह' १९७३ इन तीनों ही व्यंग्य संकलो ने कथ्य और शैली के स्तर पर जोशी के निखार और प्रसार के नमूने हैं। 'तिलस्म' में उनकी व्यंग्य धर्मिता नए सन्दर्भो से जुडकर सामने आयी है, जिसका चरण उत्कर्ष 'मुद्रिका रहस्य' रचना में नजर आता है। 'दुसरी सतह' में शरद जोशी की व्यंग्य रचनाएँ व्यापक सन्दर्भों का उद्‌घाटन एवं विश्लेषण करती है। शिक्षा, राजनीति, विकास बौद्धिकता और प्रशासन की विसंगतियों पर चुटकियाँ लेते हुए व्यंग्यकार ने बताया है, ''जो अचाट में खूबी है, वही खूबी हम भारतवासियों में है। हम बरसों मर्तबान में बन्द रह सकते है। दुनिया से कटे हुए और जब बाहर आते है तब सभी विशेषताएँ आत्मसात किए लगते

हैं।'' [७१] स्पष्ट है कि समाज और साहित्य, राजनीति और व्यवस्था के सुक्ष्मतर प्रसंगो पर शरद जोशी की लेखनी ने सीधी चोटे की है।

१९८० में प्रकाशित मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ में शरद जोशी के कुल सत्रह व्यंग्य है, जिनके बारे में व्यंग्यकार की मान्यता है कि, ''ये मेरी कुछ वे रचनाएँ है, जो लिखने के इतने दिनों बाद भी पढी जा सकती है।''[७२] इसमें अधिकांश व्यंग्य रचनाएँ ऐसी होती है। जिन्हें बार–बार पढा जा सकता है।

१९८५ में प्रकाशिता 'यथासम्भव' में सौ व्यंग्यों की परिक्रमा से यह बात बार बार प्रमाणित होती है की, शरद जोशी न अपनी रचनाओं को मौजूदा खोकली बौध्दिकता से समृध्द साहित्य के अर्थ में साहित्य होने से बचाया है।

१९८७ में प्रकाशित हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे में यथासम्भव से ही चुनी हुई तेईस रचनाएँ संकलित है उनको नाटकों का भी शौक था 'एक था गधा' उर्फ अल्लादा खाँ और' आंधो का हाथी' इन दो नाटकोंको १९९७ में दो व्यंग्य नाटक शीर्षक से प्रकाशित किया है। 'एक था गधा' उन बहुत सारे आलादो की नियती का आईना है जो हमेशा सारी नियमावली का पालन करते रहने के बावजूद नवाब साहब झुठी प्रतिष्ठा के लिए अंत्ययात्रा में शामिल हो जाते है । मिथक के सहारे आधुनिक नोकरशाही को शरद जोशी ने 'अंधो का हाथी' में विशाल बनाया है एवं बडी चतुराई के साथ अपनी बात कह डाली है।

इस के बारे में प्रेम जनमेजय ने लिखा है कि, ''शरद जोशी में निबन्ध तत्व अधिक है, कथा कम राजनीतिक प्रतिक्रिया अधिक है, दिशापूर्ण प्रहार उसमें कम परन्तु प्रहारात्मकता अधिक है, शरद जोशी के व्यंग्य पाठक को सोचने को बाध्य करते है, उसे जागृत करते है।''[७३]

जोशीजी की रचनाओं में विषय की विविधता और प्रहारत्मकता दोनों लक्षित होती है। जो पाठक को सोचने के लिए मजबूर करती है।

डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारी ने कहा है ''शरद जोशी ने हिन्दी की व्यंग्य विधा को शिल्प की सर्वाधिक कलात्मकता प्रदान की है। उनके व्यंग्य शिल्प ने रचना विधान ही नहीं,

अभिव्यंजनों की दिशा में भी नये गवाक्षों को खोला है।''[७४] उनके व्यंग्य शिल्प रचना के साथ अभिव्यंजनों को भी नयी दिशा दी है।

शरद जोशी ने सरकारी कार्यालय के भीतर झाँककर देश का प्रशासन धीरे–धीरे कितना बिघडता जा रहा है, आज गरीब कि स्थिति कितनी दयनीय हो गयी है, इसका चित्र प्रस्तुत किया है, ''हमारे देश में बडे आदमी की हत्या करनी पडती है। उसे मारने को कोई भी खाली नही जाता। यदि किसी गरीब की हत्या हुई हो तो यह साबित करना पडता है कि वह आत्महत्या नहीं।''[७४]

बढती हुई फॅशन परस्ती ने केवल नगरों तक सीमित है, बल्कि गाँवो में भी उसने पैर जमा लिये है। इस परिवर्तन से जोशी अशांत हो उठतें है, ''जनाब यह मिनी साडी है। लेटेस्ट फॅशन, अब वैसी लंबी साडीयाँ और पूरी बाहों के ब्लाऊज की रिवाज नहीं रहा। वह बोली और खेत में काम को लग गयी।''[७६]

उनमें बन्सीवाले का पुजारी दिपावली फिर आयी जैसे कुछ निबन्ध ऐसे भी है जिस में धर्म के प्रति अंधश्रध्दा, भावना का फायदा उठाकर लोंगो को ठगने की बढती प्रवृत्ती, रामराज्य का आज के अनुसार अर्थ, लक्ष्मी का स्वागत करने के लिए उतावले हो रहे लोग आदि जमकर प्रहार किया गया है।

डॉ. शंकर पुणतांबेकर ने, जोशी के व्यंग्य शिल्प पर प्रकाश डालते हुए कहा है, ''शरद जोशी आज के जाने माने व्यंग्यकारों में से एक है। इनके व्यंग्य में विवरण का कौशल्य, तर्क, चुटकी भरी विमुग्धता, रूपविधान में रचना वक्रता मिलेगी। यह व्यंग्य अन्ततः रिझाता है।''[७७] डॉ. इन्द्रनाथ मदान का मत है,'' शरद जोशी सामाजिक, राजनीतिक प्रसंगतियों, विकृतियों, पर सीधी तिरछी चोट करते है। इनके व्यंग्य का स्वरूप मंजा हुआ है।''[७८]

शरद जोशी अपने समय और समाज के प्रति जैसी जागरूकता लाते है। अन्य समूचे व्यंग्य साहित्य में विरल है। राष्ट्र में घटनेवाली प्रत्येक घटना पर व्यंग्यकार पैनी निगाहे रखता था। यही कारण है कि महत्वपूर्ण घटनाओं के पश्चात पाठकों को डॉ. जोशी की प्रतिक्रिया

की बडी प्रतिक्षा रहती थी। इस प्रकार पाठक को सजग करने का कार्य उनके व्यंग्य साहित्य में मिलता है।

शरद जोशी की व्यंग्य रचनाओं का परिक्षण करें तो सिध्द होगा की उसमें भाषा–प्रयोग को चुनौती के स्तर पर स्वीकारा गया है। उनकी रचनाओं की भाषा आम आदमी से सीधी जुडी हुई थी। उनका ज्यादातर जीवन कस्बों और छोटे नगरों में बीता था, और इसी कारण इन स्थानों को लेकर सच्चा लेखन उन्होंने किया, उतना और शायद नहीं कर सके। उनकी सफलता का एक कारण यह भी था की वे स्वंय न जाने कितनी विद्रुपताओं और विसंगतियों से गुजरे थे, जिसके कारण लेखन में प्रामाणिकता है।

इस तरह शरद जोशी के व्यंग्य साहित्य में संस्कृति, सभ्यता, राजनीति, प्रशासन, शिक्षा, नेता, अधिकारी, आम आदमी की धर्म के प्रति अंधश्रध्दा आदि क्षेत्रों कि असंगतियों समाया गया है। हा हॉंकी जैसे निबन्धों में खेल तथा खिलाडीयों पर भी व्यंग्य के प्रहार सफलतापूर्वक करते जाते है।

२.४.१४. गोपाल चतुर्वेदी :–

चतुर्वेदी ने अंग्रेजी में एम.ए. किया किन्तु रूचि हिन्दी व्यंग्य साहित्य की ओर विशेष रूप से रही है। सरकारी कार्यालय में अधिकारी होने के कारण वहाँ कुपोषक तत्वों को वे सूक्ष्मता से देखते रहे। वे हमेशा आम आदमी के साथ रहें है।

गोपाल चतुर्वेदी छात्र जीवन से ही लेखन से जुडे रहे है। आपके लेख काफी समय से हिन्दी की सभी प्रमुख पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे है। हिन्दी अकादमी के दिल्ली और प्रेमचंद पुरस्कार से आपको सम्मानित किया गया है। गोपालजी के प्रमाणित व्यंग्य संकलन निम्न प्रकार है।

१) खंभो के खेल – १९८०

२) फाईल पढ़ि–पढ़ि – १९९१

३) दुम की वापसी – १९९२

भारत को आजाद हुये लगभग साठ साल हुए है, लेकिन इन सालों में क्या हुआ कया? स्वंय को नेता कहलाने वालों की संख्या बढती गयी। हर एक के नजर में कुर्सी ही समायी गयी। कुर्सी हर एक को लुभाती है। और जनता चुनाव के समय जनार्धन बनने का सम्मान पाती है। नेता लोग अपना महत्व बढाने के लिए रैली निकलते है। देश की एकता और अखंडता के लिए आवश्यक है कि देश के हर महानगर में एक रैली हो।

जैसे–जैसे चुनाव आने लगता है नेता को आम आदमी की चिंता सताने लगती है। एक बार चुनाव में विजयी हो गये तो अपने स्वार्थ को छोड कर दूसरी अन्य बाते उन्हें स्मरण में भी नही रहती। आम आदमी की चिन्ता का दिखावा करना तथा अपने स्वार्थ को साध लेना इन दोंनो विषयों में वह धीरे–धीरे पारंगत हो जाता है। ऐसे मुखौटाधारी नेता के बारे में चतुर्वेदीजी कहते है, ''हमें जनता की चिंन्ता है, उसकी खुशहाली का ख्याल है अगले चुनाव तक आप अपनी तरक्की कर लो। उसके बाद सोचना की आम आदमी के लिये कौन सी स्किम अच्छी रहेगी। वह भोजन देकर गुठली चुसने लगे।''[७९]

चतुर्वेदीजी की रचनाओं में आम आदमी के प्रति सहानुभुती तथा लगाव स्पष्ट होता है। आम आदमी के हित में कार्य करने की उनकी इच्छा तथा उसके अनुरूप बडों के छोटेपन को खोलकर दिखाने वाले उनके व्यंग्य को देखकर इंडीया टुडे ने लिखा था, ''आला अफसर होने के बावजूद वह सरकार, पूँजीपतियों और तथा–कथित बडे लोगों के नही बल्कि आम आदमी की वकालत करते हुए मिलते है और अफसरों, तस्करों, नेताओं आदि को बक्शने के मुड में कतई नजर नहीं आते।''[८०]

नोकरी मिल जाने के बाद कोई निश्चित हो जाता है। काम करो या न करो वेतन के हकदार जरूर हो। इसपर चतुर्वेदीजी व्यंग्य करते हुए कहते है, ''ऐसे वह रेल के दफ्तर में लिपिक थे पर उनके परिचित जानते थे कि, वहाँ सिर्फ हाजिरी लगाने का वेतन पाते है। दफ्तर की सीटपर अधिक तर उनकी टोपी उपस्थित के प्रमाण में पायी जाती थी।''[८१]

गोपाल चतुर्वेदी सिर्फ प्रशासन पर ही व्यंग्य नहीं करते बल्कि राजनीति को खेल समझकर उससे खिलवाड करनेवालों से वे असंतुष्ट भी है। असंतोष का वे अपने व्यंग्य में लाते है जैसे, ''क्रिकेट और राजनीति हमारे देश के सबसे लोकप्रिय खेल है।''[८२]

अपने देश में आदर्श और अर्थ निरपेक्ष नारों की दूकाने खुल गयी है । इसपर चतुर्वेदीजी व्यंग्य करते है, ''हमारे धर्मनिरपेक्ष देश में आदर्श और अर्थ निरपेक्ष नारों की दुकाने खुल गयी है। नारों के व्यापारियों की आस्था है कि नारों पर न किसी दल का लेबल है न किसी का एकाधिकार।''[८३]

शिक्षा संस्थाएँ अपना मुख्य उद्देश्य छोडकर व्यापार का रूप ले रही है फिर भी स्कूल अपने उँचे स्तर का दावा करते है। चतुर्वेदीजी स्कूल पर व्यंग्य करते हुए कहते है, ''इन स्कुलों की प्रतिक्षा सूची में बच्चों के नाम उनके जन्म की संभावना होते ही दर्ज करवाने पडते है। तीसरे स्कूल के बच्चो का ॲडमिशन टेस्ट लेने के पहले उसके जन्म के जिम्मेदार लोगों से साक्षात्कार की इच्छा प्रकट की।''[८४] इस प्रकार शिक्षा बच्चों को लेनी है या उनके अभिभावकों को इसपर सवाल उठता है ।

इस तरह अपने आसपास के विषयों में राजनीति हो या मध्यम वर्ग की कमीयाँ, चतुर्वेदीजी की पैनी दृष्टि उसे ग्रहण कर लेती है। तथा उन्हें वे व्यंग्य धार से काटते जाते है। इस व्यंग्य की धारा को वे मनोरंजन फुहार से सहनीय बना देते है। गोपाल चतुर्वेदी एक सफल व्यंग्यकारों की श्रेणी में आते है।

गोपाल चतुर्वेदी हिन्दी व्यंग्य साहित्य में केवल चार व्यंग्य संग्रहो में ही अपना स्थान मजबूत कर लिया है। व्यंग्य के लिए आवश्यक चुटीली भाषा चतुर्वेदी जी के लेखन को अधिक प्रभावी बनाती है। वे आवश्यकता पडने पर अंग्रेजी, उर्दू, शब्दों का प्रयोग बेझिझक करतें है। कहावतें को भी उपयुक्तता के अनुसार लेतें है, लेखन में स्थूल की अपेक्षा सुक्ष्म तथा कडवाहट की अपेक्षा मीठी चोंटे अधिक है।

गोपाल चतुर्वेदी का संकलन विषयों में विविधता रखता है। उस में रिश्ते, चोरी, राजनीति, नगरनिगम, प्रशासन, संस्कृति, शिक्षा, नेता, बेईमानी, खेल जगत, अमिर–

गरीब, मिलावट, भ्रष्टाचार, चुनाव आदि कितने ही विषयों पर उनकी कलमरूपी तलवार को चलते हुए देखा जा सकता है। शैली की नाविन्यता के कारण उनके लेख पाठकों को केवल अपनी ओर खींचते ही नहीं बल्कि उन्हें पढने के बाद सोचने के लिये मजबूर करते है।

२.४.१५. केशवचंद्र वर्मा :-

केशवचंद्र वर्मा का जन्म १९२८ में हुआ। भारतीय संस्कृति के समर्थक, चिन्तक , विचारक, एवं निर्भिक केशवचंद्र वर्मा एक महान व्यंग्यकार है। व्यंग्य को अपनी पुरानी शैली से निकालकर आधुनिक जीवन के साथ संबन्ध जोडनेवाले तथा जहाँ विसंगतियाँ सन्माननीय स्थानपर केशवचंद्र वर्मा विराजमान है। उनकेनिम्नलिखित व्यंग्य संकलन है।

१) लोमडी का माँस

२) प्यासा और बेपानी के लोग

३) मुर्गाछाप हीरो

४) अफलातुनों का शहर

५) बृहन्नता का वक्तव्य

६) ज्यादा तर गलत

उनके व्यंग्य साहित्य में जीवन, संबन्ध, साहित्य का खोखपालन, प्रशासन, कार्यालय, राजनीति आदि को लेकर व्यंग्य का पैनापन सामने आता है।

उपेन्द्रनाथ अश्क ने केशवचंद्र वर्माजी के संदर्भ में कहा है की ''उनकी रचनाएँ पढकर मुझे किसी ऐसे बच्चे का ध्यान आता है। जो बडे मनोवेग से चित्र में देख देखकर ब्लॉक रखते हुए इमारत खडी करता है, पर आधे में ही उब जाता है, और जल्दी-जल्दी किसी न किसी तरह उसे खत्म कर देता है।''[८५] इस प्रकार अश्कजी दृष्टि से भी केशवचंद्र वर्मा एक सशक्त एवं सृजनशीलता रूप व्यंग्यकार केरूप में दृष्टि गोचर होते है।

केशवचंद्र वर्माजी के एक ही पक्तियों से कई प्रकार केव्यंग्यार्थ ध्वनित होते है। जैसे ''एम्पालयमेंट एक्सचेंज ! एम्पालयमेंट एक्सचेंज में आईये, वहाँ से आइयें –जाइये – जाइये।''[८६]

प्रस्तुत पंक्तियों में सरकारी–नीति, बेकारी की समस्या, प्रशासकीय सेवा आदि पर व्यंग्यार्थ ध्वनित होता है।

आजादि के पश्चात राजनीति में नेताओं की त्याग भावना तथा सेवा वृत्ति धीरे धीरे लुप्त होती जा रही है। इसके स्थान पर स्वार्थ तथा धनलिप्सा पनपने लगी है, इस पर व्यंग्य करते हुए केशवचंद्र लिखते है, ''समस्या का उत्पादन नेता के लिये संजीवनी बुटी है। जो नेता समस्या नही उठा पाता, वह मर जाता है। उसकी नेतागिरी समाप्त हो जाती है, उसे सब काहिल और बेकार समझने लगते है।''[८७]

कोई समस्या उभरने लगे तो नेता उसे मिटाने के बजाय अधिक सजग कर अपनी नेतागिरी को सार्थक करने लगते है। इसी ओर वर्माजी संकेत करते है। आज की शिक्षा एवं शिक्षा की विषमताओं की स्पष्ट करते हुए लिखते है, '' ये सब अपनी पाठशाला को सुरक्षित क्षेत्र घोषित कर रहे है। मै इनका कुछ भी बिगाड नही सका। अब ये शिक्षक राजनेता यहाँ दल बाँधकर आये है।''[८८] इस प्रकार राजनेता द्वारा शिक्षा क्षेत्र में भी प्रवेश होने की वास्तविकता स्पष्ट की है ।

यहाँ कर्तव्यविमुख शिक्षक वर्ग का दर्शन हो जाता है। आज शिक्षक एवं शिक्षा से मनुष्य के सर्वागिन विकास का उद्देश्य होना चाहिए लेकिन ऐसा यहाँ होता नही है। शिक्षा को लेकर वर्माजी व्यंग्य की धार और भी पैनी कर देते है।

केशवचंद्र वर्माजी के व्यंग्य साहित्य में अपनी पैनी निगाह से वे विसंगतियों को टीपकर उन पर मर्मांतक प्रहार करते है। समाज की दुर्बलताएँ सामाजिक विषमताएँ, विकास के लिए बाधक रूढियाँ आदि को देखकर उनके मन में आक्रोश उठता है। तब दफ्तर का बाबू, नेता, वकील, अफसर, धोबी, हडताल करनेवाला, साहित्य, शिक्षा, राजनीति,

सामाजिक, प्रशासकीय आदि विविध क्षेत्रों में पाये जानेवाले दोषोंपर खुलकर व्यंग्य प्रहार करते है।

इसी तरह एक ही पंक्ति में से कई प्रकार के व्यंग्यार्थ ध्वनित करना, सहजता से कथोपकथन द्वारा व्यंग्यार्थ करना पौराणिक, सांस्कृतिक प्रसंगो, घटना पात्र को लेकर आधुनिकता पर छापामारी कर व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना। किसी भी विषय पर सूक्ष्म अध्ययन कर और सुसूत्रबध्दता से व्यंग्य साहित्य का सृजन करना। मुहावरे कहावतें, प्रताकों–उपमानों का प्रयोग करके व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, प्रौढ भाषा का प्रयोग करना व्यंग्य में भोजपुरी, अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, अरबी, फारसी आदि भाषा के शब्दों का प्रयोग करना यह विशेषताएँ केशवचंद्र वर्माजी की है। इस कारण व्यंग्यपरक रचनाओं की दृष्टि से वर्माजी एक महान व्यंग्यकार है।

२.४.१६. के.पी.सक्सेना :–

के.पी.सक्सेना का जन्म १९३४ में हुआ। के.पी.सक्सेना पर आलाचकों की दृष्टि तो उतनी नहीं गयी किन्तु पाठकों के वे सबसे प्रिय व्यंग्यकार है। उनकी उर्दू मिश्रीत आम बोलचाल की भाषा और हँसते हँसते तीखे व्यंग्य करने की उनकी शैली से पाठकों का एक विशाल वर्ग उन्हें मिला है। देश के दर्जनो समाचार–पत्र–पत्रिकाओं में व्यंग्य स्तंम्भ लिख रहे । के.पी.सक्सेना जी के हाल के कुछ वर्ष की रचनाओं में व्यंग्य की प्रखरता अधिक दृष्टिगोचर हुई है।

के. पी. सक्सेना की निम्नलिखित व्यंग्य रचनाएँ है।

१) नया गिरगिट – १९७५

२) कोई पत्थर से – ४९७८

३) मुँछ–मुँछ की बात – १९८०

४) रहिमत की मेल यात्रा – १९८२

५) रमईयाँ तोर दुल्हन लुटे बाजार – १९८३

६) लखनवी ढंग से – १९८३

७) बाजु बंद खुल–खुल जाम – १९८५

८) तलाश फिर कोलबंस की – १९८६

९) खुदा खुद परेशान है – १९८८

के. पी. सक्सेना का व्यंग्य बहु आयामी और बहुविध कथ्य को समेटा है। हास्य से व्यंग्य का लक्ष्य बेध करने में सक्सेना सिध्दहस्त है। लखनवी अन्दाज में बडे सलीके से व्यंग्य परोसनवाले सक्सेना हिन्दी व्यंग्य साहित्य में विख्यात है। सक्सेना के व्यंग्य साहित्य में राजनीतिक, सामाजिक, प्रशासकीय, साहित्यिक, विदेशी मानसिकता, क्रिकेट, सिनेमा आदि से बदलते जीवन मूल्यों से उत्पन्न विसंगतियों का खुलकर विरोध दृष्टिगत है।

डॉ. बालेन्दुशेखर तिवारी ने के.पी.सक्सेना के व्यंग्य के बारें में लिखा है, ''उनका व्यंग्य लेखन हास्य की फुआरों में भीगता हुआ विकसित हुआ है, और अपने आसपास कि विसंगतियों का हँसते हुए प्रहार करता है।'' स्पष्ट है कि सक्सेनाजी का व्यंग्य आसपास की विसंगतियों पर हँसते हुए प्रहार करता है ।''[८९] स्पष्ट है कि सक्सेनाजी का व्यंग्य आस–पास की विसंगतियों पर हँसते हुए प्रहार करता है जो पाठक को बहुत भाता है। जो व्यंग्य लेखन हास्य की फुहार लिये हुआ है।

लखनवी अन्दाज की भाषा का प्रयोग करना, उपमाओं, से सशक्त व्यंग्य प्रस्तुत करना, गद्य व्यंग्य को मंच प्रदान करना, हास्य के तरकस से के.पी.सक्सेना अपने व्यंग्य का लक्ष्य बेध करना आसपास की विसंगतियों पर हँसते हुए प्रहार करना आदि विशेषताएँ के.पी. सक्सेना की है। जिसकेकारण हिन्दी व्यंग्य साहित्य में सक्सेना जी का नाम विख्यात है।

निष्कर्ष :

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने व्यंग्य साहित्य में समाज तथा व्यक्ति की दुर्बलता, विसंगति, मिथ्याचार, असामंजस्य, अन्याय पर प्रहार करते है। यह प्रहार तिलमिलाहट उत्पन्न करनेवाली वैदग्धपूर्ण शैली में अंकित होता है। व्यंग्य यथार्थ से अर्थात सत्य से अवगत कराता है । वह सत्य के लिए जूझने को उकसाता है। व्यंग्य समाज, धर्म, राजनीति के सत्य का दर्पण है। व्यंग्य यथार्थवादी, सामाजिक लज्ञा का शस्त्र है। व्यंग्य में रचनात्मक सूझ, व्यावहारिकता, विकसित दृष्टि का दर्शन मिलता है।

- व्यंग्य कोरा उपदेश नहीं होता। वह कथनी और करनी के अन्तर को स्पष्ट करता है। तीक्ष्ण बाण की अनी की तरह चुभता हुआ सालता रहता है।
- व्यंग्य शब्द की व्युत्पत्ति के संदर्भ में हिन्दी साहित्य कोश, नालंदा शब्दसागर इन कोशों के साथ–साथ आ. विश्वनाथ कालिका प्रसाद, शेरजंग गर्ग आदि के अनुसार व्यंजना शब्दिशक्ति से हुई है।
- पाश्चात्यों के मतानुसार व्यंग्य की व्युत्पत्ति 'सटायर' से हुई है। इसे स्वीकृती देनेवाले रामचंद्र वर्मा, डॉ. हरदेव बाहरी और बलदेव प्रसाद है।
- व्यंग्य की परिभाषा के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि, सामाजिक दुर्गुणों, विसंगतियों, मिथ्याचारों, पाखण्डों तथा मूर्खताओं को बेपरदा करते हुए, क्षोभ तथा क्रोध को जगाकर अन्याय के विरूद्ध, सामाजिक मर्यादाओं का रक्षण करते हुए, नैतिक, बौद्धिक, सामाजिक मर्यादाओं का रक्षण करते हुए, नैतिक, बौद्धिक, सामाजिक कसौटियों पर खरा उतरने के लिए अतिशयोकितपूर्ण तथा अतिरंजित किन्तु पूर्ण सत्य के रूप में पीड़ा और आक्रोश का ऐसा संयमपूर्ण सृजन अथवा साहित्यिक आघात, जो हास्य में कटुता और कथनी करनी के अंतर को स्पष्ट करता है, उसे व्यंग्य कहा जाता है। व्यंग्य के संदर्भ में भारतीय और पाश्चात्य सिद्धातों की परिभाषाएँ उल्लेखनीय है।

- भारतीय साहित्य के सभी कालों में व्यंग्य मिलता है।
- व्यंग्य को अंग्रेजी शब्द 'सटायर' के पर्याय रूप में विकसित शब्द है।
- हिन्दी साहित्य में सभी कालों में 'व्यंग्य' के आज प्रचलित शब्द के अलग-अलग अर्थ प्रचलित है।
- अंग्रेजी के 'सटायर' के लिए हिन्दी में विकृत, उपहास, खिल्ली उड़ाना, ठट्टा, ताना, जैसे कई शब्द प्रचलित है, जो व्यंग्य के पर्यायवाची है।
- हिन्दी के सभी कालों में 'व्यंग्य' के आज प्रचलित शब्द के अलग-अलग अर्थ प्रचलित है।
- डॉ. नरेन्द्र कोहली ने सोद्देश्य और प्रभावक व्यंग्य की गम्भीर प्रस्तुति की है। डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी का व्यंग्य सभी साहित्यकारों से अलग है। उन्होने इस देश को विभिन्न विसंगतियों पर तीखा प्रहार करने में अपना स्थान अग्रणी प्रस्थापित किया है और इसी कारण उनका व्यंग्य व्यावहारिक सच के एकदम निकट है। डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी के व्यंग्य में अद्भूत शिल्प, भर्त्सना और नूतन कथ्य का अनुपम समन्वय है। इसलिए डॉ. नरेन्द्र कोहली जी की पहचान व्यंग्य सर्जक के रूप में है।
- हरिशंकर परसाई का आज के व्यंग्य साहित्य को विकसित करने में बढ़ा योगदान रहा है, परसाई फैंटसी, मिथक, बिम्ब, मानवीकरण का प्रयोग व्यंग्य साहित्य में किया है। परसाईजी सीधी-सादी बात में व्यंग्य का अवकाश भाँप लेते है और उन्हें व्यंग्य के लिए अछूते विषय मिलते रहे है।
- रवींन्द्रनाथ त्यागी हिन्दी के प्रमुख हस्ताक्षर है। त्यागीजी की भाषा में विनोद, रूप-विधान, उद्धहरण-वक्रता है जिससे व्यंग्य में मनोहरिता एवं सहजता आ गयी है। त्यागीजी हिन्दी के उन व्यंग्यकारों में से है, जिन्होंने हिंदी व्यंग्य को संस्कार दिया है, एक सम्माननीय धरातल पर प्रतिष्ठित करके सार्थक व्यंग्य से व्यंग्य साहित्य को समृद्ध किया है।

- बरसानेलाल चतुर्वेदी ने समाज के विविध पक्षों पर मार्मिक चोट करके सत्य को उद्घाटित किया है। चतुर्वेदी का व्यंग्य लेखन हँसता है और विसंगतियों के प्रति सचेत भी करता है।
- श्रीलाल शुक्लजी कथोपकथन द्वारा व्यंग्यार्थ करते है। समाज और साहित्य की विविध विसंगतियों के प्रति एक सामान्य दर्शक की भाँति देखकर उसका पर्दाफाश करते है। शुक्लजी अंग्रेजी, संस्कृत, फारशी, उर्दू शब्दों का प्रयोग व्यंग्य साहित्य में करते है। इन्हीं कारण हिंदी व्यंग्य साहित्य में श्रीलाल शुक्लजी का नाम अधिक रूप से दिखाई देता है।
- लतीफ घोंघीजी की रचनाओं में नवीनता, आत्मीयता और सरलता है। घोंघीजी ने मौजूदा समाज, अर्थ, प्रशासन, संस्कृति, धर्म, राजनीति में उत्पन्न विद्रपताओं का सहज और निश्चल अंकन किया है। साफ बात कहने की आदत और सरल भाषा घोंघीजी के व्यंग्य साहित्य में स्पष्ट दिखाई देती है।
- डॉ. बालेंदूशेखर तिवारीजी व्यंग्य के कुशल रेफरी है, व्यंग्य में भाषा की विविधता, कथोपकथन के द्वारा व्यंग्य सहज उत्पन्न करना, नवीन उपमाओं का प्रयोग करके व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना आदि विशेषताएँ डॉ. तिवारीजी के व्यंग्य में दृष्टिगोचर होती है। उनके व्यंग्य से समाज की दुर्बलताओं और विकृतियों को नष्ट कर नूतन परिपूर्ण समाज के निर्माण की आशा करते है।
- सुदर्शन मजीठिया विकृतियों को वे एक साथ रौद्र में और वैष्णवी सौम्यता में प्रस्तुत करते है। कथोपकथन द्वारा व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना शेर-शायरी, अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग, प्रौढ भाषा, लोक प्रचलित भाषा का व्यंग्य प्रयोग करना मजीठिया की विशेषताएँ है।
- रोशनलाल सुटीरवाला के व्यंग्य रचनाओं में विषय विविधता दिखाई देती है। उलटे तर्कों का प्रयोग कर व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, सपाट बयान द्वारा व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना,

साधारण, अगम्भीर विषयों में से भी गहरा व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, साधारण, अगम्भीर विषयों में से भी गहरा व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना सुटीरवालाजी की विशेषताएँ हैं। मधुसूदन पाटील ने अपने व्यंग्य साहित्य से 'नावक के तीर' भाँति अनेक विषयों पर तीखा प्रहार किया है। पाटील की रचनाओं में विधा के सभी तत्त्व दृष्टिगोचर होते है। पाटीलजी ने व्यंग्य साहित्य में राष्ट्रीय एकता के सूत्र खोजने और जोडने का कार्य अपने व्यंग्य से किया है।

- शंकर पुणतांबेकर अपने व्यंग्य साहित्य को विस्तार और वैविध्य दोनों प्राप्त है। पाठक को समझाने की शक्ति तथा रोचकता ये गुण भी आपमें देखे जा सकते है। उनके द्वारा गढ़ी गयी कहावतों तथा उनके नये प्रयोग में जो नुकीलापन है, उसे भुलाया नहीं जा सकता ।
- इन्द्रनाथ मदान अपने व्यंग्य साहित्य में जीवन के किसी भी क्षेत्र में विसंगति, अत्याचार दिखाई देने पर अवश्य व्यंग्य के बाण चलाते है किन्तु साथ ही शीतलता भी प्रदान करते है। उनकी व्यंग्य रचनाओं में ताजगी तथा पैनापन साफ दिखायी देता है। इन्द्रनाथ महान व्यंग्य से हँसाकर अपने व्यंग्य द्वारा किये गये अधातों को सहने की शक्ति देते है।
- शरद जोशी जी अपने व्यंग्य से समाज की हर प्रकार की बुराई को निशाना बनाकर उस पर प्रहार किया है। शरद जोशी अपने व्यंग्य साहित्य से वैविध्य के साथ–साथ शैली के अनेकमुखी छवियों के धनी है। भाषा का अनूठापन और शिल्प की समस्त भंगिमाएँ शरद जोशी के व्यंग्य में विद्यमान है। उन्होंने पूर्ण क्षमता के साथ जीवन के सभी क्षेत्रों की विसंगतियों पर प्रहार किया है।
- गोपाल चतुर्वेदीजी अपने व्यंग्य साहित्य में विविधता है। उसमें रिश्तें, चोरी, राजनीति, नगरपालिका, प्रशासन, देशसेवा, संस्कृति, शिक्षा, नेता, बेईमानी, खेलजगत, अमीर–गरीब, भ्रष्टाचार आदि विषय पर सोचने के लिये मजबूर करते है।

- केशवचंद्र वर्मा अपने व्यंग्य साहित्य में व्यंग्यार्थ ध्वनित करना, सांस्कृतिक प्रसंगो, पौराणिक, कथोपकथन द्वारा व्यंग्यार्थ करना केशवचंद्र वर्मा के व्यंग्य की विशेषता है।
- के. पी. सक्सेना के व्यंग्य में गद्य–व्यंग्य को मंच प्रदान कर के आसपास की विसंगतियों पर हँसते हुए प्रहार करना, लेखनीय अंदाज की भाषा का प्रयोग उपमाओं से सशक्त व्यंग्य किया है। सक्सेना जी की विशेषता है।

उपरोक्त सभी व्यंग्यकारों ने राजनीतिक आखाड़े का पर्दाफाश किया है, समाज में क्रांतिकारक बदलाव लाने के लिए समाज को प्रेरणा दी है। सांस्कृतिक, धार्मिक, प्रशासकीय, आर्थिक, साहित्यिक, शैक्षणिक क्षेत्र से सम्बन्धित विकृतियों पर कविता, नाटक, निबन्ध, कहानी उपन्यास, एकांकी, संस्मरण, रिपोर्ताज, रेखाचित्र, साक्षात्कार आदि सभी व्यंग्य विधाओं में विसंगति पर तीक्ष्ण प्रहार किये है। सभी व्यंग्यकारों की रचनाओं में निम्नांकित विशेषताएँ प्रमुख रूप से दिखाई देती है। जिसमें मानवीकरण द्वारा व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना अलंकारिक शब्दों का प्रयोग कर व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, व्यंग्य को मनोरंजनात्मक शैली में प्रस्तुत करना, प्रौढ भाषा का प्रयोग, उपमान, उपमाओं प्रतीकों द्वारा व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करना, व्यंग्य प्रस्तुत करते समय अंग्रेजी, अरबी, फारशी, उर्दू आदि अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग व्यंग्य निर्मिती के लिए करना आदि विशेषताएँ व्यंग्य रचनाकारों में प्रमुख रूप से दिखाई देती है। इन में डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी का व्यंग्य अधिक तोर से अद्भूत शिल्प और नूतन कथ्य का अनुपम समन्वय है। डॉ. कोहलीजी का व्यंग्य साहित्य गम्भीर प्रस्तुति की जगह लेता है। इसलिए डॉ. कोहलीजी का व्यंग्य अधिक तोर से सोद्देश्य और प्रभावक व्यंग्य में जा चूका है। उनकी पहचान अब व्यंग्य सर्जक के रूप में है।

संदर्भ ग्रंथ

१) हिन्दी साहित्य कोश भाग–१, पृ. ८०४

२) नालन्दा विशाल शब्दसागर, पृ. १३०८

३) चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा एवं तारनिश झा– संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ.११०८

४) प्रसाद कालिका –बृहद् हिन्दी कोश –पृ६३१

५) गर्ग शेरजंग, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य , पृ. २३

६) बाहरी हरदेव –बृहत अंग्रेजी हिन्दी कोश भाग एक, पृ.१६३७

७) वर्मा रामचन्द्र –मानक हिन्दी कोश, पृ.१२३

८) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृ. १५०

९) उधृत प्रेम टंडन नारायण –हिन्दी, साहित्य में हास्य और व्यंग्य, पृ. ३४०

१०) उधृत– देसाई बापुसाहेब –हिन्दी व्यंग्य रचनाएँ व्यंग्यविधाशास्त्र और इतिहास,पृ.१८

११) गर्ग शेरजंग –स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, पृ.३७

१२) वैबस्टर – हिन्दी वही, पृ.३३

१३) स्विप्ट जीवनाथन – बेटल ऑफ बुक्स, पृ. ६

१४) The World Books of britannica volume - 19, pageno.1086

१५) परसाई हरिशंकर – सदाचार का तावीज, पृ.१०

१६) कोहली नरेंन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाए, पृ. ७

१७) जोशी शरद –मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, – भुमिका

१८) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृ. २१५

१९) कोहली नरेंन्द्र – जगाने का अपराध पृ. १४

२०) कोहली नरेंन्द्र – आधुनिक लडकी की पीडा पृ.६२

२१) कोहली नरेंन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ.६२

२२) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृ. २०३

२३) मजीठिया सुदर्शन – समकालीन हिंदी व्यंग्य एक परिदृश्य, पृ. ३७

२४) मजीठिया सुदर्शन – समकालीन हिंदी एक परिदृश्य, पृ. ४३

२५) मजीठिया सुदर्शन – समकालीन हिंदी एक परिदृश्य, पृ. ४७

२६) परसाई हरिशंकर – सदाचार का तावीज, पृ. ११०

२७) परसाई हरिशंकर – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ पृ.३४–३५

२८) परसाई हरिशंकर – सुना भाई साधो (मुखपृष्ठ के अतंर्भाग पर)

२९) परसाई हरिशंकर – परसाई रचनावली पृ. ५६

३०) व्यंग्यशती – परसाई हरिशकंर विशेषांक

३१) परसाई हरिशंकर –रचनावली खण्ड ६– पृ. ७६

३२) त्यागी रविंद्रनाथ – शोकसभा, पृ. ११५

३३) गोयका कमल किशोर – रविंदनाथ त्यागी प्रतिनिधि रचनाएँ, पृ. २३०

३४) त्यागी रविंद्रनाथ – लोकसभा, पृ. ३०

३५) त्यागी रविंद्रनाथ – भद्रपुरूष पृ. ८४

३६) त्यागी रविंद्रनाथ – भद्रपुरूष (मुखपृष्ठ के अतंर्भाग पर)

३७) गोयका कमल किशोर – त्यागी रविंद्रनाथ – प्रतिनिधि रचनाएँ – पृ.३३४

३८) कमल किशोद गोयका – त्यागी रविंद्रनाथ – प्रतिनिधी रचनाएँ – पृ.३३२

३९) त्यागी रविंद्रनाथ – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ. ३

४०) गोयका कमल किशोद – रविंद्रनाथ त्यागी – प्रतिनिधी रचनाएँ – पृ.३३०

४१) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृ. २३०

४२) चतुर्वेदी बरसानेलाल – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ. ३१

४३) चतुर्वेदी बरसानेलाल – बुरे फँसे पृ. ३४

४४) चतुर्वेदी बरसानेलाल – महामति चाणक्य राजदूत बने पृ. ५६

४५) चतुर्वेदी बरसानेलाल – भोला पंडीत की बैठक पृ. ४४–४५

४६) चतुर्वेदी बरसानेलाल – मिस्टर चोखेलाल पृ. १५६

४७) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृ. ७८

४८) शुक्ल श्रीलाल – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ. १०८

४९) शुक्ल श्रीलाल – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ. ०८

५०) मदान इन्द्रनाथ – हिंदी की हास्य–व्यंग्य विधा का स्वरूप और विकास, पृ.४२

५१) घोंघी लतीफ – बधाईयाँ के देश (मुखपृष्ठ के अन्तर्भाग पर)

५२) घोंघी लतीफ – व्यंग्य कि जुगलबंदी, पृ. ८०

५३) घोंघी लतीफ – व्यंग्य कि जुगलबंदी, पृ. ६१

५४) तिवारी बालेन्दुशेखर – मेरी प्रिय व्यंग्य रचनाएँ, प्लॅप से

५५) तिवारी बालेन्दुशेखर – किरायेदार का साक्षात्कार, पृ. ८५

५६) तिवारी बालेन्दुशेखर – मेरी प्रिय व्यंग्य रचनाएँ, पृ ३८

५७) तिवारी बालेन्दुशेखर – किरायेदार का साक्षात्कार, पृ. ६६

५८) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी व्यंग्य के प्रतिमान, पृ. २९

५९) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी व्यंग्य के प्रतिमान, पृ. ३४

६०) सुरीरवाला रोशनलाल – पानी शराब गच्छामी, पृ.१६३

६१) सुरीरवाला रोशनलाल – मूर्ख शिरोमणी, पृ.१४८

६२) पुणतांबेकर शंकर – विजिट यमराज की, पृ.८१

६३) पुणतांबेकर शंकर – कैक्टस के काँटे – दो शब्द

६४) पुणतांबेकर शंकर – बदनामचा, पृ.४

६५) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृ.२१९

६६) मदान इन्द्रनाथ – विदा अलविदा, पृ.१४

६७) मदान इन्द्रनाथ – रानी और कानी, पृ.१०

६८) मदान इन्द्रनाथ – निबंध और निबंध, पृ.६५

६९) जोशी शरद – किसी बहाने, पृ.११४

७०) जोशी शरद – जीप पर सवार इल्लियाँ, पृ.४१

७१) जोशी शरद – पिछले दिनों, पृ.१०

७२) जोशी शरद – मेरी प्रिय व्यंग्य रचनाएँ, पृ.७

७३) जोशी शरद – शशि मिश्र (प्रेम जनमेय) पृ.७५

७४) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृ.२०७

७५) जोशी शरद – यथा संभव, पृ.१०२

७६) जोशी शरद – यथा संभव, पृ.१९४

७७) प्रकर अप्रैल, १९८१ पृ. १४

७८) मदान इन्द्रनाथ – हिंदी की हास्य–व्यंग्य विधा का स्वरूप और विकास, पृ.४२

७९) चतुर्वेदी गोपाल – खंभो का खेल, पृ.५३

८०) चतुर्वेदी गोपाल – खंभो का खेल, (मुखपृष्ठ के अतंर्भाग पर)

८१) चतुर्वेदी गोपाल – दुम की वापसी, पृ.८०

८२) चतुर्वेदी गोपाल – खंभो का खेल, पृ.७७

८३) चतुर्वेदी गोपाल – दुम की वापसी, पृ.८

८४) चतुर्वेदी गोपाल – दुम की वापसी, पृ.१९

८५) वर्मा केशवचंद्र – बृहन्नता का वक्तव्य, पृ.१८०

८६) वर्मा केशवचंद्र – बृहन्नता का वक्तव्य, पृ.३

८७) वर्मा केशवचंद्र – बृहन्नता का वक्तव्य, पृ.१७

८८) वर्मा केशवचंद्र – बृहन्नता का वक्तव्य, पृ.१२०

८९) तिवारी बालेन्दुशेखर – हिंदी व्यंग्य के प्रतिमान, पृ.२९

३.0. प्रस्तावना :-

आजादी के पश्चात् भारतीय राजनीति ही नहीं समाज भी प्रभावीत हुआ है। स्वाधीन भारतीय समाज को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा है। इनमें कुछ समस्याएँ तो उसे परंपरागत रूप से विरासत में प्राप्त हुई है। और कुछ पाश्चात्य जगत् के प्रभाव से प्राप्त हुई है। राजनीतिक आज़ादी को अंतिम लक्ष्य मानकर भारतीय समाज संतुष्ट हो गया। लेकिन उसके उपभोग के लिए समाज में अपेक्षित वातारण का निर्माण न हो सका। गांधीजी ने आज़ादी को गाँव-गाँव तक पहुँचने पर बल दिया था। उनकी ग्राम स्वराज्य की भावना पूरी न हो सकी। ग्रामीण जीवन को उन्नत करने के प्रयत्न तो हुए, किन्तु उससे गाँवकी सादगी और सरलता ही नष्ट हुई। ग्राम हो या शहर राजनीति ने सबको प्रभावित किया है। स्वार्थ, अहम्, फरेब-धूर्तता, दुर्गुण आदि बुराइयाँ समाज में फैली हैं। राजनीति के कारण समाज में जातिवाद का जहर तेज हुआ है, साम्प्रदायिक वैमनस्यता को खाई और चौडी हुई है तथा असामाजिक तत्वों के हौसले बुलंद हुए है।

आज़ादी के पश्चात् भारत में अनेक परिवर्तन हुए है। औद्योगिक संस्थानों की स्थापना हुई है। नगरों का आकर्षण बढ़ा है रेल और संचार सुविधाओं का विस्तार हुआ है। प्रसार-प्रचार के माध्यमें में वृध्दि हुई है। शिक्षा के बढ़ते प्रभाव ने भी समाज को नूतन दृष्टि प्रदान की है। राष्ट्र तेजी से विकास के पथ पर अग्रसर हुआ है और हम दुनिया के करीब संपर्क में आये है। इस सबके परिणाम स्वरूप हमारे जीवन फलक का विस्तार हुआ है। एक ओर आजादी ने व्यक्ति की आकांक्षाओं को जगाया है तो दूसरी ओर सिनेमा की रंगीन दृश्यों ने उसे सोचने को पंख दिये है। नागर सभ्यता की चकाचौंध ने उसकी चाहतों को बढाया है। अब उसकी दुनिया ग्राम्य जीवन वाली न रह गयी। रहन-सहन, खान-पान सब में परिवर्तन की लालसा ने उसे बेचैन कर दिया है। यथार्थ का सामना करने की उसकी शक्ति भी नष्ट हो चलती है। चाहतों को अंजाम देने का सामर्थ्य उसमें था ही नही, इस तरह उसका उपहार बनकर रह गया है। समाज में स्वार्थ को प्रधानता हुई और भोग-लिप्सा

का आग्रह बढ़ा है। हम भूल गये है की, भारत जैसे देश में स्फूर्ति और गति तभी प्राप्त होती हो सकती है, जब विकास और परिवर्तन की प्रेरक शक्ति के रूप में स्वार्थ और मान्यताओं का आग्रह होता है। आज साधन जुटाने के प्रयत्नों में भागता इंसान रीति–नीति भूल बैठा है। पैसा और पद व्यक्ति की प्रतिष्ठा के मानक बन गये है। उस प्रतिष्ठा के व्दारा पर प्रतिभा नाक रगडने लगी है। तब व्यंग्यकार ने व्यंग्य के माध्यम से सामाजिक विषमताओं पर चोंट कसी है।

३.१. सामाजिक परिभाषा

सामाजिक परिभाषा समाज का अर्थ होता है। मनुष्य समाजप्रिय प्राणि है। एक ऐसा समूह जो मिल–जुलकर एक साथ रहता हो। अर्थात मानव के समूह में रहने की प्रवृत्ति को समाज का नाम दे दिया जाता है। समाज में व्यक्ति अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक–दूसरे पर आश्रित रहता है। इन संबंधो का एक बहूत बड़ा जाल बन जाता है और इसी जाल को समाज की संज्ञा दी जाती है। विभिन्न समाजशास्त्रीयों ने समाज की अलग–अलग परिभाषएँ दी है, निम्नानुसार हैं :– समाज को परिभाषित करते हुए मैकाईवर (पेज) लिखे है, ''समाज चलनों और कार्य विधियों की, प्रभुत्व और स्वच्छंदताओं की व्यवस्था है।''[१]

''समाज स्वयं एक संघ है, एक संगठन है, औपचारिक संबंधो का योग है जिसमें सहयोगी व्यक्ति परस्पर संबंधित है।''[२] इस प्रकार सभी लोग इकट्ठा आने से समाज का निर्माण होना है।

समाज को परिभाषित करते हुए टियुअर ने लिखा है, ''समाज एक अमूर्त धारणा है जो एक समूह के सदस्यों के बच पाए जानेवाले संबंधो की संपूर्णता का बोध कराती है।''[३] इससे स्पष्ट है कि समूह द्वारा ही समाज को सार्थक अर्थ प्राप्त होता है।

इन परिभाषाओं का अवलोकन करने पर पता चलता है कि, समाज का वास्तविक आधार सामाजिक संबंध ही है। अर्थात समाज के संबंध में यह कहना सर्वाधिक उपयुक्त प्रतीत होता है कि, समाज और कार्यप्रणालियों, प्रभुत्व और पारस्परिक सहायताओं, विविध समूह और श्रेणियों, मानव व्यवहार के नियंत्रणों और स्वतंत्रताओं की व्यवस्था है।

३.२. समाज, साहित्य और व्यंग्य का संबंध –

समाज का स्वरूप जब भ्रष्ट हो जाता है। समाज में चल रही कुरीतियों, परंपराओं के लिए स्वयं उत्तरदायी होता है। समाज के अवसरवाद की व्यापकता समाज के ही कारण है। आडंबर, दिखावा आदि समाज में पनपता है। समाज में कई प्रकार की सामाजिक समस्याएँ पैदा होती है। आज रिश्वतखोरी, काला बाजारी, समाज में बूरी तरह फैल गयी है। उसे बाहर निकालने का प्रयत्न कोई नही करता। रिश्वत देनेवाले और लेनेवाले बस अपनी विवशता ही बताते रहते है। व्यंग्यकार को रोष तब उसकी रचना में प्रगट होता है।

समाज में आडंबर, ढोंग, धर्मांधता, जातिवाद एवं चमत्कारों का निर्मूलन नही हो पाया है। इसी कारण जाति–प्रथा के विशेष से निम्न वर्ग की बस्तियाँ जलायी जाती है। ऐसी विसंगतियों पर व्यंग्यकार कटू आलोचना व्दारा व्यंग्य करते है। अनुष्ठानों और कर्मकाण्डों के बीच आज़ादी के पश्चात् भारतीय राजनीति ही नही, समाज भी प्रभावित हुआ है। स्वाधीन भारत में पाखण्ड, आडंबर, व्यभिचार और भ्रष्टाचार पनप रहा है। धर्म के नाम पर एक ओर भोली जनता का ठगा जा रहा है, तो दूसरी ओर पाप को प्रश्रय मिल रहा है। धर्म का रूप कुत्सित, घीनौना और विकृत बन गया है। सत्य तो यह है कि धर्म ने अधर्म का चोला पहन लिया है। धर्म ओर देवी–देवताओं के नाम पर समाज का शोषण किया जा रहा है।

कई समस्याओं के कारण भी विसंगतियों को पनपने का अवसर मिलता है। आज देशसेवा के नाम पर स्वार्थ सिध्दि को अधिक महत्व देनेवाले की संख्या भी समाज मे ंकम

नहीं है। समाज में उच्चवर्ग, मध्यमवर्ग तथा निम्नवर्ग ये तीन भेद अर्थ के आधार पर होते हैं। हर श्रेष्ठ माना जानेवाला वर्ग निम्न वर्ग को धन के बल प्रताड़ित करता रहता है। स्वाभाविक है कि, निम्नवर्ग अपने स्तर से ऊपर उठना चाहता है किंतु उच्च वर्ग उसके मार्ग में रोडा अटकाता है। इसी विसंगति के फलस्वरूप विसंगतियाँ उभरती है। इस प्रकार जब सामाजिक परिवेश में प्राप्त विसंगतियाँ व्यंग्यकार की कटू आलोचना का शिकार बन जाती है, तब व्यंग और समाज का संबंध चोली दामन का बन जता है।

३.३. हिन्दुस्तान में स्थित सामाजिक वर्ग –

अंग्रेजो आगमन से पहले भारतीय समाज मुख्यतः दो वर्गों में विभक्त था, एक उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग। किंतु विप्लव के उपरांत उच्च वर्ग का पतन हुआ और लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीति से मध्यमवर्ग का उदय हुआं जो पैतृक संपत्ति के अभास में तथा पढ़े–लिखे होने के कारण किसानी पा मजदुरी न कर पाने की मनोदशा में अपने क्षेत्र से बाहर जाकर नौकरी करके अपनी अजीवि चलाने लेगा।

आज़ादी के पश्चात् आज भी भारत में प्रमुख रूप से तीन वर्ग दिखाई देते है।

१) उच्चवर्ग २) मध्यवर्ग ३) निम्नवर्ग

३.३.१. उच्चवर्ग :

इस वर्ग में जमींदार, साहूकार, पूँजीपति, नेता और बडे–बडे अफसरों का समावेश हो जाता है। इन उच्चवर्गीयो में दो प्रकार की विशेषताएँ प्रायः पाई जाती है। इनमें कुछ तो ऐसे हैं जो अपनी कुलीनता, वंश–परंपरा तथा अभिजात का निर्वाह जीवन पर्यंत करते है। ऐसे लोगों में अपने उच्च वर्ग की अहंमन्यता कूट–कूट कर भरी होती है, तथा कुछ ऐसे है जिन्होंने धन–संपत्ति के आधिक्य में अपनी आत्मा को ही बेच डाला है। इस वर्ग में व्याप्त भोग–विलास, मदिरा–पान, पर स्त्री गमन तथा अनैतिक संबंध स्थापित करना जैसे इस

वर्ग का आवश्यक अंग बन गया है। धन ने इनकी आत्मा को इतना नीचे गिरा दिया है कि नारी की इज्जत से खेलना इनका प्रिय खेल बन गया है।

राजाओं, जमीदारों, साहूकार तथा पूँजीपतियों में ही इन विकृतियों का दर्शन होता है। जहाँ धन है, वहाँ किसी न किसी रूप में अनैकिता का भी निवास उच्चवर्ग के कुछ युवा पीढ़ी के नवयुवक भी है। जिनमें अपने वर्ग की सामान्य विकृतियों के होते हुए भी एक नई चेतना का प्रादुर्भाव परिलक्षित होता रहता है। जहाँ उच्च वर्ग में अधिकांशतः कंचन, कामिनी और कादम्ब का पाशविक नर्तन होता रहता है, वही इस वर्ग का एक अंग ऐसा भी है जो अपने कुल गौरव से प्रेरित होकर अथवा जीवनानुभवों से 'चेतना' ग्रहण करके सच्चरित्रता, उदारता और मानव प्रेम के गुणों से अभिमंडित है।

अंत में, यह मानकर चलें कि, कार्लमार्क्स ने दुनिया के शोषित वर्ग को एक नई ज्योति प्रदान की जिससे न केवल सर्वहारा का उत्थान हुआ बल्कि पूंजीपाति वर्ग ने भी शोषण प्रवृत्ति पर रोक सी लगा दी। मार्क्स ने उन्हीं मूल्यों को ज्यादा उजागर किया जिन्होने जनता के शोषण शारीरिक यातनाएं, अंधविश्वासों और रूढिवाद को जड़ से उखाड फेंकने का संदेश दिया। मार्क्सवादी विचारधारा लोकमंगल की भावना से अभिहित है। मार्क्सवादी विचारधारा में पूंजीवादी अवस्था का पूर्णतः विरोध किया गया है। अपने अधिकारों के लिए क्रांति करने का उपदेश तक उन्होंने दिया है।

३.३.२ मध्यवर्ग :

भारतीय समाज का मध्यवर्ग पैतृक संपत्ति के अभाव में पढ़ लिखकर नौकरी करके अपना जीवन निर्वाह करने का प्रयत्न करता है। इस लिए इस वर्ग में शिक्षा का सर्वाधिक प्रसार होता है। मध्यवर्ग का जीवन सर्वाधिक प्रसार होता है। मध्यवर्ग का जीवन सर्वाधिक उथल-पुथल से युक्त रहता है। प्रस्तुत वर्ग में सड़ी-गली रूढियों से छुटकारा पाने की दृष्टि कामना छिपी हुई है।

उच्च शिक्षा के प्रभाव से वह अपने की नवीनता की ग्रहण करने के लिए उत्सुक हो उठता है। किंतु इसके लिए अपने समाज के उपहास और विरोध का सामना करना पड़ता है। वह न केवल अपने समाज के उच्च वर्ग और निम्न वर्ग का सामना करना पडता है। वह न केवल अपने समाज के उपहास और विरोध का सामना करता है। वरना अपने वर्ग के पिछड़े लोगों का भी सामना करता है। मध्यवर्ग में जीवित रहने का संघर्ष भयानक है। इस वर्ग के पास विशिष्टता का ढोंग है। संपन्नता का दिखावा है। इसके पास सामाजिकता है। इसके पास नैतिकता है। इन सामाजिक और नैतिक मान्यताओं का निर्माता यह मध्यवर्ग ही होता है। ये मान्यताएँ केवल इस मध्यवर्ग के लिए सत्य है और इन मान्यताओं को वह अपने सिरपर लादे हुए है। इस मध्यवर्ग के पैर लड़खडा रहे है, लेकिन अपने सिर के बोझ कों उतार फेंकने का साहस उसके पास नही है।

३.३.३. निम्नवर्ग :

भारतीय समाज का यह वर्ग अज्ञान एवं अन्य परंपराओं से जुडी कुरीतियों और कुप्रथाओं से पूर्णरूप होने का सर्वथा अभाव पाया जाता है। यह विश्वासपात्र होता है और अपनी जात देकर अपने मालिक की सेवा करता है, परंतु धीरे–धीरे स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इस में भी निरंतर परिर्वतन होता आया है। अब स्वामी भक्ति और निष्ठावान संस्कारों की परंपरा बीते समय की बात हो गई है।

निम्न वर्ग के व्यक्ति का जीवन पशुवत है। उसकी सारी जिंदगी रोटी, कपडा और मकान के स्वप्न देखते हुए अतीत हो जाती है। वे शोषण, अत्याचार, रिश्वतखोरी, भाई–भतीजावाद के कारण जीवन में आगे बढ़ने का अवसर प्राप्त नहीं कर पाते। सत्ताधारी और पूँजीपति वर्ग मिलकर अपने वर्गीय हितों के लिए सामान्यजन की अवहेलना करके अपने स्वार्थो को गति देता हैं. किंतु उनका जीवन गतिहीन होता है। वे स्वयं अपने जीवन को

सुखी समृध्द और सफल नहीं बना पाते। धीरे–धीरे सामान्य वर्ग 'चेतना' जागृत होने लगी है।

स्वतंत्रता से पूर्व परकीय सत्ता से संघर्ष देश प्रमुख समस्या थी मुख्यतः स्वातंत्र्यपूर्व का काल आंदोलन का काल माना जा सकता है। यह नूतन आत्म विश्वास एवं भविष्य की आशा–आकांक्षाओं का युग रहा है। समाज में उँच–नीच, जाति–पांति, उनका धार्मिक आड़ंबरो आदि का प्राधान्य था। स्वतंत्रता आंदोलन को गति प्रदान करने के लिए उनका प्रभाव कम करने की अवश्यकता थी। जिससे यह आंदोलन जन–सामान्य तक पहुँच सके और समाज एवं उच्चवर्ग उसमें भाग ले सके! पिछड़ा अथवा निम्न वर्ग आर्थिक दुरावस्था के कारण उच्चवर्ग के शोषण के चंगुल में फँसा था। वह उपेक्षित एवं पद्दलित रहा उसे सहानुभूति की आवश्यकता थी। महात्मा गांधी का ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ। गांधीने आश्रमों के माध्यम से सामाजिक समता का नया प्रयास प्रारंभ किया। गांधी बाबा सबके हुए सभी गांधी बाबा के अनुयायी बने। समाज के सभी वर्गों पर गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव पड़ा। समभाव का प्रभाव पड़ा। समभाव का नया प्रयास प्रारंभ हुआ। ऐसी भी नहीं था कि सभी वर्ग के लोभ निःसंकोच इस समता आंदोलन में सहभागी हुए। जो लोग सक्रिय नहीं रहे वे भी वैचारिक दृष्टि से गांधी के विचारों का खुलकर विरोध कर सके। लोगों मे एक आशा थी आज़ादी मिलेगी। न कोई भूखा होगा न कोई नंगा होगा। देश अपना होगा। शासन अपना होगा। फिर उँच–नीच का भेदभाव नहीं रहेगा। देश का धन देश में रहेगा। चारों और सुख–समृध्दि का राज्य होगा। ऐसे रामराज्य स्थापना करना इनका उद्देश था।

स्वतंत्रता के पश्चात् आशाओं की भित्ति चरमराकर रह गई। एवं उमंग थी। प्रारंभिक काल में नवीन आशाएं एवं उमंगे थी। किंतु धीरे–धीरे निराशा और स्वार्थपरता बढती गई। सांप्रदायिकता, व्देष और रक्तपात से मानवता आहत हुई। औद्योगिक नीति के परिणाम स्वरूप कुछ घरानों के हाँथो में पूँजी का संग्रह बढता गया। आर्थिक असमानता में वृध्दि

हुई। सत्ता की राजनीति और लूटवाली व्यवस्था के कारण जातिगत ˙ वर्गगत विशेष प्रबल हुआ।

भारत में एक विशेष वर्ग की तड़क भड़क एवं संपन्नता उन्हें अपनी सीमित आय को तोड़ने –जोड़ने पर विवश कर देती है। एक वर्ग असीमित अभावो के बीच मध्यवर्ग भी है। जो त्रिशंकू की अवस्था में भीतर ही भीतर टूँट रहा है। समाज में विषमता का विष बढ़ रहा है। सभी वर्गो में अकेलापन और आत्मनिर्वासन तथा अजनबीपन की पहचान घनीभूत हुई है।

३.४. सामाजिक संबंधो के बदलाव पर व्यंग्य :

सामाजिक संबंधो में आज वे दिन टूँट रहें है और मान्यतायें विकृत हो रही है। व्यक्ति या तो तटस्थता का जीवन जी रहा है या नितांत स्वार्थी बन गया है। व्यक्ति के स्वार्थी प्रवृत्ति पर व्यंग्यकार चोट करते हुए लिखते है, ''आज भी चारों और जो भ्रष्टाचार है, उससे मुझे क्या लेना–देना मुझे यदि बस मिल जाती है तो सारे राष्ट्र का यातायात ठीक है। मुझे थोडी सी जान–पहचान से डबल रोटी प्राप्त हो जाती है तो देश में अन्न का कोई संकट नही है।''[४] इस प्रकार व्यक्ति संवेदना हीन बनजा रहा है। मै सुखी तो संसार सुखी दूसरों के संकट से मुझे क्या लेना–देना इस प्रवृत्ति ने ही समाज की उन्नति में अवरोध उत्पन्न किया है। दूसरों के दुःख दर्द के प्रति कोई सहानुभूति नही होती यदि हमदर्दी भी की जाती है, तो केवल औपचारिकतावश की जाती है। यह सामाजिक संबंधो मे बदलाव है। यह स्थिति समाज के हर हिस्सें में है। इस प्रकार व्यक्ति के स्वार्थी प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया गया है।

आज स्वार्थ परायणता एवं स्वार्थ के आधार पर बनाई गई मित्रता सबसे अधिक पाई जाती है। सच्चे रिश्तेदारों की अवहेलना की जाती है। इसी स्वार्थ परायणता को लक्ष्य कर डॉ. नरेंद्र कोहली व्यंग्य कसते हुऐ लिखते है, ''हमारे पडोसी शरीफ लोगों की सूची बनाने

के पश्चात् सोची की पत्ती जमा की जा सकती है और चीनी की कटोरी। इस तरह दूसरों के खर्च पर अपना काम चलाने की पारिवारिक परपंराये बन जाती है।''[५] इस प्रकार आज समाज में मित्रों एवं रिश्तेदारों की अवहेलना की जाती है। इसे कोहलीजी जी ने उजार किया है।

आज पिता–पुत्र संबंध भी बड़े प्रजातांत्रिक हो गए है। किसी नियंत्रण की या अनुशासन की आवश्यकता नहीं रह गई है। बाप और बेटे दोनों ही अपने–अपने कमजोरियों के शिकार है, किंतु वे यह सोचते हैं कि, वे एक दूसरे को मूर्ख बना रहे है– जबकि परस्पर एक–दूसरे से खुद मूर्ख बन रहे है स्वाभाविक है, पिता के संस्कार पुत्र को मिलेंगे ही। बाप–बेटे के इन सनातन संबंध पर डॉ. कोहलीजी व्यंग्य करते हुए वह लिखते है, ''अजी हमारे बाप की क्या बात है। जीवन–भर जो कमाया, वह उड़ाया। साले ने यह भी ध्यान में नहीं रखा कि ये जो पिल्ले मैंने पैदा कर सड़कों पर फेंक दिये है, इनके लिए भी मेरा कोई दायित्व है, और अब वह बूढ़ा हो गया है, बीमार रहता है इसलिए चाहता है कि सौ नहीं तो पचास रूपया महीना तो उसे आवश्यक ही भेजूँ।''[६] इस प्रकार पिता–पुत्र संबंधो की ओर संकेत करते हुए 'प्राप्त स्थिति पर' व्यंग्य किया गया है।

विडंबना यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने चारों ओर घिरे आर्थिक और सामाजिक संकट से सरोकार नहीं रखता है। एक संभ्रात मध्यमवर्गीय सज्जन हैं। सफेदपोश है, ऑक्सफोर्ड से शिक्षा प्राप्त की है। बाकी जीवन देशी रखेंली और विदेशी मदिरा के सहारे व्यतीत किया है। वे गालिब और शतरंज के शौकिन है। उन्हे एक ही समस्या कचोट रही है कि, शराब महँगी होती जा रही है। अन्य कोई न गम है और न कोई शिकायत है। इस पर व्यंग्यकार 'मूल्यों का संकट' में लिखते है, ''आप शराब की बात कर रहे हैं, बाकी लोगो को देखिए जिन्हें रोटी भी नहीं मिल रही। लोग कमरें में रहते है, फुटपाथपर सोते हें बेकार और मजदुर चोर बनने के लिए मजबूर किए जा रहे है....... सरकार समाजवाद लाना चाहती

है और विरोधी पक्ष है कि उसे आने नहीं देता। पंचवर्षीय योजनायें खलास हो रही है और हरित क्रांति जो है, वह पीली होती जा रही है।''[७] परस्पर संबंध में आ रहे बदलाव का यहाँ उचित दर्शन होता है। पर व्यंग्य किया गया है। एक प्रायमरी स्कूल में मास्टर हैं। उन्हें यदि मुफ्त का अखबार पढ़ने को मिल जाता है तो अखबार पढ़ लेते है, नहीं मिलता है तो कई दिन तक नहीं पढ़ते। रूस, अमरिका हमेशा झगड़ते रहते है। उन्होंने स्थिति से पूर्ण समझौता कर लिया है। तृप्ति एवं संतोष उनकी विवशता है। मजबूरी का नाम तृप्ति है। व्यंग्यकार ऐसी तृप्तता पर मति वैदग्यव्दारा प्रहार करते है,'' मुझे याद आता है कि पिछले साल जब मैं बीमार पड़ा था तब मेरी भी भूख मर गई थी, अच्छे से अच्छे व्यंजन मेरे सामने रखे गये थे, और मैं मुँह फेर लेता था।''[८] यह तृप्तता नहीं बल्कि जीवन के प्रति निराशामय एक बडी विकृति है। जिससे निम्न वर्ग का अधिकांश भाग ग्रसित है।

सामाजिक संबधो के बदलाव पर कहा जा सकता है कि, आज सामाजिक संबधो में बदलाव आया है। मानव मूल्य टूँट रहे हैं और मान्यताएँ विकृत होती जा रही है। आदमी या तो तटस्थता का जीवन जी रहा है या नितांत स्वार्थी बन गया है। बाप और बेटे दोनों ही अपने–अपने स्वभाव की लाचारियों और कमजोरियों के शिकार है। विडंबना यह है कि, प्रत्येक व्यक्ति अपने चारों और घिरे आर्थिक और सामाजिक संकट से सरोकर नहीं रखता है। आदमी की यह आत्मकेंद्रित प्रवृत्ति समाज की दृष्टिसे एवं सामाजिक संबधो की दृष्टि से अधिक विघातक है। आधुनिक बदलाव की स्थिति को रेखांकित किया है।

३.५. सामाजिक समस्याएँ और व्यंग्य का संबंध :

आज देश की सत्ता पर नीच प्रवृत्तिवाले सत्तालोलूप, स्वार्थांध और निकम्मे लोगों ने कब्जा जमाया है। वे जनता के सुख–दुःख तथा उनकी समस्याओं के प्रति संवेदनशील नहीं है। जहाँ शासन तंत्र भ्रष्ट हो, जनता में अकर्मण्यता एवं मिथ्या संतोष की भावना घर किये हो वहाँ अनेक समस्यायें उत्पन्न होती है। बेरोजगारी की समस्या, दहेज की समस्या

जाति–पाति की समस्या, अंधश्रध्दा की समस्या, रूढि–परंपरा की समस्या, त्यौहार–उत्सव की समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या, बाढ़ की समस्या आदि समाजिक समस्याओं ने देश को जकड़कर रखा है।

आर्थिक विषमता से उत्पन्न बेकारी की समस्या, राष्ट्र में निरंतर बढ़ती जा रही है। पर्याप्त शिक्षा ग्रहण कर लेने के पश्चात् भी नवयुवकों को रोजगार नहीं मिल पाता। उनका पारिवारिक जीवन कलह और क्लेशयुक्त हो रहा है। बढ़ती हुई जनसंख्या तथा पढ़े–लिखों की समस्या दिन दूना रात चौगुना जैसी बढ़ रही है। हर साल बजट के समय बेकारी के उन्मूलन का वादा किया जाता है। समस्या यथावत भी न रहकर ज्यादातर बढ़ रही है। स्वाधीनता के पश्चात् भारतीय–समाज में दहेज प्रथा का विकराल रूप हमारे सामने आया है। दहेज के कारण विवाह के समय परिवार बुरी तरह टूँट जाते है। घर गिरवी रखे जाते है। स्थिति कभी–कभी ऐसी हो जाती है कि, घर से कन्या बिदा होने के साथ ही साथ घर भी समाप्त हो जाता है। दहेज के कारण कन्या का जन्म अशुभ माना जाता है। यद्यपि इस संबंध मे नियंत्रण हेतू कानूनी प्रावधान है तथापि व्यवहार में वह अद्रभावी ही है। इस सामाजिक समस्याने देश में विकराल रूप धारण कर लिया है।

भारतीय संविधान व्दारा छूआ–छूत और जातिगत् भेदभाव की समाप्ति का उद्घोष किया गया किंतु व्यवहार में उसके विपरित आचरण ही दिखाई देता है। हर जगह जाति–पाँति का ही बोलबाला है। धर्म के नाम पर लोग अपना–अपना अस्तित्व अजमाने लगे है। देश में यह समस्या खड़ी होने की संभावना है।

भारत धर्मनिरपेक्ष देश है। धर्म की स्वतंत्रता के कारण धर्म के नाम पर कुकर्म करने की भी स्वतंत्रता है। अतः धर्म का क्षेत्र भी व्यंग्य का केंद्र बन गया है। धार्मिक अंधश्रध्दा के बल पर दंगा, धर्म के नाम पर दिखावा, अधंश्रध्दा का सहारा लेकर लूटने वाले लोगों के कारण समाज में अंधश्रध्दा समस्या बन गयी है। भारतीय समाज में रूढ़ि परंपरा का

बोलबाला है। बालविवाह तथा विधवाओं की स्थिति खेदजनक है। ठेकेदार तगडे हो रहे है, जीते जी बहूत सी नारियाँ सति होती जा रही है। रूढ़ि परंपरा के कारण सामाजिक समस्या बढ़ती जा रही है। प्रशासन तंत्र की भ्रष्टता पर जितना लिखा जाए उतना कम है। हिंदी व्यंग्यकार ने अपनी पीड़ा को अभिव्यक्ति देते हुए लिखा हैं– सारे सागर की मसी करे और सारी जमीन का कागज फिर भी भ्रष्टाचार का भारतीय महाकाव्य अलिखित हो रहेगा। भ्रष्टाचार सामाजिक समस्या बन गयी है। जिसके कारण समाज खोखला बन गया है। उपरोक्त सभी सामाजिक समस्याओं को आधुनिक हिंदी व्यंग्यकारों ने अपने निबंधों में पर्दाफाश किया है। जिसका अध्ययन निम्नानुसार है।

३.५.१. दहेज की समस्या :

दहेज की कुप्रथा आज प्रायः सभी राज्यों में जातियों में एवं सभी वर्गो में पाई जाती है। इसकी माँग की जाती है और बाकायदा मोलभाव किया जाता है। आज वस्त्राभूषण, कार, बँगला आदि की दहेज में माँग सामान्य सी बात बन गयी है। वर को विदेश भेजने का खर्च, उसकी वकालत या डाक्टरी का खर्च, उसे उद्योग या फॅक्टरी लगवाने का खर्च आदि की माँग की जाती है। इस माँग का कोई अंत नहीं होता। वर पक्ष की लालसा और लालच की शर्ते पूर्ण करने में कन्या पक्ष समर्थ नहीं हो पाता है। जिस दिन वधू ससुराल में आती हैं उसी दिन से तानाकशी आरंभ हो जाती है। नव–वधू का जली–कटी ही नहीं सुनाई जाती बल्कि, उसके साथ अमानुषक व्यवहार किया जाता है। उसे मायके भेज कर न बुलाना तो साधारण सी बात है। उसे मारा–पीटा जाता है, भूखा रखा जाता है नाना भाँति की यातनायें दी जाती है और घर से भी निकाल दिया जाता है। कभी–कभी तंग आकर वह आत्महत्या कर लेती है। इस प्रकार भारतीय समाज में दहेज एक समस्या बन गयी है।

भारतेंदु युग से ही व्यंग्यकारों के व्यंग्य का लक्ष्य दहेज रहा है। समाज में दहेज का दो मुँहापन रहा है। कन्या के शादी के समय पिता समाजसुधारक बन जाता है, जबकि पुत्र

के विवाह के समय वही पिता घोर परंपरावादी बन जाता है। इसी विसंगति को लक्ष्य कर व्यंग्यकार व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''बहूत से लोग अपनी लडकियों के विवाह के समय तो पक्के आर्यसमाजी बने होते है। किंतु वहीं लोग जब अपने लड़को का विवाह करते है तो कहर सनातनी हो जाते है और माँग–माँग कर लेते है। लड़के के जन्म (प्रसव) और पालन–पोषण और शिक्षा का पूरा खर्चा वसूल करने की कोशिश की जाती है। कभी–कभी दहेज को लेकर मनमुटाव भी हो जाता है और बारात बिना बहू के लौट जाती है। उस समय यह प्रकट हो जाता है कि वर पक्ष के लोग दहेज लेने आये थे न की बहू। कम दहेज वाली लड़कियाँ यदि ससूराल चली भी जाती है तो सास, ननंदे, जेठानियाँ वगैरह उनका समुचित स्वागत करती है। किसी–किसी स्थिति में इतने सुख के कारण बहू अपने आत्मा शरीर से अलग करने की कोशिश भी करती है।''[९] इस प्रकार भारतीय समाज में व्याप्त दहेज प्रथा को उजागर किया जाता है।

डॉ. नरेंद्र कोहली ने अपने साहित्य में दहेज पर कटु कटाक्ष व्यंग्य किया है– ''बड़े मूर्ख हैं तुम्हारी जाति के लड़के। साहित्य पढ़ते नहीं होंगे। साहित्य पढ़ते तो उन्हें मालूम होता कि साहित्य में अब दहेज की समस्या नहीं है। प्रेमचंद के समय की बात और थी। साहित्य पिछड़ा हुआ था, इसलिए प्रेमचंद ने दहेज की समस्या जैसी घटिया समस्या सहित्य में उठाई। साहित्य में समस्या उठी तो लोग दहेज लेने। न ले ले तो प्रेमचंद का साहित्य अप्रामाणिक होने का भय था। तब मजबूरी थी। अब, जब कोई साहित्यकार यह समस्या नहीं उठाता, तो दहेज क्यों माँगते हो। अच्छे लड़के वे ही होते हैं जो जीवन में केवल वे समस्याएँ उठाते है, जिनकी चर्चा साहित्य में होती है।''[१०] इससे स्पष्ट है कि दहेज प्रथा एक अच्छा विषय साहित्यकारों को मिला है।

भारतीय समाज में विवाह अब भी प्रेम विवाह नहीं है, बल्कि विवाह माता–पिता या सरंक्षक व्दारा निर्धारित किये जाते हैं। दहेज के कारण अनमेल विवाह होते है और इससे

अनमेल विवाह की समस्या उत्पन्न होती है अनमेल विवाह पर वाक्‌चातुर्य व्दारा विडंबनात्मक कटाक्ष करते हुए, ''इस देश में लड़की को अपने पसंद का लड़का चुनने का अवसर कभी नहीं मिलेगा, कभी नहीं–जैसे मतदाता को अपनी पसंद का प्रत्याशी कभी नहीं मिलता, कभी नहीं.''[११] इस प्रकार नारी को आज भी भारतीय समाज स्वतंत्रता नहीं मिली है। इस बात का प्रमाण इस कथन से मिलता है।

व्यंग्यकार प्रतिकात्मक शैली में व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''उसने बसन्त में बासन्ती को ले लिया। कुछ हजार में उसे यह बूढ़ा हो रहा पति मिल गया। वह भी उसके साथ है। बसंत का अंतिम चरण और पतझड उसके साथ जा रहे है उसने माँग में बहूत सा सिंदूर चुपड रखा है.... मगर यह क्या। वह ठण्ड से काँप रही है और सी–सी कर रही है। बसंत की साडी को कॅपी–कॅपी छुट रही है।''[१२]

वास्तव में भारतीय समाज में दहेज जैसी कुप्रथा उससे जुडी है, यह समस्या इतनी मजबूत है कि, इससे छुटकारा पाना बहूत कठिन दिखाई देता है। प्रगतशील पिता लड़की का अंतर्जातिय विवाह कर रहे थे। ऐसा न करने से उनकी नाक तो कट जाती। व्यंग्यकार इसपर खिल्ली उड़ाते हुए लिखते है, तो मैं उन बुजूर्ग को समझा रहा था, ''आप के पास रूपये है नहीं आप कर्ज लेकर शादी का ठाठ बनायेंगे। पर कर्ज चुकायेंगे कहाँ से? जब आपने इतना नया कदम उठाया है कि, अंतर्जातीय विवाह कर रहे है तो विवाह भी नए ढंग से कीजिए।'' के कहने लगे,'' नहीं जी रिश्तेदारों में नाक कट जायेगी।''[१३] इस प्रकार आज भी ऐसी शादी करना लोगों को अच्छा नहीं लगता।

एक समय था दहेज वर पक्ष के व्दारा 'स्वीकार' किया जाता था परंतु अब यह 'माँगा' जाने लगा है। परिणाम यह है कि कन्या के जन्म दिन से ही, दहेज की समस्या उसके माँ–बाप के मस्तिष्क में घर कर जाती है और यदि दुर्भाग्य उस व्यक्ति को तीन–चार बेटिया हैं तो उसका सारा जीवन इस समस्या का समाधान करनें में व्यतीत हो जाता

है। इस सामाजिक समस्या व्यंग्यकार ने दहेज समस्या की ओर संकेत किया है। और हमें इस समस्यापर उपाय निकालने की चेतावनी दी है।

३.५.२. बेरोजगारी की समस्या :

आर्थिक विषमता से उत्पन्न बेकारी की समस्या राष्ट्र में निरंतर बढ़ती जा रही है। पर्याप्त शिक्षा ग्रहण कर लेने के पश्चात् भी नवयुवकों रोजगार नहीं मिल पाता है। रोजगार न मिलने के कारण उनका पारिवारिक जीवन कलह और क्लेशयुक्त हो रहा है। बढ़ती हुई जनसंख्या तथा पढ़े–लिखों की संख्या दिन दूना रात चौगुना बढ़ रही है। साल बजट के समय बेकारी के उन्मुलन का वादा किया जाता है किंतु वह समस्या यथावत भी न रहकर और बढ़ जाती है। व्यंग्यकारों ने इस विकृति पर सशक्त प्रहार किया है।

डॉ. नरेंद्र कोहली बेरोजगारी की समस्या पर व्यंग्य करते हुए लिखते है–''इस देश में नौकरी न पा सकने वाले को नोबेल प्राइज लेने से कौन माई का लाल रोक सकता है।''[१४] आज बेरोजगारी समस्या इतनी बिकट बन चुकी है कि, छोटी से छोटी नौकरी प्राप्त करने के लिए भी एक बहूत बडी समस्या बन रही है, जो आकाश के तारे तोड लेने के समान है।

व्यंग्यकार ने देश की बेरोजगारी की समस्या पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''एक सरकसवाले ने सरकस में काम करने के लिए विज्ञापन दिया की एम. ए. पास आदमी की जरूरत है। विज्ञापन देने के बाद सात पी.एच्.डी. हुए युवकों ने प्रार्थना पत्र भेजे।''[१५] आज बेरोजगारी की बढ़ रही समस्या देश के सामने प्रश्न चिन्ह खड़ा कर रही है। जो युवक पी.एच्. डी. हुए है, वे भी २०० से ४०० तक नौकरी करने के लिए तैयार है। आज की शिक्षा पध्दति कारखानों की तरह पदवीधरां को पैदाइश कर रही है। इस बात की ओर संकेत करते हुए– श्रीलाल शुक्लजी लिखते है, ''आज की परिक्षायें छात्रों के लिए भले ही

बेकार हो, मास्टरों के लिए बढ़े काम की है।''[१६] आज बेरोजगारी बढ़ाने में परीक्षा की पध्दति, उदासीनता, अध्यापकों का धर्म, बेकारी, अकार्यक्षम प्रशासन जिम्मेदार है।

आज के पदवीधरों की अवस्था क्या है? और वे बेचारे क्या कर रहे है। इसे देवराज दिनेश 'आई थे हरिभजन को ओअन लगे कपास' निबंध में स्पष्ट करते है, जैसे ''वह दिन में. सफेद कपडो में काम ढूँढता था और रात में मैले कपडों मे स्टेशन पर कुली का काम करता था। बेचारा ग्रेज्युएट''[१७] इस प्रकार आज की शिक्षा व्यवस्था पर व्यंग्य करने का काम किया है।

आजा की शिक्षा ग्रेज्युएट लोगों के लिए अर्थ एवं सारहीन है, जो केवल बेकारी ही बेकारी ही बढ़ा रही है। इस प्रकार दिनेशजी ने बेरोजगारी एवं शिक्षा पध्दति का पर्दाफाश किया गया है।

बढ़ती हुई बेरोजगारी से आज का युवा आक्रांत है, विश्व विद्यालय में प्रथम श्रेणी की डिग्री प्राप्त करने पर भी विद्यार्थियों को नौकरी के लिए कई–कई वर्षो तक संघर्ष करना पडता है। नौकरी के लिए डिग्री और योग्यताओं से बढ़कर सिफारिशो को महत्व दिया जाता है। जिससे युवकों की हताशा और भी अधिक बढ़ जाती है। दिशाभ्रमित युवक राजनीतिज्ञों के स्वार्थो का निशाना बनते है। बहकावे में आकर आज का युवक हडताल तोड–फोड और आक्रमक रूख अपना कर चलने के लिए विवश है। बेरोजगारी की समस्या पर व्यंग्यकार व्यंग्य साहित्य में कसकर प्रहारकिये है। जिससे समाज, शासन–तंत्र को सोचने के लिए मजबूर किया है।

३.५.३. जाति समस्या :

जातिवाद का सबसे बड़ा कारण यह है कि प्रत्येक जाति के लोग अपनी ही जाति की प्रतिष्ठा प्रतिक्षण बढ़ाना चाहते है। ऐसा करने में गिरे से गिरे उपाय अपनाने को भी बुरा नही समझते। नागरिकरण से प्रत्येक नगर में भिन्न–भिन्न जातियों के जीवन में अनेक समस्याएँ

उपस्थित हुई है, जिससे जातिय आधार पर उनकी सुरक्षा और भी आवश्यक हो गयी है। इस आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए जातिवाद बढ़ता जा रहा है। भारतीय संविधान व्दारा जातिगत भेद–भाव की समाप्ति का उद्‌घोष किया गाया, किंतु व्यवहार में उसके विपरित आचरण दिखाई देता है। इस देश में लोग धर्म के सहारे रहते है, जाति समस्या यह भारतीय समाज की गहन समस्या बन गयी है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली जातिवाद की इस जडता पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''विव्दान ज्यों–ज्यों बढ़ता जाता है, त्यों–त्यों जात परजात का बोध भी बढ़ता जाता है। इसी को विज्ञापन कहते है।''[१८] भारतीय समाज में आदमी जितनी ज्यादा पढ़ाई करता है उतना ही ज्यादा से ज्यादा जातिवाद करता है। शहरी लोगों के साथ–साथ ग्रामीण जन भी जाति व्यवस्था के सम्मुख नतमस्तक हो जाते है। इसी जाति व्यवस्था को डॉ. कोहली ने दृष्टिगोचर किया है।

जाति–पाँति की भावनायें इतनी प्रबल है कि अछूतों व्दारा धर्म परिवर्तन के पश्चात् भी वह इस संस्कार से मुक्त नहीं हो पाते। श्रीलाल शुक्ल जाति प्रथा पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''शास्त्रों में शुद्रों के लिए जिस आचरण का विधान है उसके अनुसार चौखट पर मुर्गा बनकर उसने वैद्यजी का प्रणाम किया। इससे प्रकट हुआ की हमारे यहाँ आज भी शास्त्र सर्वोपरि और जाति–प्रथा मिटाने की सारी कोशिशें अगर फरेब नही है जो रोमण्टिक कारवाइयाँ है।''[१९] छूआछूत, जाति–प्रथा का बोलबाला आज भी बड़े जोर से चलता है। क्योंकी निम्न–वर्गीय लोगों को आज भी उच्च वर्ग के मकान में आने नहीं दिया जाता अगर कमान तक गया तो भी व्दार पर खड़े रहकर उच्च वर्ग लोगों के सामने झुकना ही पड़ता है।

व्यंग्यकार इस पर व्यंग्य करते है कि, आज के समाज में जारी बंधन को सिर्फ धन–दौलत ही ताड़ सकती है, जैसे ''कप्तान साहब कुलीन ब्राम्हण थे और रायसाहब कायस्थ। पर धन की एक जात होती है। अपनी कुलीनता को बंसी के कांटे में पुत्र रूपी केचुआ

लगाकर वे रायसाहब के परिवार के पानी में डाले रहे। आखिर मछली फंसी। एक दिन सुना गया कि कप्तान साहब के पुत्र का प्रेम रायसाहब की पुत्री से हो गया।''[२०] जहाँ धन मिलता है। वहाँ आदमी जाति बेचने के लिए तैयार हो जाते है। बेटे ने सोचा, करोडों की संपत्ति आ जायेगी। अगर एक कुरूपा घर में पड़ी तो क्या बिगड़ता है?

डॉ. नरेन्द्र कोहलीने भारतीय समाज में जाति–पाँति यह एक समस्या बन चुकी है। जातिवाद को समूल नष्ट करना है, तो शिक्षा संस्थाओं में ऐसी अवस्था होना चाहिए कि एक ओर बच्चों के मन से जाति–पाँति का भेदभाव पैदा न हो सके। जातिवाद के हल का एक अन्य उपाय विभिन्न जातियों में सांस्कृतिक और आर्थिक समानता उत्पन्न करनी है। समाज की सुख शांति के लिए जाति–पाँति समस्या नष्ट करने की आवश्यकता है इस बात की चेतावनी दी है।

३.५.४. अंधश्रध्दा :

भारत धर्मनिरपेक्ष देश है। धर्म स्वतंत्रता के कारण धर्म के नाम पर कुकर्म करने की भी स्वतंत्रा है। आज कल धर्म का उपयोग अपने स्वार्थ के लिये किया जा रहा है। धर्म के अधिष्ठान पर मृतात्मा के लिये पिण्डदान करना, मुण्डन करना, धार्मिक त्यौहार पर बाहयाडंबर करना, किसी देवता को भोग प्रदान करना, ज्योतिषी के पास जाकर गृह देखना, गृहशांति करना, संत–धर्म देवता को भोग प्रदान करना, ज्योतिषी के पास जाकर ग्रह देखन, गृहशांति करना, संत–धर्म देवता को भोग प्रदान करना, संत धर्म गुरूओं का व्यभिचार, धर्म के नाम पर दंगा आदि धार्मिक आडंबर एवं अंधश्रध्दा को व्यंग्यकार ने व्यंग्य का विषय बनाया है।

व्यंग्यकार इस पर व्यंग्य करते है कि, ''तो भी तुम्हारे घर घर आकर खा–पी लेता हूँ। कोई छुआछूत नहीं मानता। तुम चाहो तो अपने किसी धर्मनिरपेक्ष नेता अथवा उध्दारक का प्रसाद खिला दो। मैं मना नहीं करूंग। वैसे ये सांप्रदायिक चीज नही है। शुध्द रूप से

धर्मनिरपेक्ष है। मंदिर से नही, सीधी हलवाई की दूकान से आई है। और हलवाई तो सर्वव्दारा होता है।''[२१]

जहाँ अंधश्रध्दा का पर्दाफाश किया गया है, जो धर्म के नाम पर कुकर्म करता है एवं लोगों को धार्मिक अंधश्रध्दा के बल पर दंगा, आंदोलन करना चाहता है एसी धार्मिक अंधश्रध्दा का व्यंग्यंकार ने पर्दाफाश किया है।

व्यंग्यकार ने धर्म के नाम पर मक्कारी करनेवाले कथनी और करनी में अंतर रखने वाले ढोंगी साधुओं के आचरण को नंगा करते हुए लिखा है, ''साधु की आत्मा ने भाषण देते हुए कहा, विधवा स्त्री से शारीरिक संबंध घोर पाप है और पापी को दण्ड मिलना चाहिए। ऐसी संतानों को समाज में स्थान नही दिया जाता है।''

तभी शिशु आत्माओं के समूह में से किसी ने कहा, चेली बनाकर रखा था, मेरा जन्म उसी से हुआ है।''[२२] धर्म के नाम पर पलने वाले तथाकथित नकली साधुओं का पर्दाफाश करते हुए कथनी–करनी में भेद रखनेवाले ढोंगी साधु पर व्यंग्य किया है।

डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने धर्म के नाम पर अनुचित फायदा उठाने वाले साधु पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''धर्म के नाम पर लागों को नंगे रहने, सशस्त्र रहने और एक से अधिक पत्नियाँ रखने का अधिकार था। धर्म तो इस देश में 'वोटो' से है उसके सामने न कोई तर्क चलता है, न नियम न कानून।''[२३] हिंदू धर्म के अंध श्रध्दावान लोगों की दुर्गति के साथ ढोंगी के कार्य व्यवहार पर तीखा प्रहार किया गया है।

अतः स्पष्ट है कि, धर्म का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए किया जा रहा है। डॉ. नरेन्द्र कोहली ने अंधश्रध्दा रखने वाले, धर्म के नाम पर असदव्यवहार करनेवाले, धर्म गुरूओं के व्यभिचार, धर्म के नाम पर दंगा करना, आदि धार्मिक आडंबर एवं अंधश्रध्दा का व्यंग्यकारने पर्दाफाश किया है और अंधश्रध्दा से बचने की चेतावनी दी है।

३.५.५. रूढि परंपरा :-

समाज रूढ़ि एवं परंपरा ग्रस्त रहा है। समाज में रूढ़ि परंपरा का प्रचलन अधिक मात्रा में है। साहित्य की अन्य विधाओं की तरह हिंदी साहित्य में परंपराओं और रूढ़ियों से ग्रस्त अनेक पात्रों की सृष्टि करके परंपराओं और रूढ़ियों का अपने-अपने ढंग से खण्डन-मण्डन किया गया है। व्यंग्यकारों ने नारी-शिक्षा, दहेज, विधवा-विवाह एक पत्नी-विवाह, उन्माद, पर्दा-प्रथा, नारियों को आधार मानकर परंपराओं और रूढ़िओं के विकृत रूप प्रस्तुत किया है। सामाजिक रूढ़ि के अनुसार समाज के विकास को अवरूध्द कर देने वाली, विकृति पर रचनाएँ की है।

व्यंग्यकार ने सामाजिक रूढ़ि परंपरा पर प्रहार करते हुए लिखा है, ''हमारे समाज में ऐसा ही होता आया है। मन लगाया 'क' से शादी 'ख' से। किसी तरह समन्वय हुआ तो खैर, नहीं तो ट्रेजेडी''[२४] रूढ़ि ग्रस्त समाज में परपंरा का पालन अनिवार्य होता है। यदि इसका विरोध किया जाता है, तो जीवन सुखी होगा या नहीं इसका भरोसा नहीं होता समाज की इस स्थिति पर बेनोपुरीजी ने किया हुआ व्यंग्य अत्यंत सार्थक है।

धार्मिक रूढ़ि परंपरा पर व्यंग्य करते हुए डॉ. कोहलीजी ने लिखा है कि, ''शादी होने के लिए जिस प्रकार मदद चाहिए वह सारी मदत पण्डित जी देते है। एक ही घर में बैठकर लड़ने वाले ग्रहों को अलग-अलग रख देते है, उमर बडी हो तो कम कर डालते है, कुण्डली न मिलती हो तो कुण्डली मिला डालते है।''[२५] यहाँ धार्मिक रूढ़िवादिता एवं पण्डित, पुजारीयों के कार्य व्यापार के रहस्यों का उद्‌घाटन किया गया है। यह एक सामाजिक विकृति है जो समाज में फैली हुई है उसे व्यंग्यकार ने स्पष्ट किया है।

व्यंग्यकार ने 'यदा यदा ही धर्मस्य' में रूढ़िवादिता पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''दिल्ली के कई मंदिरो में भगवान नायलोन और टेरीलीन हे वस्त्र धारण करते है जो बाकायदा ड्रायक्लीन किए जाते है। एक मंदिर में ठाकुरजी की मूर्ति के पास ही टेलीफोन भी

लगा है। पिछले वर्ष मेरे कस्बे में जो रामलीला हुई, इसमें राजा जनक ने सीताजी के दहेज में एक रेडियो टी–सेट और शिलाई मशीन भी दी।''[२६] यहाँ धर्म के नाम पर रूढ़ि परपंरा पर व्यंग्य का आघात किया है।

समाज में फैली रूढ़ि परंपरा का खंडन–मंडन व्यंग्यकार ने किया है।, रूढ़ि परंपरा समाज के विकास में विकास में अवरूध्द पैदा कर देती है। हिन्दी व्यंग्य साहित्य में रूढ़िवादिता में कुण्डली मिला देना, ग्रहों को मिलाना, भगवान को नायलोन के वस्त्र धारण कराना और वह भी ड्रायक्लीन के। आदि के माध्यम से रूढ़ि परंपरा का पर्दाफाश किया है।

३.५.६. भ्रष्टाचार :

आधुनिक युग में भ्रष्टाचार की जड़े इतनी मजबूत हो गई है कि साँस लेने के लिए भी भ्रष्टाचार का सहारा लेना आवश्यक हो गया है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में चले जाए तो भ्रष्टाचार का ही बोलबाला नजर आत है। आज के मानव का इस विसंगति से बच पाना एक विस्मय की बात लगती है। भ्रष्टाचार से क्या राजनीति क्या स्वास्थ सेवाएँ, क्या शैक्षिक संस्थान, क्या धार्मिक स्थल, क्या न्याय व्यवस्था अछूती है? किसी भी व्यक्ति का अंतर्मन अनुचित या कुमार्ग की और उन्मुख होना नही चाहता, परंतु जब गलत रास्ता अपनाए बिना कार्य करना ही मुनासिब न हो तो अंततः वह भी दुनियाँ के दूसरे लोगें के साथ कदम ताल करना शुरू कर देता है। समाज में भ्रष्टाचार इस कदर फैल गया है जैसे पानी में कई लग जाती है। कबीर दासजी के वाणी में कहना हो तो– ''घट–घट में वह भ्रष्टाचार रमता'' कहने कि स्थिति आ गयी है। व्यंग्यकार समाज को धोका देनेवाले ठेकेदारों, दूकानदारों पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''नकली दवाइयाँ बनानेवालों, तुम्हारी ही दवाइयाँ है, जो न जाने कितनी आत्माओं को समय से पूर्व ही देह के बंधनो से मुक्त कर रही हैं। सिमेंट में रेती मिलाने वाले ठेकेदारों तुम भी चले जाओं।''[२७] यहाँ सामाजिक भ्रष्टाचार करनेवाले ठेकेदारों पर व्यंग्य किया है जो कालाबाजारी मिलावट करते है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली ने व्यापारियों की नीति एवं मुनाफाखोरी करनेवाले लोगों पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''जिनकी रग–रग में मुनाफाखोरी भरी हुई है वे कभी मान सकते है? बाहर से तेल मंगाया इसे भी चार लोग पी गए, मानों दाले वातानुकुलित स्टोअर्स में ठंडक ले रही है और उनके भाव अंदर ही अंदर बढ़ रहे है।''[२८] इस प्रकार आज भौतिक सुविधाओं की माँग बढ रही है।

व्यंग्यकार ने 'प्राचार्य और आग' में व्यंग्य किया है, ''एक व्यापारी के यहाँ आग लगी सारा माल जल गया। लोग आग देखने के लिए दूर–दूर से आने लगे। व्यापारी बड़े खुश हुए। अच्छी पब्लिसिटी हो रही थी। बीमेवालों को लेकर बम्बई जाने की तैयारी कर रहे थे।''[२९] व्यापारी लोग भ्रष्टाचार करते है एवं दूकान को आग लगाकर फिर बीमेवाले से रूपये कमाते है, ऐसी व्यापारी नीति पर व्यंग्य किया गया है।

डॉ. नरेन्द्र कोहली मिलावट प्रसंग को स्पष्ट करते हुए लिखते है, ''जिस रोज बजार में शुध्द सामग्री आ गयी, सारा भारत शमशान हो जायेगा। सदियों से मिलावटी चीजें खाने का अभ्यस्त हमारा पेट शुध्द खाद्य सामग्री के विषय को कभी नहीं पचा पायेगा।''[३०] भारतीय समाज में इतना भ्रष्टाचार बढ़ा हुआ है कि खाने की हर चींज में मिलावट होती है।, यहाँ कालाबाजारी करनेवाले, मिलावट करनेवाले एवं पूंजीपति भ्रष्टाचार का कुचक्र बढ़िया ढंग से चलाते है, इस पर व्यंग्य किया गया है।

इस प्रकार में भ्रष्टाचार की जड़े इतनी मजबूत हो गई है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में चले गये तो भ्रष्टाचार का बोलबाला दिखाई देता है। सार्वजनिक भ्रष्टाचार देश की प्रधान समस्या है। इस समस्यापर हिन्दी के व्यंग्यकारों ने यथार्थवादी दृष्टि से समाज के सामने लाने का कार्य अपने साहित्य में किया है। व्यंग्यकार ने हमें सोचने के लिए मजबूर करते हुए भ्रष्टाचार के संदर्भ में चेतावनी दी है।

३.५.७. बाढ़ की समस्या :

देश के कुछ भागों में अनावृष्टि के कारण बूँद–बूँद पानी के लिए तरसना पडता है, तो कुछ भागों में इतनी अधिक बाढ़ आती है कि, तबाही मच जाती है। जिन–जिन गाँवो–कस्बों में प्रत्येक वर्ष यह बाढ़ पर्व आता है, वहाँ के किसान और ग्रामीण भले ही बैचेन हों, लेकिन उस इलाके के बी. डी. ओ. इंजीनियर और ठेकेदार प्रसन्न रहते है। महीनों से इस मंगल पर्व के आने के लिए पूजा–पाठ कराते है। सावन का महिना आते ही इंजीनियराइन और ठेकेदार की पत्नी मगन होकर गीत गाने लगती है। तो अफसर लोगों की बिढीयाँ सुबह शाम भगवान की पूजा करती रहती है। व्यंग्यकार दूसरों के जरियें' निबन्ध संग्रह में है 'बाढ तुम्हारा अभिन्दन' इस निबन्ध में व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''बी. डी. ओ. की पत्नी रोज सुबह–शाम भगवान की पूजा आरती करती हुई प्रभु से यह प्रार्थना करती है कि, दिन–रात आकाश में काले–काले बादल मघ छाये रहें और खंत–खलिहान सब पिछले की तरह जल–मग्न हो जाएँ। गाँव की धरती जब सोता नहीं उगलेगा, तो राहत कार्य से मेरे घर में सोना उगलेगा। मैं बनारस या पटना जाकर सोने के गहने बनवाऊँगी।''[३१] इस प्रकार दूसरे के दुःख में अपने सुख के लिए कामना की जाती है।

प्रशासकीय अधिकारियों को पता होता है कि इलाकों की नदियों में प्रतिवर्ष बाढ़ आती है। किन्तु इसकी रोकथाम का कोई स्थायी रूप से प्रबन्ध नहीं किया जाता। इसी प्रशासन के कुप्रबंध पर व्यंग्यकार ने सीधे–सीधे प्रहार करते हुए लिखते है, ''आदमी जगह छोड़ेगा नहीं। पर विज्ञान और टेक्नोलॉजी कहाँ चली गई? जहाँ हर वर्ष बाढ़ आती है, वहाँ पहले से इंतजाम क्यों नहीं? आस–पास सर्वे क्यों नही? खतरे के स्तरपर पहुँचने पर नीची बस्तियाँ खालह क्यों नहीं करायी?''[३२] इस प्रकार प्रतिवर्ष बाढ़ आती है, सुखा पडता है, किंतु इसकी स्थिति को सुधारने की ओर कोई ठोस कदम नही उठाये जाते। इसका मूल कारण ये अफसर लोग ही बाढ़ के आने का इंतजार करते है।

व्यंग्यकार ने 'बाढ़ का नियंत्रण' में बाढ़ से घिरे असहाय व्यक्तियों की दयनीय स्थिति और नौकरशाही की निक्रियता का चिट्ठा खोलते हुए लिखते है,''मोटार–बोट भी है हमारे पास'' उसने कहा, ''पर छोटी मोटार बोट इस तेज बहाव में नहीं चल सकेगी। बड़ी पुल के उस पार है, इस पार नंही आ सकेगी। मिडीयम साइज मोटार–बोट भेजूँगा। आपको बचन देता हूँ।''[३३] इस प्रकार डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने प्रशासन की धज्जियाँ उड़ाई है।

बाढ़ समस्या देश के सामने एक मुसीबत बन के खड़ी होती है। बाढ़ आने पर नेता, इंजिनीयर, राहत प्रभारी आफिसर, ठेकेदार यह सबको अंगूठा दिखा देते है। इस पर अमरेंद्र कुमार ने 'बाढ़ तुम्हारा अभिनंदन' में कसकर चोट करते हुए लिखा है, ''पानी बरसाने और बाढ़ आने पर वे कृष्ण की तरह गोवर्धन पर्वत अपनी कानी उंगली पर उठाकर लोगों की रक्षा करेंगे, लेकिन जब बाढ़ आती है तो, वे सबको अंगूठा दिखा देते हैं. और अपना घर भरने में लग जाते है।''[३४] इस प्रकार लोगों को मद्द करने की बजाय लोगों की समस्या बढ़ाकर प्रशासन नेता एवं ठेकेदार अपना घर भरने का काम करते है।

प्रशासकीय वैषम्यता और आकाशवाणी से की जा रही जोरदार घोषणाएँ देखकर व्यंग्यकार लिखते है, ''यमुना की बाढ़ को रोकने के लिए सरकार सामाजिक धरातल पर प्रबंध कर रही है। अब तक की सूचनाओं के अनुसार बाढ़ में घिरे सारे पशुओं को सुरक्षित स्थानों पर पहुँचा दिया गया है।''[३५] इस प्रकार केवल आश्वासन देने का कार्य इस विभाग द्वारा किया जाता है।

इस प्रकार बाढ़ पीडितों को पशुओं की उपमा देकर प्रशासन की खिल्ली उडायी है।

जहाँ शासन तंत्र भ्रष्ट हो और जनता में अकर्मण्यता एवं मिथ्या संतोष की भावना घर किये हो वहाँ अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती है। बाढ़ की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। लेकिन नेता, इंजीनियर, बाढ़ प्रभारी आफिसर, ठेकेदार, सब दावा करते है। लेकिन नेता, इंजीनियर, बाढ़ प्रभारी आफिसर, ठेकेदार सब दावा करते है लेकिन कुछ नहीं। इस

प्रकार देश में वाढ़ की समस्या जैसी की वैसी बनी हुई है। इस समस्या को व्यंग्यकार ने अपने व्यंग्य से सचेत किया है।

३.६. पारिवारिक समस्याएँ और व्यंग्य का संबंध :

भारतीय समाज में परिवारिक जीवन वैषम्यपूर्ण बनता जा रहा है। परिवार में सहयोग, उद्‌भाव, स्नेह, समता एंव परस्पर विश्वास के भाव लुत्प हो रहे है। अंग्रेजी शिक्षा, पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव, आर्थिक अभाव, औद्योगिक विकास में नगरों का लोभक आकर्षण, मनुष्य को वैयक्तिक स्वार्थ की ओर खिंचते है। परिवार में मतभेद बढ़ने लगे है, सम्मिलित परिवार विखरने लगे है। पारिवारीक आकर्षण नहीं रहा है। और सामूहिक दायित्व बोध मृतप्राय हो रहा है। निजी स्वार्थ परिवार के सदस्यों के आपसी प्रेम में दरार उत्पन्न करता है। आज भारतीय सम्मिलित कुटुंब की कडियाँ चूर-चूर हो रही है। वह आर्थिक संगठन अब नही रहा, जिसमें कुल का एक प्रमुख सबके मास्तिष्क का संचालन करता हुआ रूचि की समता का भार ठीक रखता था।

माता और पुत्र का संबंध भौतिक दूंध में अप्रभावित नहीं रह पाता। आज पिता-पुत्र संबंध भी बड़े प्रजातांत्रिक हो गए है। डॉ. नरेन्द्र कोहली की रचना 'रिश्तों से बढ़कर' में पिता-पुत्र की कटू आहट में अभिव्यक्त करते हुए लिखा है, ''अपने बाप के संदर्भ में वह मवाद से लबालब भरा हुआ अत्यंत पका हुआ फोड़ा है। किसी के जरा सा छुते ही बहने लगता है।''[३६] अपने जनक को सम्मान देने के लिए भी आज की पीढ़ी तैयार नहीं है।

पति-पत्नी संबंध अपनी स्वाभाविक गरिमा से च्युत होकर एक कर्तव्य निर्वाह बन गये है। पत्नी एक मनोरंजन अथवा अवकाश व्यतीत करने का साधन बन गयी है। पति शिक्षित होकर भी पत्नी का आदर उससे अधिक नहीं करते, जितना अपने पैर के जुते का। जहाँ पति-पत्नी में परस्पर संबंध समाप्त हो जाते है। वहाँ भारतीय दांपत्य अवस्था की इतिश्री समझनी चाहिए। इसे पाश्चात्य विखंडित पारिवारिक जीवन का आरोपित आदर्श मानने में भी आपत्ति नही होना चाहिए।

व्यंग्यकार पति–पत्नी के संबंधो पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''आज कल की स्त्री आधुनिक होती तो गहने और कपडे तो रख ही लेती, साथ ही इस बात का भी मुकम्मल इंतजाम कर लेती की ऐसा प्रियतम कभी भी विदेश से वापिस न आए।''[३७] दांपत्य जीवन में परस्पर विश्वास, स्नेह और एक दूसरे की भावनाओं का आदर करने की जो परंपरा थी, अब वह समाप्त हो चली है।

आज आधुनिक काल में माता–भाई–बहन के संबंधो में दरार बढ़ रही है। उनका सम्मिलित पारिवारिक जीवन दुखदाई हो रहा है। भारतीय हृदय पारिवारिक स्नेह और कोमलता से पलता है। पारस्परिक स्नेह और सहयोग ही विपत्तियों से संघर्ष करने की अदम्य शक्ति का स्त्रोत है। लेकिन आज परिवार टूँटते हुए दिखाई देते है। आर्थिक परिवर्तन ने परिवार के स्वरूप और प्रकृति पर गहरा प्रभाव डाला है। आधुनिक रूप से पति–पत्नी की समस्या, विवाह विच्छेद की समस्या काम करनेवाली स्त्रियों की समस्या, पारिवारिक संघटन और कलह आदि समस्यायें परिवार में दिखाई देती है।

पति–पत्नी का सबसे अधिक कठिन समस्या परस्पर सामंजस्य है। आज की पढ़ी–लिखी और जागृत नारी जीवन के सभी क्षेत्रों में पति के साथ समानता चाहती है। परंतु पति अभी इतने उदार नहीं बन पाये है। अंतः दोनों में संघर्ष होना निश्चित है। व्यंग्यकार इस समस्या पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''आवश्यक था कि प्रारंभी के दो–चार वर्ष जंग में गुजरे। अब जितनी तपन बढ़ेगी उतना ही फायदा होगा। यह सोचकर जैसे ही श्रीमती जी पधारी। मैने 'ऐलान–ए–जंग' कर दिया लेकिन शायद वह भी पहले से ही इस सूत्र को आत्मसात कर चुकी थी, तभी तो वह भी पूरे जोश में मैदान में उतरी।''[३८] प्रत्येक क्षेत्र में उसे बराबरी का आधिकार चाहिए भले ही यह क्षेत्र मनमुराब या लडाई का क्यों ने हो। व्यंग्यकार पति–पत्नी को सोचने के लिए मजबूर करता है।

आजकल यौन–वासनाओं की तृप्ति पर बड़ा जोर दिया जाता है। कुछ लोग तो यहाँ तक कहने लगे है कि, यौन–संबंध में विविधता वांछनीय ही नही, बल्कि अनिवार्य है। इससे

विवाह के पूर्व तथा विवाह के बाहर यौन–संबंध बढ़ते जाते है। इन सब बातों से पति–पत्नी में वैषम्य की समस्या उत्पन्न होती है जिससे हजारों, लाखों परिवार का विघटन होता जा रहा है। इस समस्या पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''हमारी मुश्किल यह है कि हम हमेशा दूसरे की बीवी की खोज करते है...।''[३९] आज के परिवार के सामने यौन–सांमजस्य की समस्या उत्पन्न हो गयी है। इसे व्यंग्यकार ने स्पष्ट किया है, जो एक पारिवारिक समस्या है।

विवाह विच्छेद की समस्या आज परिवार की एक बड़ी समस्या है। विवाह एक सामाजिक समझौता मात्र रह गया है। भौतिकवाद, व्यक्तिवाद, बुध्दिवाद आदि के कारण सहिष्णुता और प्रेम कम हो गया है। इसके कारण परिवार टूँट रहे है। तलाक के नियम भी कठिन नहीं है। इन सब कारणों से तलाकों की संख्या बराबर बढ़ती जा रही है। इस समस्या पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''मुझसें, जब कोई दूसरे को बात करते पत्नी देखती है तो उससे कह देती है–जरा जोर से बोलिए, ये उँचा सुनते है।''[४०] शंका–कुशंका के कारण परिवार टूँटते है और इसमें से तलाक की समस्या सामने आ जाती है। यह एक परिवारिक समस्या है।

आज के परिवार में नियंत्रण कम होने और मूल्यों में परिवर्तन होने से पति पत्नी में और माता–पिता तथा बच्चों में संघर्ष बढ़ गया है। बहूधा यह संघर्ष अप्रत्यक्ष रहता है, परंतु इससे परिवार की शांति भंग हो जाती है परस्पर विश्वास उठ जाता है और मनोवैज्ञानिक सुरक्षा की भावना नहीं रह पाती है। इससे पारिवारिक संघर्ष की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

अतः में हम आज के परिवार में उपरोक्त सभी समस्या मौजूद होती है। इस सभी परिस्थितियों के साथ–साथ मध्यवर्ग एवं निम्न वर्ग परिवार में रोटी, कपडा और मकान यह समस्याएँ भी होती है। इन सभी परिवारिक समस्याओं पर हिंदी के सभी व्यंग्य साहित्य रचनाओं का सृजन किया है। प्रधान रूप से डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने इन समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित किया है। और इनसे अछूता रहने की चेतावनी दी है।

३.६.१. पति–पत्नी संबंध पर व्यंग्य :

डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने आज की नारी मुक्ति की कामना ने दूरदर्शन आदि प्रसार–तंत्र माध्यमों के कारण पति–पत्नी संबंधो को अधिक प्रभावित किया है। महिलाओं की वाचालता प्रसिध्द है। उनकी बकवासी वृत्ति से कभी–कभी पति भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। अपने स्वार्थ पूर्ति हेतु पत्नी को अस्त्र के रूप में उपयोग करने की परंपरा भी इन दिनों चल पडी है। अटके हुए काम को बनाने के लिए पत्नी को भेज देना सरल नुखा बन गया है। लाचारी में पत्नी को यह सब करना पड़ता है। व्यंग्यकार अपने व्यंग्य से यह स्थिति पाठकों को प्रस्तुत करूणा जगाती है और सामाजिक विडंबनाओं पर सोचने को बाध्य करती है–''मेरी पत्नी कई दिनों से कनाटप्लेस जाने को कह रही थी, समय ही नहीं मिलता था। आज मैने इधर का प्रोग्राम बना लिया। उसे कनाटप्लेस छोड़ा है और स्वयं इधर प्रदर्शन करने आ गया हूँ।''[४१] इस प्रकार लाचारी में पत्नी को यह सब करना पड़ता है। ऐसा होने से पति–पत्नी संबंध में दरार पैदा होती है।

दांपत्य जीवन की कलह और संस्कार हीनता की चरम परिणति पर पैनी नजर डालते हुए लिखते है, ''पति और पत्नी दोनों ने एक दूसरे का बीमा करवा रखा था। दोनों भगवान से प्रार्थना किया करते थे, कि दूसरा सदस्य मर जाए ताकि धन की प्राप्ति हो सके। अंत में दोनों ने प्रेमपूर्वक निःस्वार्थ भाव से एक दूसरे की हत्या कर दी।''[४२] आधुनिकिकरण का वैभव लालसा में ऐसा होता है, जो 'सामाजिकता' की दृष्टि से अनुचित है। बरसानेलाल चतुर्वेदी 'नेता की नुमाइश' रचना में पति–पत्नी की विकृतियों पर नजर डाते हुए कहते है, ''आदर्श की नींद हिल गई है। पति–पत्नी के संबंधों में भी पुराना आदर्श, पति–पत्नी की जुगल जोडी द्वारा ये गृह चलाये जाते है।''[४३] आज कल पति–पत्नी के संबंधो में ऐसी तनाव की स्थिति निर्माण होने लगी है। व्यंग्यकार इस बात को स्पष्ट करते है।

यदि अन्य स्त्रियों के साथ पति को बातचीत करते हुए पत्नी देखती है तो अनेक शंकाओं से उसका मन भर जाता है। उनकी बातचीत वह सुनने का प्रयास करती है। जब

कुछ सुनाई न पडे तो पति को बहरा तक बना देती है। वह कह देती है, ''अब उठो भी। कब तक बैठे रहोगे?''[४४]

जब पति घर में हो तब यह स्थिति होती है। परंतु जब वे घर से बाहर रहते है, तब भी वह ऐसी नाना शंकाओं से घिरी रहती है। चाहे वह ऑफिस के काम के लिए ही क्यों न दफ्तर में रूका हो पर घर आने पर उस पर प्रश्नों की बौछार शुरू हो जाती है।

व्यंग्यकार ने बयान किया है की, पति–पत्नी के संबध बडे मधुर होते है। मनमुराब, हँसी मजाक, ईर्ष्या, शंका, छोटे–मोटे झगड़े आदि से संबंध मं परिपक्वता आती है। झगड़ा रहित पति–पत्नी का संबंध समाज को मान्य नहीं है। वह शंका की दृष्टि से देखता है कि ये सच्चे पति–पत्नी नहीं है। इनकी शादी नहीं हुई है, ''पहले वो राजकुमार और राजकुमारी यहाँ रहते थे, तो रोज सुबह शाम लड़ते थे। पडोस में शर्मा की बहू व्याही आई तो वह लडे हे। इधर खला की पत्नी रोज पिटे है। तुम लोग न लडो हो, न मार पीट, ब्याह हो गया बहनजी तुम्हारा? आखिर घर–गिरस्ती की बात है। जहाँ चार बर्तन हों, आपस में टकरावे ही है। तुम्हारी तो आवाज भी कभी हमारे कान में नहीं पडी। कहीं भाग–भागर तो...।''[४५]

आज आदमी की महत्वकांक्षाएँ बढ़ने के कारण पति–पत्नी संबंध में टकराहट पैदा हो रही है। पति–पत्नी का प्रेम एक दूसरे को समृध्द बनाता है। एक दूसंरे को सार्थक बनाता है। एक दूसरे के प्रति समर्पण कर इस पूरे विश्व को अनादि मूल्यतत्व से जोड देता है। मन में प्रेम का यह बीज अंकुरित होकर समस्त वसुधा पर अपनी छवि, अपनी आभा बिखेर देता है। आज के समाज में स्वार्थवृत्ति प्रबल होने के कारण पति–पत्नी संबंध में टकराहट पैदा हो राही है। इसे डॉ. कोहलीजी ने उजागर किया है।

३.६.२. सास–बहू संबंध पर व्यंग्य :

परिवार के सार सूत्र–सास के हाथों केंद्रित होते है। परिवार को अधिकारिणी होने के नाते आने वाले बहू से व्यवहार किस प्रकार से किया जाय यह सास निश्चित करती है। किसी भी स्त्री को सास की भूमिका में ही अपने स्त्रीत्व की पूर्णता प्राप्त होती है। हर सास

सभी कलाओं से परिपूर्ण होती है। कितीन भी वत्सकयमी माँ हो सासत्व की सत्ता मिलते ही उसकी नस नस में रौद्र, बीभत्स और भयानक रस की अविरल धारा अपने आप बहने लगती है। भारतीय परिवारिक व्यवथा की हड्डी सास–बहूओं के संबंध पर आधारित होती है। चाहे तो घर स्वर्ग बना दे या घर वालों को स्वर्गवासी। सास का स्वभाव कैसा होता है इस पर चुटकी लेते हुए ''हर सास का अतीतकाल बहू कहलाता है और हर बहू का भविष्यकाल सास कहलाता है। सास ने बहू के रूपम में अपनी वर्तमान बहू से पास ऑन कर देती है।''[४६]

व्यंग्यकार सास– बहू संबंध के सामाजिक यथार्य को स्पष्ट करते हुए लिखते है, ''शहर में इस साल बहूओं को जलाने का एक भी केस नहीं हो सका क्योंकि सासें घासलेट की कमी से परेशान है।''[४७] बहूओं को प्रताडित, अपमानित करने के लिए कभी–कभी बेटे का माध्यम भी अपनाया जाता और सासत्व की प्यास बुझाई जाती है। यह सारी बातें केवल बहूओं को प्रताडित करने के लिए की जाती है।

बहू को अपनी आज्ञा में रखने का प्रयास सास हमेश करती है। चाहे इसके लिए उसका अस्तित्व ही क्यों न समाप्त करना पडे वे पीछे नहीं हटती बरसानेलाल चतुर्वेदी इस पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''सास का नाम लेते ही बहू की याद आती है। बहू जब व्याह कर लायी जाती है, उस समय उसकी बहूत आवभगत की जाती है। सास दाढ़ी की तरह नीचे की ओर फैलाती रहती है। जैसे मुंछो का धीरे–धीरे अस्तित्व समाप्त कर दिया जाता है उसी प्रकार धीरे–धीरे बहू को अपमानित करना एक सहज क्रिया हो जाती है।''[४८] बहू तंग आकर सास के छुटकारा पाने का प्रयत्न करती है।

ऐसी ही सास ग्रस्त नारी का चित्रण करते हुए लिखते है, ''उनकी सास मृत्यू को प्राप्त नहीं हो रही थी। दुनिया जहान है कि, मरती जाती है पर यह बूढी है कि, दम तोडने का नाम ही नहीं लेती। बीमार सास के कारण उनके पति उन्हें इतना ध्यान नहीं दे पाते थे जिसका कि उनके यौवन और रूप का ध्यान में रखते हुए अपेक्षित था।''[४९] पति'पत्नी

संबंध यौन स्थिति में अच्छे होते है, लेकिन बूढापे की स्थिति में पति–पत्नी संबंध में टकराहट पैदा होती है।

सास हमेश दुःख देती है, पीडा पहुँचाती है। दहेज के लिए नाना तरह की तकलीफें बहू को, बहू के मायके वालों को दी जाती है। जिस ओर व्यंग्यकार ने क्षोभ व्यक्त किया है, ''पर लड़के के माँ–बाप तो होते ही है दुष्ट। वे तो चाहते ही थे कि मै दुःखी होऊँ। उन्होंने हमारे परिवार से संबंध जोडकर स्वयं को धन्य माना। मुझे सिर आँखो पर स्वीकार किया और दिल को ठेस लगने का यह अंतिम अवसर भी मेरे हाथ से निकल गया।''[५०] सास हमेश अभिलाषा पूर्ति के लिए बहू को पिटवाने का, जलाने का प्रयत्न करती है। इसी कारण आधुनिक समाज में साँस–बहू संबंध में हमेशा टकराहट पैदा होती है। इस पर सभी व्यंग्यकारों ने खुलकर व्यंग्य किये है।

आज का समाज में मनुष्य के स्वार्थ एवं अहं की टकराहटों के कारण सामाजिक संबंधो में बदलाव आया है। नियमों की अवहेलना करने का साहस आदमी में बढ़ा है। परिणामतः संबंधो पर ही आज प्रश्नचिन्ह खडा हो गया है। माता–पिता–पुत्र, पति–पत्नी, साँस–बहू–भाई आदि सभी संबंध स्वार्थ की कसौंटी पर कस जाने लगे है।

सास–बहू संबंध भी आज के कारण टुँटते हुए दिखाई देते है। रामायण, महाभारत काल में सास बहू के संबंध थे इसमें बदलाव आया है। सास को बहू के प्रति प्रेमभाव नहीं है और बहू को सास के प्रति आस्था नहीं रही है। इस कारण सास बहू में हमेशा टकराहट दिखाई देती है। व्यंग्यकार ने और अन्य व्यंग्यकारोंने सास– बहू संबंध पर व्यंग्य किये है। जो सोचने के लिए मजबूर कर देते है।

३.६.३. पिता–पुत्र संबंध पर व्यंग्य :

समाज में पिता–पुत्र के संबंधो में जो पवित्रता थी वह धीरे–धीरे समाप्त होती जा रही है। अर्थ प्रधान विश्व में पिता–पुत्र के संबंधो में बदलाव आया है। दोनो ही अपनी–अपनी भूख से विवश है और न जाने कब उनके बीच का रिश्ता गायब हो जाता है, समझ में भी

नहीं आता। शहरी परिवेश की चका चौंध में निम्न और मध्यवर्ग का युवक अपने पारिवारजनों की आशाओं, आकांक्षाओं, स्वप्नों को चकनाचूर करता है। शहर में आने के बाद केवल व्यक्ति गत जिंदगी जीने लगता है और सहज परिवारिक संबंधों को नकार देता है।

पिता से मुँह लगाना तो आम बात हो गयी है। यदि पुत्र को समझाते हुए पिता उसे अनैतिक कार्यो से रोकता है, तो पुत्र स्वीकार करने के विपरित अपने कुल की कलंक कथा बखान करने लगता है। ''मर्द के बच्चे तो तुम हो, जिसको यह भी स्मरण नहीं है कि तुम स्वयं कौन हो और किसको गालियाँ दे रहे हो।''[५१] आज की पीढ़ी अपने पिता का सम्मान नहीं करती। पिता पुत्र के इस संबंध पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है।

आज पिता–पुत्र संबंध भी बडे प्रजातांत्रिक हो गए है। किसी नियंत्रण अनुशासन की आवश्यकता नहीं रह गई है। बाप और बेटे दोनों ही अपने–अपने स्वभाव की लाचारियों और कमजोरियों के शिकार है, किंतु वे ये सोचते है कि, वह एक दूसरे को मूर्ख बना रहे है, जबकि परस्पर एक–दूसरे को खुद मूर्ख बना रहे है। स्वाभाविक है पिता के संस्कार पुत्र को मिलेंगे ही, वह तीनों पति–पत्नी और पुत्र रिक्शा में बैठकर पिक्चर देखने जा रहे थे। पुत्र को गोद में बिठाकर पिता ने पूछा बडे होकर तुम भी हमें पिक्चर दिखाने ले जाओंगे न? क्यों? पुत्र ने प्रतिवाद किया, आप दादाजी को घर पर ही छोड जाते हैं। बाप–बेटे के इस सनातन संबंध पर व्यंग्य करते हुए, ''बाप की अर्थी का अग्नि संस्कार वेटा ही करता है।''[५२] इसमें बाप–बेटे के अपने–अपने स्वभाव की लाचारियों और कमजोरियों पर व्यंग्य किया गया है। जो आज के पिता–पुत्र को सोचने के लिए मजबूर कर देता है।

समाज में पिता–पुत्र के संबंधो में जो पवित्रता थी वह धीरे–धीरे खंडित होती जा रही है। अर्थ प्रधान विश्व में पिता–पुत्र संबंध में बदलाव आया है। पिता से मुँह लगाना तो आम बात हो गयी है। यदि पुत्र को समझाते हुए पिता उसके अनैतिक कार्यो को रोकता है,

तो पुत्र उसे स्वीकार करने के विपरित अपने कुल की कलंक कथा बखना करने लगता है। इस प्रकार व्यंग्यकार ने पिता–पुत्र के संबंधो पर व्यंग्य किया है।

३.६.४. माता–पुत्र संबंधो पर व्यंग्य :

साहित्यकारों ने माँ की महत्ता को साहित्य के माध्यम से अमर किया है। बदलते हुए परिवेश के साथ माँ के स्वभाव में भी परिवर्तन दिखायी देता है। परंपरागत माँ अपने लाडले को ऐसी शिक्षा देती थी, जिससे बच्चे के मन पर अच्छा प्रभाव पडे। आज की दौंड में आज सब कुछ पीछे छूट गया है। ऐतिहासिक माताएँ अपने बच्चे को रामायण–महाभारत के चरित्रों की वीरतापूर्ण कहानियाँ सुनाकर शिवाजी बनाया करती थी। आधुनिक मम्मियाँ बच्चों को रामायण महाभारत देखने के बाद कहती है कि, और 'टाईम वेस्ट मत करो। उन्हें बच्चों के होमवर्क की चिंता सताती है। सारा टाईम उसी में व्यस्त रहना पडता है। इस बदलते हुए परिवेश के साथ माता–पुत्र के स्वभाव में भी परिवर्तन दिखाई देता है।

माता–पुत्र के संबंध पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''एक कंगाल था तेरा बाप, और ऊपर से कंजुस भी फिर तेरी खूसट दादी मेरे सिर पर सवार थी। उससे कभी कोई सुख नहीं मिला। तुझे मैंने बड़ा किया, पढ़ाया–लिखाया तेरा ब्याह किया। पर तुझे नौकरी ही नहीं लगी। तू चारपाई भी तोडता रहा और मुफ्त की रोटी भी। मैं अपने कलेजें का खून पीती रही और सब कुछ देखती रही। क्यों इसी दिन के लिए रे?''[५३] व्यंग्यकार ने माता–पुत्र के स्वार्थी संबंध पर व्यंग्य किया है। इसमें आज तथा पश्चिमात्य संस्कृति के अनुकरण को भी व्यंग्य की चपेट में ले लिया है।

संयुक्त परिवार की जगह आज तिकोन या चौकोन परिवार ने ले ली है। इसके पीछे विद्वानों की दृष्टि में भले ही सामाजिक, आर्थिक स्थितियाँ रही है पर इसका असली कारण आज की आधुनिक माँ ही है, जो स्वयं मिसाल बनकर लड़की को भी यही राह बताती है। व्यंग्यकार ने माता–पुत्र के संबंध पर व्यंग्य करते हुए लिखा है कि, ''श्रीमती चोपडा का क्षोभ–लड़की पर और अधिक डबल पडता है। बात सुन ली और पल्ले बाँध ली। मूर्ख लड़की। कभी उसे समझने का भी प्रयत्न किया? मैने संयुक्त परिवार तोडा था तो पचास

हजार रूपयों की जायदाद हड़प ली थी। तेरी तरह नहीं की सिध्दांत के नाम पर पल्ला झाड़कर अलग हो गये और दो सौ रूपए की नौकरी में जान मारी। बड़ी आई संयुक्त परिवार तोड़ने वाली। तू मेरी नाम डुबाएगी, नालायक।''[५४] यहाँ माता अत्याधुनिक बनाने का प्रयास करती है वे अपने बच्चों का भविष्य तो बिगाडती रही है परंतु स्वयं भी कभी-कभी हास्यापद बन जाती है।

इस प्रकार आज के युग में माता-पुत्र के संबंध अर्थभाव के कारण बदल रहे है। आज का युवक शहर में आने के पश्चात् केवल व्यक्तिगत जिंदगी जीने लगता है और माता को भूल जाता है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश का परिवेश बदला और उसका प्रभाव पारिवारिक संबंधो पर पड़ा है। धीरे-धीरे संबंध विश्रृंखल होते जा रहे है। इस से माता-पुत्र के संबंधों में भी टकराहट हो रही है।

३.७. कार्यालयीन विसंगतियाँ और व्यंग्य का संबंध :-

समाज और कार्यालय का संबंध हर दिन का होता है, कारण कार्यालयों में स्त्री-पुरूष के रूप में मनुष्य है। मनुष्य और समाज का संबंध है, कार्यालयों में अनेक प्रकार की विसंगतियाँ दिखाई देती है, जैसे भ्रष्टाचार ने राज मान्यता प्राप्त कर ली है, एवं सरकारी दफ्तरों में सर्वत्र उसका शासन है। सरकारी कर्मचारियों मे 'कम काम अधिक दाम' कार्य प्रणाली ने जोर पकड़ लिया है। प्रशासन प्रणालि पर राजनीति का प्रभाव होता है। प्रशासन के कार्यप्रणाली में भाई-भतीजावाद, रिश्तेदारों को ठेके, देना यह कार्य नेता के व्दारा किया जाता है। प्रशासन के सभी कार्यालयों में विसंगति दृष्टिगोचर होती है। अस्पताल पुलिस, रेल एवं बस सेवा दूरदर्शन एवं आकाशवाणी, तथा न्याय व्यवस्था आदि कार्यालयों में भ्रष्टाचार की अँधेर गर्दी, और धाँधली चरमसीमा तक प्राप्त है। कर्मचारी-वर्ग बिल्कुल ही अकर्मण्य तथा गैर-जिम्मेदार है। इसी कार्यालयीन विसंगतिओं का लक्ष्य बनाकर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किये है। इसी कार्यालयीन विसंगतियों को निम्मानुसार दृष्टिगोचर किया जा सकता है।

३.७.१. शिक्षा व्यवस्था पर व्यंग्य :

अंग्रेजी शासन व्यवस्था में प्रचलित शिक्षा पध्दति लगभग आज तक चली आ रही है, जबकि आज की परिस्थिति में देश को शिक्षा पध्दति में बदलाव की नितान्त आवश्यकता है। आज देश विकास के पथ पर खड़ा है। इसलिए शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व मैकाले व्दारा भारत में जिस प्रकार की शिक्षा प्रणाली की स्थापना की गई थी उसका कुल उद्देश्य केवल मात्र अंग्रेजी शासन शासन व्यवस्था को चलाने के लिए क्लर्क बनाना था। विडम्बना यह रही है कि अंग्रेजी शासन में प्रचलित शिक्षा पध्दति लगभग आज तकी चली आर रही है।

भारतीय शिक्षा पध्दति को राष्ट्रीय स्वरूप देने के लिए स्वतंत्रता के पश्चात् कई संस्थानों की स्थापना हुई किंतु विडम्बना यह रही की स्वतत्रंता के पश्चात् इनका महत्व आदर्श संस्थानों की स्थापना हुई किंतु विडम्बना यह रही कि स्वतंत्रता के पश्चात् भी परिवर्तन नही हुआ। अंग्रेजी शिक्षा पध्दति होने के कारण अंग्रेजी भाषा के माध्यम व्दारा विदेशी ढंग की शिक्षा पध्दति होने के कारण अंग्रेजी भाषा के माध्यम व्दारा विदेशी ढंग की शिक्षा को ही आदर्श बना लिया है। इस शिक्षा पध्दति को लेकर अनेक वाद– विवाद उठ खड़े हुए है। किन्तु देश और जनता का दुर्भाग्य है कि, इस ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। शिक्षा के प्रति उदासीनता ही दिखायी देती है। जिसके कारण भारत में सिर्फ पढ़े–लिखों की बाढ़ आ रही है। परिणामस्वरूप बेरोजगारी में बढोत्तरी हो रही है।

आज की शिक्षा पध्दति में अनावश्यक विषय, बढता हुआ पाठयक्रम विदेशी नमूनों पर आधारित पाठयक्रम, नित्य नये शिक्षा–संस्थानों का खुलना, गिरता हुआ शिक्षा का स्तर और शिक्षा पध्दति की ओर शासन की उदासीनता के कारण शिक्षा पध्दति में विसंगतियाँ, विकृतियाँ पैदा होती गयी है, इस पर प्रचुर मात्रा में व्यंग्य किया है। व्यंग्यकार ने वर्तमान शिक्षा पध्दति व्दारा प्राप्त डिग्रियों की निरन्तर बढ़ती हुई बाढ़ पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''उससे यह होगा कि मैं ढेर सारी डिग्रियाँ छपवाकर बोरों मे भरवाकर अपने पास रखूँगा।

जब कभी लडके कोई प्रदर्शन करने आयेंगे तो मैं उन बोरे में से उनकी इच्छानुसार डिग्रियाँ निकालकर उनको दे दूँगा।''[५५] शिक्षा पध्दती व्दारा बी. ए. एम. ए. तथा पीएच. डी. की डिग्रियों की निरन्तर बढ़ती हुई बाढ़ पर तीव्र कटाक्ष किया है। जो शिक्षा पध्दति में बेरोजगारी को बढने के सिवाय दूसरा कार्य नहीं करती।

आज शिक्षा क्षेत्र में कार्यसिध्दी के लिए नाना प्रकार के हथकण्डों का प्रयोग किया जाता है। प्रतिभा तो महत्वहीन है वह नगण्य बनकर रह गयी है।

वर्तमान गुरू–शिष्य के सम्बन्ध पर पौराणिक उध्दरण व्दारा अपने व्यंग्य किया है, ''हाँ पर उसमें बड़ा अन्तर है। वह पुण्य युग था, यह पाप युग है। उस एकलव्य नें बिना तर्क गुरू को अँगूठा काटकर दे दिया, इस एकलव्य ने गुरू को अँगूठा दिखाया है।''[५६] इस प्रकार गुरू–शिष्य संबंध वर्तमान युग में बिगडते जा रहे है।

आज कठिन साधना व्दारा ज्ञान प्रापत करना व्यर्थ में समय खोना है, जबकि चाटुकरिता, व्यवहार कुशलता एवं इसी भाँति के अन्य साधनों से सहज में ही प्रथम श्रेणी प्राप्त की जा सकती है। क्योंकि गुरू लम्पट है, तो शिष्य कपटी है।

पाठयक्रम को लेकर शिक्षा–प्रणाली पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''मै जरा स्वभाव से पाठयक्रमवादी हूँ और मानता हुँ कि दुनिया की सारी जरूरी बातें छात्रों के पाठयक्रम में टूँस दी जानी चाहिए।''[५७] आज की स्थिति व्यावहारिक शिक्षा की माँग आवश्यक है।

पाठयक्रम को लेकर व्यंग्यकार बताते है कि आज का पाठयक्रम कुछ काम का नहीं जिससे सिर्फ बेरोजगारी में बढोत्तरी ही हो सकती है। पाठयक्रम तो व्यवसायभिमुख होना चाहिए लेकिन सिर्फ पाठयक्रम में दुनिया की जरूरी बाते पढ़ानी चाहिए लेकिन इसका जीवन में कुछ मुनाफा नहीं है।

आज स्वातंत्र्योंत्तर काल में भारत में शिक्षा प्रणाली का पुराना विकृत रूप आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ है। शिक्षा के सम्बन्धी जितने प्रयोग किय गये, प्रायः सब ही असफल रहे है। शिक्षा प्रणाली का पुराना विकृत रूप आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ है। शिक्षा को

शासन की ओर से सुधारने का विशेष प्रयास किया नहीं जा रहा है। इसमें अनावश्यक विषय, बढता हुआ पाठयक्रम विदेशो नमूनो पर आधारित पाठयपुस्तके नित्य नये–नये असंख्य शिक्षा संस्थानों का खुलना दिन–प्रतिदिन गिरता हुआ शिक्षा का स्तर, शिक्षा के क्षेत्र में भी राजनीति एवं सत्ताधरियों का अनुचित हस्तक्षेप आदि कुछ विकृतियों ने शिक्षा के रूप को कुरूप कर दिया है। व्यंग्यकार ने इन विद्रूपताओं को लक्ष्य बनाकर सशक्त प्रहारर किये है। और शिक्षा पध्दति का पर्दापाश किया है, जो सोचने के लिए मजबुर कर देता है।

३.७.२. कार्यालयीन अधिकारी :

सरकारी, दफ्तरो में भ्रष्टाचार ने राजमान्यता प्राप्त कर ली है और सर्वत्र उसका शासन है। सरकारी अफसरों के हाथ अगर भ्रष्टाचार से रंगे है, तो आश्यर्च ही क्या? इसी बात को केंद्र में रखकर लिखते है, ''अफसर के इतने गोदाम बन जाते है, कि वह राष्ट्रपति को मकान किराये पर देने का हौंसला रखता है। किस जादू से गोदाम में रखे गेहूँ का हर दाना सोने का हो गया। इसे बो दिया जायेगा, तो फिर सोने की फसल कट जायेगी।''[५८] इससे स्पष्ट है सरकारी कार्यालयों में सभी ओर भ्रष्टाचार पनप रहा है।

सरकारी दफ्तरों की अनंत जादू, आर्थिक नीति, कार्य–प्रणाली के संदर्भ में 'महिना मार्च– में व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''ये सज्जन सारा दफ्तर परिवार की तरह ही चलाते है। किसी सीट पर भांजा काम कर रहा है, तो किसी सेक्शन में भाई का लड़का। कार ड्रायव्हर तक इनका दूर का रिश्तेदार ही था। वे अब भी किसी–किसी के बिल के भुगतान पर हॅम्लेट के संवाद का ही प्रयोग करते थे जैसे –टू पे आर नाट टु पे दैट इज दी क्वशन?''[५९] इस प्रकार ऊपर से नींचे तक सभी व्यवस्था भ्रष्ट बन गयी है।

अफसरों के भ्रष्ट करोबार पर आघात करते हुए भारतभूषण अग्रवाजली लिखते है, ''मौके पर तो नेता तक को उनके आगे झुकना पडता है। अरे नहीं, अफसरी में ऊपरी

आमदनी के हजारों जरियें है–थोडी सी चतुराई चाहिए।''[६०] इससे स्पष्ट है मौकापरस्त भ्रष्ट अधिकारियों की कोई कमी नहीं है।

भ्रष्ट प्रशासन अधिकारीयों पर आघात करते हुए लिखते है, ''जपानी नाइलोन की साडी पहने थी और उसका नेकलेस ऐसा चमक रहा था कि आँख चौधियाँ जाएँ क्यों जी, जब परमिट लाइसेन्स दिला के क्लर्क इतना पैदा कर लेते है, तो अफिसरों और मंत्रियों की आमदनी का क्या ठिकाना।''[६१] इससे यह बात स्पष्ट है कि इन लोगों में मानो पैसा कमाने की होड लग गयी है।

आज यह कहा जा सकता है कि, अधिकारी जनता के रक्षक सहाय्यक न होकर उसके भक्षक विधाता बने हुए है। इनसे उबरने के रास्ते भी व्यंग्य रचनाओं में मिलते है। व्यंग्यकार ने और आदि ने कार्यालयीन अधिकारीयों पर व्यंग्य किया है, जो सोचने के लिए मजबूर कर देता है।

३.७.३. अस्पताल :

अस्पताल एवं डॉक्टर का पूरे विश्व में सम्मान होता है। क्योंकि डॉक्टर को भगवान का रूप माना जाता है। अस्पताल यह पवित्र स्थल होता है, जहाँ रोगी बहूत आशा और विश्वास के साथ जाता है। वहाँ जाने के पश्चात् रोगी को लगता है कि, मैं बीमारी से मुक्त होकर लौटुंगा। अस्पताल की मूर्ति को याने डाक्टर को भगवान समझा जाता है। जो आयी हुई बीमारी से निकालकर एक जीवन देने का कार्य करेंगा। जिसे आधुनिक काल में ही सम्मान का स्थान नहीं, बल्कि भारत में प्राचीन काल, आयुर्वेद से लकर आज तक जीवनदाता के रूप में देखा जाता है। किंतु विडबंना है कि, आज का चिकित्सक और चिकित्सालय जीवन देने के स्थान पर जीवन लेने वाले बन गये है। इसी कारण व्यंग्यकार ने अपने व्यंग्य से अस्पताल डाक्टर एवं कर्मचारियों पर सशक्त प्रहार किये है। ऐसी ही कुटित प्रवृत्तिपर व्यंग्यकार ने त्राहि–त्राहि में अस्पतालों में किये जाने वाले, अत्याचार, अनाचार

एवं कुनीतियों पर व्यंग्य किया है। वे लिखते है, ''पेशेंट को जान से तो हम नहीं रोकते। चौकदार कहता है, पर तुमको जाना है तो पास दिखाओ। अजीव आदमी हो! साहबिन कहती है, बच्चे बीमार है। उनको अस्पताल में भरती कराना है। पास एडमिट कराने से पहले कहाँ से बनेगा? अच्छा। चौकीदार मजमा लगाने वाले बाजीगर के समान स्वीकारता है, तो कौन–सा बच्चा बीमार है? दोनों बीमार है? दोनों बीमार है। साहब दीन होकर कहते है, देर मत करो, नहीं तो बच्चे मर जाएँगे।''[६२] व्यंग्यकार ने ऐसी विडंबनात्मक स्थिति का पर्दापाश किया है, टाँग काटने कि नही थी, लेकिन रिसर्च के लिये बीमार टाँग काटकर विलायत भेजी गयी। आज अस्पताल में डॉक्टर जीवनदाता की जगह यमदूत बन गय है। डॉ. नरेन्द्र कोहली लिखते है, ''बीमार बच्चा भूख से व्याकुल बिलबिलाता है। क्योंकि दूध अस्पताल को ही देना है। अतःदूध न मिलने तक बच्चे को यों हि रोना पडेगा। यदि वह मर गया तो दूध अस्पताल को ही देना है। अतः दूध न मिलने तक बच्चे मर जाता है, बाप घर वापिस जाने लगता है। बडी नर्स आकर पकड लेती है। आप घर नहीं जा सकते, पहले हास्पिटल का बिल पेड़ करो।''[६३] इस प्रकार आज के अस्पतालों में चल रही वास्तविकता स्पष्ट की गयी है।

''अकौंट्ंट बिल बनाता है। अस्पताल के नियमों की पेचीदगियों के कारण वह घर नहीं जा सकता। अंत में हाटकर वह अस्पताल के चौकीदार से बिनती करती है कि वह पंद्रह–बीस दिनों के लिए अपना स्टूल दे दे। चौकीदार स्टूल दे देता है, 'स्वीकार ! स्वीकार!' बच्चे का बाप हाथ जोड देता हैं, तुम मुझसे अपना स्टूल मत छीनों।''[६४] इस प्रकार व्यंग्यकार ने अस्पताल की विकृतियों एवं विसंगतियों को लक्ष्य बनाकर कटु प्रहार किये है।

आज का चिकित्सक एवं चिकित्सालय जीवन देने के स्थान पर जीवन लेनेवाले बन गय है। यहाँ भी स्वार्थ, पॉलिटिक्स,आपाधापी व्याप्त है। अस्पतालों की ऐसी विषम स्थिति पर हरिशंकर परसाईने 'रामभरोसे का इलाज' में लिखा है, ''मेरी शिकायत है फाटक पर

कई दिनों से मरिज पडे है मगर उनकी जाँच नहीं हो रही है।'' सुपरिन्टेण्डेण्ट बोले, ''देखिए आपका ख्याल गलत है, उनकी जाँच तो हो रही है... बाहर मरीजों को पडे रहने देते है, हम उनके रोग की जाँच करते है, और उन मरीजों को डाँटते है, जो इलाज के लायक है। इनमें जो ज्यादा बीमार है, वे तो मर ही जायेंगे.... जो कम बीमार है वे उब कर घर लौट जायेंगे। जिन्हे इस अस्पताल में घुसने की गुप्त सुराखे मालूम है, वे उससे भीतर घुस जायेंगें। अब जो बचेंगे, वे सच्चे मरिज होंगे, उनका इलाज होगा।''[६५] व्यंग्यकार ने अस्पताल की इस अवस्था का खुलकर विरोध किया है, क्योंकि अस्पताल में भी आज राजनीति आ गयी है। जो राजनेता के रिश्तेदार होंगे, राजनेता के सिफारिश से उन मरिजो की ही अच्छी देखभाल की जाती है।

व्यंग्यकार ने अपने 'अस्पताल' के बारे में डाक्टरो एंव अन्य कर्मचारियों के मलिन रूप पर सशक्त व्यंग्य करते हुऐ लिखा है, ''डाक्टर का रूप धारण कर चित्रगुप्त चला आ रहा है। मैंने उसकी पगध्वनि पहचान ली। नर्स के रूप में उसका एक पुराना सहयोगी है। यह अस्पताल यमराज का विशिष्ट प्रिय क्षेत्र है। क्योंकि यहाँ उसे हमेशा जरूर से ज्यादा कच्चा माल प्राप्त हो जाता है।''[६६] इस प्रकार व्यंग्यकार ने अस्पताल के डाक्टरों एवं कर्मचारियों के मलिन रूप पर सशक्त प्रहार करते हुऐ उनकों यमराज का नाम दिया है। अस्पताल में मरीज ठीक होने की जगह मृत्यु के व्दार खटखटाता है। जिसे डॉक्टर जिम्मेंदार होता है।

व्यंग्यकार 'रामभरोसे का इलाज' में लिखा है, ''इनसे हिसाब में देखा कई नाम लिखे रहते है, जिनके लिए दवा स्टोर से निकल जाती है। वे वास्तविक आदमी नहीं होते प्रेत होते है। मेरे मरने के बाद इन लोगों ने मेरा नाम रजिस्टर पर चढ़ा लिया और खर्च बताने लगे।''[६७] जो मेरा है उसके नाम लिखकर सरकारी अस्पताल में खर्च बताने का काम किया जाता है। इसे मार्मिकता के साथ स्पष्ट किया गया है।

काका हाथरसी ने श्रेष्ठ हास्य–व्यंग्य में व्यंग्य करते हुए लिखा है कि, ''अस्पताल में कर्मचारी जनरल वार्ड में मरीजों के बजाय बंगले पर डयुटी देना आवश्यक समझते है।

अस्पताल का धोबी बंगले के कपडे मुफ्त में धोता है। अस्पताल से दूध फल मरीजों को न मिले लेकिन बंगले पर भेजे जाते थे क्योंकि मरीजों का स्वास्थ्य रखने के लिए आवश्यक था, डॉक्टर का भी स्वास्थ्य अच्छा हो। यदि दवाएँ अस्पताल में न होती तो मरीज बाजार से खरीद कर ला देते। मेडिकल डायरेक्टर या हेल्थ मिनिस्टर के दौरे के समय ऐसा प्रबन्ध होता कि डॉक्टर की तरक्की का मार्ग खुला जाता।''[६८] इस प्रकार सभी ओर मिलीभगत दिखाई देती है।

काका हाथरसी ने अस्पताल का धोबी, डॉक्टर, मरीज के फल, कहाँ जाते है। हेल्थ मिनिस्टर आने के बाद तरक्की के लिए डॉक्टर क्या करते है आदि बातें स्पष्ट की है जिसमें व्यंग्यात्मकता भरी है।

अस्पतालों में अंधेरगर्दी मची है। बडे से बडे डॉक्टर से लेकर नीचे से नीचे पहरेदार तक सब कर्मचारी भ्रष्ट है, किसी में सहानुभूति, संवेदना का भाग नहीं रहा है। आज अस्पताल रूपी भूलभूलैया में रहने से तो रोगी अपने घर की शान्ति में दम तोड देना अधिक अच्छा समझता है। व्यंग्य कार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने और अस्पताल को लेकर खूब मात्रा में व्यंग्य किये है।

३.७.४. पुलिस :

पुलिस का कार्य होता है, जो जनता के जान–माल की रक्षा करे और उसकी सहाय्यता करे। किन्तु पुलिस व्यवस्था रिश्वतखोरी एवं भ्रष्टाचार में लिप्त रही है। आज पुलिस सेवा पर से जनता का विश्वास उठ गया है। पुलिस सामान्य जनता के पति एकदम अकर्मण्यता सा व्यवहार करती है, तो रिश्वत देनेवाले, राजनेंता, मंत्री आदि की खुब सेवा करती है। आज पुलिस विभाग ऐसे आरडियों पर ही चलता है। सब काम नकली। किसी किराये के चोर को डंडा चोर बना लिया जाती है और निरपराध को डंडे–चोर से मार–कार कर चोर बनाया जाता हैफ पुलिस बेईमानी को बढ़ावा देती है। सही चोर की तलाश करती

है और गलत आदमी को चोर सिध्द करती है। भारतीय पुलिस, प्रशासन पर हिन्दी व्यंग्यकार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने व्यंग्य किया है।

व्यंग्यकार ने 'जगाने का अपराध' में पुलिस के विचित्र व्यवहार पर आघात किया है। पुलिस की कार्यप्रणाली ऐसी है कि, वह चोरों का प्रतिनिधित्व करते है। चोरों को चोरी करने में मदद पुलिस करती है, एवं चोर कपडे भी गये तो पुलिस थाने से बाहर निकालने का कार्य भी पुलिस करते है। ''उस्ताद! क्या कर रहे हो? तुम लोग हड़ताल पर क्या गए हम अनाथ हो गए। जहाँ आतं है, पकडे जाते है। तुम लोग हड़ताल पर क्या गए हम अनाथ हो गए। जहाँ आते है, पकडे जाते है। तुम लोग अपने काम पर लौटा, ताकि लोग तुम्हारे भरोसें असावधान हों और हम चोरी कर सकें पकडे भी जायें तो बचाने के लिए तुम्हारा डयुटी पर होना जरूरी है।''[६९] यहाँ पुलिसों के कार्य प्रणाली पर व्यंग्यकारने आघात किया है जो आज की वासतविकता है।

व्यंग्यकार ने पुलिस के तानाशाही, स्वभाव, कार्यपध्दति और रौब, पर व्यंग्य किया है, ''आपने साइकिल के बारे में जो उत्तर दिये है उनसे ऐसा प्रतीत होता है कि साइकिल आपकी नहीं है। आपको अपनी साइकिल का न तो नम्बर मालूम है, न उसकी तारों की संख्या ही याद है, न उसकी रसीद है। क्यों न आपको हवालात में बन्द कर दिया जया?''[७०] पुलिस खुद को आर. टी. ओ. समझती है एवं छोटी-छोटी बातों से लेकर परेशान करने का कार्य करती है। इसे यहाँ स्पष्ट किया गया है।

हरशंकर परसाई अपने व्यंग्य में कहते है, पुलिस भ्रष्ट तो है ही, साथ ही निकम्मी है। पुलिस तो तब पहुॅचती है जब लुट-पाट, खून खराबा हो। लुट-पाट हो जाने के बाद भागजी खाना पूरी कर लेती है। निरपराधियों को जबरन अपराधी बना देती है। ऐसी कर्तव्य परायणता पुलिस करती है। आज पुलिस सेवा के प्रति ऐसी धारणा बन गई है कि, उसके सदाचरण पर कोई विश्वास ही नहीं करता। अन्त में उसे अपने आदर्शो से हाथ धोने पडते है, जैसे, ''बूढा बोला, तु पुलिस का इंसपेक्टर नहीं है, तूने यह वर्दी चुराई है और हमें ठगने

आ गया है। मैनें क्या पुलिस वाले देखे नहीं है। तुम में एक भी लक्षण सच्चे पुलिस अफसर का नहीं है। तेरी तरह किसी ने भी मुझे क्यों बूढ्ढे की जगह बाबा नहीं कहा।''[७१] एक नौजवान पुलिस इन्सपेक्टर, भ्रष्टाचार मिटाने का आदर्श लेकर सेवा में आता है। उसकी नैतिकता से सब परेशान है, कोई उस पर विश्वास नहीं करता। बल्कि उसे वर्दी पहनकर कोई ठग या डाकू पुलिस इन्सपेक्टर बनकर आया है, ऐसा मानते है। ऐसा होने के पश्चात् अपने आदर्शो से पुलिस को हाथ धोने पडते है।

पुलिस भ्रष्टाचारी तो होती है, साथ निकम्मी होती है उसे अपने व्यंग्य साहित्य मं 'महिमा एक नाम की ऊर्फ परम्परा सन्तो की मे स्पष्ट करते हुए लिखते है''......... पर गार्ड, गार्ड को कहाँ खोजा जाये? गाडी जाने को तैयार होती है तो गार्ड को खोजना वैसा ही कठिन है जैसा की डाकुओं के आने पर भारतीय पुलिस को खोज पाना।''[७२] इस प्रकार पुलिसों के कार्य पद्धति पर सवाल उठाया है।

व्यंग्यकार कहते है कि, पुलिस तो भ्रष्टाचार करती है, लेकिन जब खून–खराबा हो जाता हैं, तो कागजी घोडे नचाने वहाँ पर आ जाते है। अपराधी को छोड देती है, निरपराधियों को गिरफ्तार करती है। ऐसा निकम्मा काम पुलिस करती है।

इस प्रकार व्यंग्यकार डॉ. कोहली कहते कि, पुलिस का आचरण ठीक नहीं होता, एक बार अगर पैसे दिये तो पुलिसवाले वापिस देने का नाम ही नहीं लेते, ऐसा पुलिस का आचरण होता जिसे डकैत की उपमा दी गयी है।

इस प्रकार व्यंग्यकारों ने अपने हिन्दी व्यंग्य में पुलिस प्रशासन की काली करतूते, भ्रष्टाचार, सतर्कता, कर्तव्य परायण्यता, रिश्वतखोरी, अनैतिकता अदि को लक्ष्य बनाया है। पुलिस का रक्षक रूप नहीं बल्कि भक्षक का रूप बना हुआ है। पुलिस को अपनी मनमानी करने की छूट है। जो अपराधियों को छोड देती है और निरापराधियों को पकडकर जेल के सलाखों के पीछे डाल देती है। जनता पुलिस से डरती है, घृणा करती है, उससे दूर रहना चाहती है। पुलिस बेईमानी को बढावा देती है। पुलिस जनता का समय बर्बाद

करती है। इसीलिए जनता पुलिस की सहायता नहीं लेना चाहती। लोगों का विश्वास पुलिस से उठ गया है। इस प्रकार पुलिस की अकर्मण्यता का करूणा खाकर व्यंग्य डॉ. नरेन्द्र कोहली ने किया है।

३.७.५. रेल और बस की व्यवस्था पर व्यंग्य :

रेल एवं बस सेवा जनकल्याण के लिये काम करती है। उसी के लिए इसकी व्यवस्था की गयी है। जनकल्याण के साथ–साथ माल ढोने के साधन के रूप में भी इनका उपयोग किया जाता है। इस सेवा में भी रिश्वतखोरी ने जोर पकड लिया है। इस सेवा में दिन प्रतिदिन किराये बढ़ाये जा रहे है। रेल सेवा में एवं बस सेवा में दिन–दहाडे लूटकर जनसामान्य का हरण किया जाता है। लोगों को लूटा जाता है, इसी सेवा में असुविधा परेशानियाँ दिन–ब–दिन बढती जा रही है। ऐसी व्यवस्था पर डॉ. नरेन्द्र कोहली ने बहूत छींटाकशी की है।

व्यंग्यकार अपने व्यंग्य 'बस स्टाप पर' में बस व्यवस्था के कारोबार पर दृष्टि डालते हुए लिखा है, ''तीसरी बस दस मिनट लेट है, दूसरी पचीस मिनट और पहली चालीस मिनट। चौथी जब लेट होने लगेगी तो वह भी बता दूँगा।''[७३] बस प्रशासन की लापरवाह शासन पध्दति का वास्तव दर्शन कोहलीजी ने यहाँ किया है।

व्यंग्यकार ने रेल के कारोबार का पर्दाफाश करते हुए सुरक्षा पर व्यंग्य करते हुऐ लिखा है, ''गाडी आ गयी इंजिन के पास क्या देखता हूँ कि, एक बुढ़ियां ड्रायव्हर से पूछ रही थी, मै अमुक स्थान पर राजीखुशी पहुँच जाऊंगी की नही।''[७४] इस प्रकार आज के रेल व्यवस्था पर भी व्यंग्य करने का प्रयास किया है।

आज रेल सेवा एंव बस में सुरक्षा के साथ प्रवास करना बड़ी कठीनाई की बात बन गयी है। जिस जगह पर जाना, है, उस जगह बस जब तक पहुँचती नहीं तब तक कोई भरोसा नहीं होता।

रेलों की असहनीय भीड़ पर तीव्र कटाक्ष करते हुए व्यंग्यकार ने कहा है, ''रेलगाडियों मे इनती भीड होती है कि, हम कुचलकर या दम घुटकर मर जायेंगे। आप तो जानते है कि दिल्ली में आदमी गाडी में बैठते है और मद्रास में लाशे उतरती है।''[७५] इसमें डॉ. कोहली ने रेल की विकृति का पर्दाफाश कर उसकी धज्जियाँ उड़ाई है।

व्यंग्यकार ने रेल व्यवस्था की विकृति पर विडम्बना व्दारा प्रहार करते हुए लिखा हैद्व ''रेले हमें राष्ट्रीय बनाती है। हमें सहिष्णु बनाती है। वह हमें संघर्ष की प्रेरणा का अवसर ही नहीं देती, निरन्तर उत्तेजित भी करती है। यही मनुष्य प्रगति की निशानी है– मैं भारतीय रेल की प्रगति के प्रति आश्वस्त हूँ।''[७६]

रेलयात्रा की असुविधाओ, परेशानियों पर छोटाकशी करते हुए रेल व्यवस्था की विसंगतियों का पर्दाफाश किया है।

राज्य परिवहन की एक बस नाले में गिरी इस में लतीफ घोंघीजी ने व्यंग्य किया है, बस में सफर करना सुरक्षा की दृष्टि से खतरा है। सफर करनेवाले का तब तक भरोसा नहीं होता जब तक वे घर नहीं लौटते इस पर व्यंग्य करते हुए व्यंग्यकार लिखते है, ''जब मैं घर पहुँचा तो पत्नी ने मेरी आरती उतारी। बोली परिवार के तुम पहले आदमी हो जो बस से सफर कर रहे थे और सशरीर वापस आ गये। वरना मुझे तुम्हारे लिए सावित्री बनना पडता।''[७७] इस प्रकार आज के व्यवस्था पर कोडे लगाने का कार्य किया है।

बस सेवा जनता की सुख सुविधा के लिये गठित हो गई है। किंतु इस सेवा ने भी महाविकृत रूप धारण कर लिया है। घंटो बस की प्रतीक्षा में खड़े रहना पडता है। बस की कुव्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''मैं भी बड़ी फुर्तीसे बस–स्टँड पर आया। वहाँ रोज के समान कोई बस नहीं थी। मैं जानता था कि यहाँ घंटा डेढ घंटा खडा रहूँगा तो बस मिलेगी। दिल्ली में अपने मतलब की बस को पाती भी बेटी के लिये सुयोग पर पाने से कम सौभाग्य की बात नहीं है।''[७८] घंटो बस की प्रतीक्षा में खड़े रहना, बस का स्टॉप पर आने

पर भी नहीं रूकना। बस रूक भी गई तो इतनी भीड की उसमें चढ़ना और उतरना दोनों ही असम्भव होते है। इसी कुव्यवस्था पर व्यंग्य किया है।

व्यंग्यकार ने 'हनुमान की रेलयात्रा' में रेल सेवा की कुव्यवहार पर सम्पूर्ण वृत्तान्त में आक्षेप और कटु तीव्र व्यंग्य किया है, हनुमान की आँखो से आँसू टपकने लगे। कहने लगा, ''मालिक, मुझे मर जाने दीजिये। मैं गाडी में नहीं बैठ सका। मेरे बल को धीक्कार है। जिसे गाडी ने मुझे उपर नहीं बिठाया उसके नीचे बैठकर मै प्राण त्याग दूँगा।''[७९] इस प्रकार आज हर इन्सान इनके अव्यवस्था से परेशान है।

महाबलशाली, महापराक्रमी हनुमान भी रेलयात्रा व्दारा अपनी स्वामिनी को दिल्ली से लाने में असमर्थ हुआ। वह ग्लानि से जल रहा था। उसने ऐसे जीने से आत्महत्या करना ही उचित समझा। हनुमान रेल की पटरी पर लेट गया। उधर से रामचन्द्र घूमते हुए निकले और हनुमान को जल्दी से उठाया और पूछा कि तुम दिल्ली क्यों नही गया। इस पर आँखो से आँसू टपकने लगे और कहने लगे मैं गाडी में नही बैठ सका। रेल की ऐसी कुव्यवस्था पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है।

आज रेल सेवा में भी रिश्वतखोरी ने जोर पकड़ लिया है। दिन–ब दि किराये बढ़ाये जा रहे है। रेल एवं बस सेवा में दिन–दहाडे लूटकर जन सामान्य का हरण किया जाता है। इसमें असुविधा परेशानियां बढ़ती ही जा रही है।

निष्कर्ष :

डॉ. नरेन्द्र कोहली के साहित्य में सामाजिक परिवेश का अध्ययन करने से यह सामने आता है कि, आजादी के पश्चात् भारत देश में प्रमुख रूप से उच्चवर्ग, मध्यवर्ग, निम्नवर्ग ये तीन वर्ग दिखाई देते है। समाज में दहेज प्रथा, अनमेलविवाह, वेश्या समस्या, जाति पाँति एवं अस्पृश्यता, आर्थिक दुष्चक्र, बेकारी आदि समस्याएँ है। पारिवारिक जीवन कलह क्लेश से भरा हुआ है। पिता–पुत्र, पति–पत्नी के संबंध में टकराहट है। समाज में मनुष्य के स्वार्थ एवं अहं की टकराहटों के कारण परस्पर संबंधो पर प्रश्नचिन्ह खड़ा हो गया है। माता–पिता, पति–पत्नी, साँस–बहू, भाई–भाई सारे संबंध स्वार्थ की कसौटी पर कसे जाने लगे है। जहाँ शासन तन्त्र भ्रष्ट हो और जनता में अकर्मण्यता एवं मिथ्या सन्तोष की भावना घर किया हो, वहाँ अनेक समस्यायें उत्पन्न होती है। देश में अनेक समस्यायें है, जैसे बेरोजगारी की समस्या, दहेज की समस्या, जाति–पाति की समस्या, अंधश्रध्दा की समस्या, रूढि परंपरा की समस्या, त्यौहार–उत्सव की समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या, तथा बाढ़ की समस्या आदि सामाजिक समस्याओं ने देश को जकड़कर रखा है।

बेरोजगारी से आज का युवा आक्रान्त है, विश्वविद्यालय में प्रथम श्रेणी की डिग्री प्राप्त करने पर भी विद्यार्थियों को नौकरी के लिए कई–कई वर्षो तक संघर्ष करना पडता है। नौकरी के लिए डिग्री और योग्यताओं से बढ़कर सिफारिश को समझा जाता है। जिससे युवकों की हताशा और भी अधिक बढ़ गई है। दिशाभुमित युवक राजनीतिज्ञों के स्वार्थो का निशाना बनते है। बहकावे में आकर आज का युवक हड़ताल, तोड–फोड और आक्रमक रूख अपना कर चलने के लिए विवश है। दहेज आज प्रधान समस्या बनी हुई है। कन्या के जन्म के दिन से ही, दहेज की समस्या इसके माँ–बाप के मस्तिष्क में घर कर जाती है। और यदि दुर्भाग्यवश उस व्यक्ति को तीन–चार बेटियाँ है, तो उसका सारा जीवन इस समस्या का समाधान करने में व्यतीत हो जाता है। जातिवाद को समूल नष्ट करना है तो शिक्षा सस्यांओं में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि, बच्चों के मन से जाति–पाति का भेदभाव

पैदा न हो सके। विभिन्न जातियों में सांस्कृतिक और आर्थिक समानता उत्पन्न करना जरूरी है।

व्यंग्य से यह प्रतीत होता है कि धर्म का उपयोग अपने स्वार्थ के लिये किया जा रहा है। धर्म के प्रति अंधश्रध्दा रखने से धार्मिक आडम्बर एवं अंधश्रध्दा बढ़ रही है। धर्म के नाम पर असद् व्यवहार करनेवाले लोगों का व्यंग्यकार डॉ. नरेन्द्र कोहली जी ने पर्दाफाश किया है। युग में भ्रष्टाचार की जड़े इतनी मजबूत हो गई है कि, साँस लेने के लिए भी भ्रष्टाचार का सहारा लेना आवश्यक हो गया है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में चले गये तो भ्रष्टाचार का बोलबाला दिखाई देता है। सामाजिक भ्रष्टाचार भी देश की प्रधान समस्या बनी हुई है। रूढ़ि–परंपरा समाज के विकास से अवरूध्द पैदा कर देती है। विधवा विवाह, पर्दाप्रथा, नारियों में आभूषणों के प्रति ललक, बाल–विवाह, आदि रूढ़ियों का विकृत रूप व्यंग्यकारों ने प्रस्तुत किया है। जो समाज के विकास में बाधक है। जनता में जहाँ अकर्मण्यता एवं मिथ्या सन्तोष की भावना घर किये हो वहाँ अनेक समस्यायें उत्पन्न होती है। बाढ़ की समस्या आज जैसी की वैसी बनी हुई है। लेकिन नेता, शासन, सभी दावा करते है, करते कुछ नहीं। इसलिए देश में बाढ़ की समस्या जैसी की वैसी बनी हुई है।

पारिवारिक समस्या में पति–पत्नी संबंध भी आज स्वार्थ की कसौटी पर कसे जाने लगे है। समाज में स्वार्थ वृति प्रबल होती जा रही है, जिससे व्यक्ति का विश्वास, मूल्यों से उठता जा रहा है। पति–पत्नी के सात्विक संबंध भी शिथिल होते जा रहे है। परिवार में सास–बहू संबंध आज आधुनिकता के कारण टूँटते हुए दिखाई देते है। रामायण, महाभारत काल में बदलाव आया है। सास को बहू के प्रति आस्था नहीं रही। इसी कारण सास–बहू में हमेशा टकराहट दिखाई देती है। समाज में माता–पुत्र का संबंध भौतिक व्दंव्द में अप्रभावित नही रह पाता। पिता पुत्र संबंध भी बडे प्रजातांत्रिक हो गए है। परिवार में मतभेद बढने लगे हैं, सम्मिलित परिवार बिखरने लगे है। पारिवारिक आकर्षण नहीं रहा है और सामूहिक दायित्व बोध मृतप्राय हो रहा है। अधिकारी जनता के रक्षक, सहायक न होकर उसके भक्षक

विधाता बने हुए है। सरकारी कर्मचारियों में कम काम अधिक दाम' कार्य प्रणाली ने जोर पकड़ लिया है। अस्पतालों में मची अँधेरगर्दी बड़े डाक्टर से लेकर पहारेदार तक सभी कर्मचारी भ्रष्ट है, अकर्मण्य है। आज अस्पताल रूपी भूलभूलैया में रहने से तो रोगी अपने घर की शान्ति में दम तोड़ देना अच्छा समझता है। पुलिस को अपनी मनमानी करने की छूट है। जो अपराधियों को छोड देती है और निरापराधियों को पकड़कर जेल के सलाखों के पीछे डाल देती है। जनता पुलिस से डरती है, घृणा करती है, उसे दूर रहना चाहती है। लोगों का विश्वास पुलिस से उठ गया है। इस प्रकार पुलिस की अकर्मण्यता का करूण खाका व्यंग्य डॉ. कोहली जी ने खींचा है।

भारत के शिक्षा प्रणाली एवं शिक्षा के संबंधी जितने प्रयोग किये गये, प्रायः सभी असफल रहे है। शिक्षा प्रणाली का पुराना विकृत रूप आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ है। नित्य नये–नये असंख्य शिक्षा संस्थानों का खुलना, दिन–प्रतिदिन गिरता हुआ शिक्षा का स्तर, शिक्षा के क्षेत्र में भी राजनिति एवं सत्ताधारियों का अनुचित हस्तक्षेप आदि विकृतियों ने शिक्षा के रूप को कुरूप कर दिया है। व्यंग्यकार इन विद्रूपताओं को लक्ष्य बनाकर सशक्त प्रहार किये है। रेल एवं बस सेवा में भी रिश्वतखोरी ने जोर पकड लिया है। इस सेवा में दिन–प्रतिदिन किराये बढ़ाये जा रहे है। रेल सेवा में एवं बस सेवा को दिन–दहाडे लूटकर जनसामान्य का हरण किया जाता है। लोगों को लूटा जाता है, इसी सेवा में असुविधा, परेशानियाँ, दिन–बदिन बढ़ती जा रही है। सार्वजनिक सेवाओं का गठन जनता की सहायता और जनता के हित के लिए किया गया है। किंतु यहाँ भी भ्रष्टाचार, अँधेर गर्दी और धाँधली अपनी चरमसीमा तक व्याप्त है। कर्मचारी वर्ग बिल्कूल ही अकर्मण्य तथा गैर–जिम्मेदार है। अपना, काम कोई नहीं करना चाहता। यहाँ भी रिश्वत, सोर्स, एप्रोच का बोलबाला है। इसलिए व्यंग्यकार डॉ. कोहली जी ने सामाजिक संबंधों, सामाजिक समस्याओं तथा कार्यालयीन विसंगतिओं को लक्ष्य बनाकर प्रचुर मात्रा में व्यंग्य किया है। जो सोचने के लिए मजबूर कर देता है।

संदर्भ सूची

१. उधृत पाण्डे गणेश – समाजशास्त्र के सिध्दांत पृ. ५६

२. उधृत पाण्डे गणेश – समाजशास्त्र के सिध्दांत पृ. ५६

३. रियुटर : हैंडबुक ऑफ सोशियोलॉजी पृ. १५६

४. त्यागी रवीन्द्रनाथ – अतिथि कक्ष, पृ. ५९–६०

५. कोहली नरेन्द्र –जगाने का अपराध, पृ. १०४

६. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ. १२४

७. त्यागी रवीन्द्रनाथ –अतिथि कक्ष, पृ.१६

८. त्यागी रवीन्द्रनाथ – भित्ति चित्र, पृ.१५६

९. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ. ३५

१०. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ. २७४

११. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ. २५९

१२. परसाई हरिशंकर – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें पृ. ९२

१३. परसाई हरिशंकर – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें पृ. १२४–१२६

१४. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ. ४७

१५. सुटीरवाला रोशनलाल – पत्नी शरणम् गच्छामी, पृ. ३१

१६. शुक्ल श्रीलाल – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ. १०८

१७. दिनेश देवराज –काठी की हाण्डियाँ, पृ. ९०

१८. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ. ६३

१९. शुक्ल श्रीलाल –राग दरबारी, पृ. ३३

२०. प्रसाद कमला –परसाई रचनाली, भाग– दोन, पृ. ३२२

२१. कोहली नरेन्द्र – गणतं. का गणित, पृ. १६९

२२. जोशी शरद –तिलस्म, पृत्र २५

२३. कोहली नरेन्द्र – जगानेः का अपराध, पृ. ८०

२४. कोहली नरेन्द्र – प्रेम का देवता, मै और एक वरदान, पृ. २३

२५. कोहली नरेन्द्र – इश्क एक शहर का, पृ. ७७२

२६. त्यागी रवीन्द्रनाथ – भित्तिचित्र, पृ. ५४

२७. त्यागी रवीन्द्रनाथ – शोकसभा, पृ. २७

२८. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ. ३७६

२९. घोंधी लतीफ – बीमर न होने का दुःख, पृ. १२४

३०. कोहली नरेन्द्र – शम्बकू की हत्या, पृ. ६७

३१. कुमार अमरेंद्र –दूसरों के जरिये, पृ. ३२

३२. परसाई हरिशंकर –वैष्णव की किसलन, पृ. १०१

३३. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ. ६३

३४. कुमार अमरेंद्र – दूसरें के जरिये, पृ. ३२

३५. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ. ६४

३६. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ. ६२

३७. कोहली नरेन्द्र – मै, मेरी पत्नी और चमेली का फुल, पृ. ३७८

३८. उधृत अग्रवाल गिराजा शरण – श्रेष्ठ हास्य व्यंग्य रचनाएँ, पृ. १५०

३९. परसाई हरिशंकर –पगडंडियों का जमाना, पृ. ५८

४०. चतुर्वेदी बरसानेलाल – नेताओं की नुमाइश, पृ. १०४

४१. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ. ३२७

४२. त्यागी रवीन्द्रनाथ – शोकसभा, पृ. ३५

४३. चतुर्वेदी बरसानेलाल – नेताओं की नुमाइश, पृ.२७

४४. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ. २३८

४५. कोहली नरेन्द्र – समग्र व्यंग्य, पृ. १८३

४६. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ. १४

४७. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ. ५६

४८. चतुर्वेदी बरसानेलाल – नेताओं की नुमाइश, पृ. ३७

४९. त्यागी रवीन्द्रनाथ – सुंदर कली, पृ. २५६

५०. कोहली नरेन्द्र – समग्र व्यंग्य, पृ. २५६

५१. कोहली नरेन्द्र – मर्द का बच्चा, पृ. ८५७

५२. मजीठिया सुदर्शन – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ. ३४

५३. कोहली नरेन्द्र –त्रासदियाँ, पृ. ११७

५४. कोहली नरेन्द्र – समग्र व्यंग्य, पृ. ४४६

५५. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ. ५१–५२

५६. परसाई हरिशंकर – सदाचार का ताबीज, पृ. संः१३

५७. जोशी शरद – रहा किनारे बैठ, पृ. १०५

५८. कोहली नरेन्द्र – त्राहि त्राहि, पृ. ४९१

५९. त्यागी रवीन्द्रनाथ – भित्तिचित्र, पृ. ६५–६६

६०. अग्रवाल भारतभूषण – लीक अलीक, पृ. ७१

६१. चतुर्वेदी बरसानेलाल – मिस्टर चोलेलाल, पृ. १०६

६२. कोहली नरेन्द्र – त्राहि त्राहि अस्पताल, पृ. ४८८

६३. कोहली नरेन्द्र – त्राहि त्राहि अस्पताल समग्र व्यंग्य, पृ. ४८९

६४. कोहली नरेन्द्र – त्राहि त्राहि अस्पताल समग्र व्यंग्य, पृ. ३०१

६५. परसाई हरिशंकर –निठ्ठले की डायरी, पृ. २४

६६. कोहली नरेन्द्र – त्राहि त्राहि अस्पताल समग्र व्यंग्य, पृ. ४९६

६७. परसाई हरिशंकर –निठ्ठले की डायरी, पृ. २४

६८. उधृत हाथरसी काका – श्रेष्ठ हास्य व्यंग्य निबंध, पृ. १३३–१३७

६९. कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ. १२८

७०. चतुर्वेदी बरसानेलाल – महामति चाणक्य राजदूत बने, पृ. ३४

७१. परसाई हरिशंकर – निठ्ठले की डायरी, पृ. ८४

७२. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ. ८४

७३. कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ. २१

७४. चतुर्वेदी बरसानेलाल – मिस्टर चोखेलाल, पृ. २१

७५. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध पृ. २५०

७६. जोशी शरद – रहा किनारे बैठ, पृ. ५२

७७. घोंधी लतीफ –किस्सा दाढ़ी का, पृ. ११३

७८. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ. ३१

७९. परसाई हरिशंकर –सदाचार का तावीज, पृ. ७८–७९

४.0. प्रस्तावना :-

राष्ट्र की जीवंतता का बोध उसकी संस्कृति से ही प्राप्त होता है। भारतीय नागरिक अपनी संस्कृति को प्राचीनता और गौरव – गरिमा के दर्प से मंडित रहे किन्तु आचरण में अपनी संस्कृति का गौरवगान इन दो बिन्दुओं के मध्य झूलते हुए व्यक्ति को, व्यंग्यकार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने अपने दृष्टि–पथ में रखा है।

पाश्चात्य–संस्कृति के प्रति अनुराग, विदेशी वस्तुओं का लाभ, पाश्चात्य–सभ्यता के अंधानुकरण आदि बातों पर विस्तारपूर्वक विचार किया है। व्यंग्यकार ने दूसरों की वस्तु के प्रति आकर्षण आत्महीनता की मानसिकता आदि को भी लक्ष्य किया है। पाश्चात्य–सभ्यता के अंधानुकरण से, न तो हमारी मौलिकता ही सुरक्षित रही है न हम दूसरी संस्कृति के उदात्त तत्वों को आत्मसात कर पा रहे हैं। दोनों के सम्मिलन से गंगा – जमुनी संस्कृति के निर्माण के बजाय वर्ण – संकर – संस्कृति का उदय हुआ है।

भ्रष्टाचार, मानवीयता का ऱ्हास आदि के साथ हमारी संस्कृति के चिन्ह भी बिगड़ रहे हैं। इसका मुख्य कारण है पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव। हमारे सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन हो रहा है पर इसके बारे में कोई चिंतित नहीं है। कहाँ तो हमारी संस्कृति के अनुसार बड़ो का सम्मान होता था। एकत्र परिवार पद्धति थी। लेकिन आज बहुत – सी असंगत घटनाएँ इस सन्दर्भ में होती हुई दिखाई देती हैं। आज बेटा अपने जन्मदाताओं का, शिष्य अपने गुरूजनों का हमेशा अपमान करता हुआ दिखायी देता है। सास के साथ बहू का झगड़ा एक सामान्य दृश्य हो गया है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में बेटी को घर की लक्ष्मी माना जाता था लेकिन आज अलग घटनाएँ सुनने को मिलती हैं।

हमारी संस्कृति में पत्नी–पति की सेवा में अपना सौभाग्य मानती थी तथा पति–पत्नि को गृहस्वामिनी मानता था। मन मुटाव के बावजूद दोनों एक दूसरे का साथ दिया करते थे। लेकिन आज पति की सेवा तो दूर की बात रही उसका नाम नाम लेकर बुलाने में उसे गर्व का अनुभव होता है , किन्तु कई घरों में पत्नी को 'मनुष्य' का दर्जा तक नहीं दिया जाता।

संस्कृति के सन्दर्भ में गत दो दशकों में जो विसंगतियाँ पैदा हुईं उसके कई कारण हैं। धर्म का सच्चा अर्थ जानने का प्रयत्न किसी ओर से भी नहीं हुआ। विदेशी भाषा और संस्कृति से भारतीयों का मानस अत्याधिक प्रभावित होता रहा। विदेशी नागरिकता पाना आज यहाँ के सुशिक्षितों का ध्येय बन गया है। विदेशी भाषा, संस्कृति, वेशभूषा, रीति – पद्धति से आज भारत बहुत अधिक प्रभावित हो गया है। यहाँ तक कि विवाह के पश्चात बेटी विदेश जा रही है, यहाँ की सभ्यता, संस्कृति से दूर हो रही है इसका दुख आज उतना नहीं होता जितना कि इस बात से गर्व का अनुभव किया जाता है।

४.१. व्यंग्य और संस्कृति का संबंध :-

भारतीय संस्कृति अति प्राचीन एवं दुनिया को मार्गदर्शक रही है। समाज और संस्कृति का परस्पर संबंध चोली – दामन का होता है। भारत को अनेक वर्षों से विदेशी शासकों का काल तीव्र दबाव का काल रहा है। इसी के प्रतिक्रिया स्वरूप स्वतंत्रता आंदोलन के रूप में जनता द्वारा आक्रोश की धारा फूट पड़ी। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारतीय समाज और संस्कृति में भी क्रांतिकारी परिवर्तन आये। कई विरोधी धाराएँ बहने लगी। एक धारा हिंदू समाज सुधारक कों की रही है। दूसरी धारा उग्र वादियों की रही है और तीसरी धारा अध्यात्म वादियों की रही है। इन सबके संगम से गांधीवाद का रूप बना, जिसमें आगे चलकर समाजवाद तथा आधुनिकतावाद की धाराएँ जुडी। किन्तु देश के स्वतंत्र होते ही जिन ध्येय और आदर्शो ने इन धाराओं को परस्पर टकराव से रोक रखा था वे निरर्थक हो गये।

एक समय ऐसा था भारतीय सभ्यता और संस्कृति का बोलबाला था। भारत कृषि उत्पादों से परिपूर्ण वैभवशाली देश था। भारत को सोने की चिड़ीया कहा जाता था, इसके अतिरिक्त भारत कला, संगीत, उद्योग तथा विद्या के क्षेत्रों में भी अग्रणी था। किन्तु आज के सांस्कृतिक परिवेश में एक विषम स्थिति उत्पन्न हो गई है। एक ओर प्राचीन संस्कृति की अवहेलना की जा रही है, उसे ध्येय माना जा रहा है। एवं दूसरी ओर संस्कृति के कोई नये मानदण्ड या रूप बन नही पा रहे है। परिणाम यह निकल रहा है कि, नयी एवं पुरानी

सांस्कृतिक मान्यताओं का परस्पर टकराव हो रहा है। आज का समाज अपनी संस्कृति भूलकर विदेशी संस्कृति के आचार– विचार, खान–पान, रहन–सहन, आदि को अपना रहा है। इसलिये पुरानी पीढियों एवं नयी पीढियों में विरोधाभास टकराहट, विसंगतियाँ उत्पन्न हो रही है। व्यंग्य का सृजन भी उस समय होता है, जब विसंगतियाँ उत्पन्न हो रही है। व्यंग्य का सृजन भी उस समय होता है, जब विसंगतियाँ पैदा होती है। तब व्यंग्यकारों की लेखनी से व्यंग्य का वैदग्ध्यपूर्ण तीखी अभिव्यक्ति होती है। इसलिए व्यंग्य और संस्कृति का संबंध जब से संस्कृतियों में विसंगतियाँ पैदा होती रही है, तबसे व्यंग्य और संस्कृति का संबंध आता रहा है, एवं आता रहेगा। व्यंग्य का काम ही विसंगतियों को उजागर करना है।

४.२. संस्कृति का अर्थ :–

'संस्कृति' मनुष्य को मानवता की ओर प्रेरित करनेवाले आदर्शों, आचार–विचारों और कार्य अनुष्ठानों की समष्टि का नाम है। अन्य जीवन व्यापी सत्यों के समान इस शब्द का भी आज अनेक विधी से प्रयोग हो रहा है। इतिहासवेत्ता दार्शनिक, धर्मविद, समाजशास्त्रीय और साहित्यिक अपने–अपने दृष्टिकोन के अनुसार संस्कृति के स्वरूप को ग्रहण करते है। इतिहासकार के लिए किसी देश का कलात्मक और बौद्धिक विकास संस्कृति है। दार्शनिक संस्कृति को जीवन का प्रकाश और सौंदर्य मानते है। धार्मिक दृष्टि से मनुष्य के लौकिक पारलौकिक सर्वाभ्युदय के अनुकूल आचार–विचारों को संस्कृति कहा जाता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोन से संस्कृति सिखे हुए व्यवहार की वह समग्रता है, जिसमें मनुष्य का व्यक्तिमत्व पलता और पनपता है। इसी वैविध्य के अनुसार संस्कृति विषयक परिभाषाओं में पर्याप्त भेद और कहीं – कहीं विरोधाभास की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

अतः संस्कृति का निश्चित स्वरूप निरूपित करने के लिए परिभाषाओं को देखना उचित होगा। अनेक विद्वानों ने संस्कृति की भिन्न– भिन्न परिभाषाएँ दी है, जो निम्नानुसार है।

संस्कृति शब्द के सम–स–कृति ये मुख्य पूर्वविभाग हैं। पाणिनीय व्याकरण के नियमानुसार सम् उपसर्ग के आगे रहनेवाले कृति कार आदि की अवस्था में सुर का आगम

हो जाता है। फलतः समकृति और समकार आदि विभाग संस्कृति संस्कार आदि शब्दों में परिणत हो जाते है। जिसके अर्थ, शुद्धि, सफाई, संस्कार, सुधार, मानसिक विकास, सजावट, सभ्यता होते हैं। शब्दार्थ की अपेक्षा इस शब्द का भावार्थ अधिक विशद और व्यापक है, क्योंकि इसमें परिमार्जन या परिष्कार के अतिरिक्त शिष्टता एवं सौजन्य के भावों का भी समावेश हो जाता है।

४.२.१. सर मोनियर विल्यम :-

संस्कृति की परिभाषा सर मोनियर विल्यम के 'ए' संस्कृत, इंग्लिश डिक्शनरी में इस प्रकार मिलती है, ''तैयार करना, रचना या कृति संस्कार द्वारा पवित्र करना संकल्प तथा प्रयत्न द्वारा कार्य की संपन्नता करना संस्कृति है।[१]'' इस प्रकार संस्कार करने की प्रक्रिया ही संस्कृति है।

शब्दार्थ की दृष्टि से संस्कार का अर्थ संक्षेप मैं संशोधन करना, उत्तम बनाना पवित्र तथा परिष्कार करना है। संस्कार की क्रिया द्वारा उत्तम या परिकृष्त रचना या कृति संस्कृत शब्द के अर्थ का द्योतत करती है।

४.३.२. हिंदी कोशकारों ने भी शब्दों को स्पष्ट किया है। हिंदी-विश्वकोश के अनुसार ''संस्कृति उस समुच्चय का नाम है। जिसमें ज्ञान-विश्वास, कला नीति-विधी, रीति-रिवाज का समावेश रहता है, जिसमें मनुष्य समाज को सदस्य के रूप में मानता हैं।''[२]

हिन्दी-विश्वकोश में ज्ञान - विश्वास, कला, नीतिविधी, रीति-रिवाज आदि को संस्कृति माना है और मनुष्य समाज को उसका एक भाग माना हैं।

४.२.३. हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार संस्कृति की परिभाषा इस प्रकार है, ''विभिन्न शास्त्रों, दर्शन आदि में होने वाले चिंतन, साहित्य, चित्रांकन आदि कलाओं एवं परिहत साधन आदि नैतिक आदर्शों तथा व्यापारों को संस्कृति कहा जाता है।''[३]

हिंदी साहित्य में विविध शास्त्रों में होने वाले चिंतन, चित्रांकन आदि कलाओं के साधन तथा आदर्शों को संस्कृति माना है।

४.२.४. रामधारी सिंह दिनकर संस्कृति की परिभाषा रामधारी सिंह 'दिनकर' के 'संस्कृति के चार अध्याय' में इस प्रकार मिलती है, ''संस्कृति का अर्थ मनुष्य का भीतरी विकास और इसकी नैतिक उन्नति है, एक दूसरे के साथ सद्व्यवहार है और दूसरे को समझने की शक्ति है।''[४]

दिनकर ने दूसरों को समझने के साथ मनुष्य के मानसिक विकास एवं नैतिक उन्नति के साथ अच्छे व्यवहार को संस्कृति माना है।

४.२.५. राधाकृष्णन ने संस्कृति की परिभाषा इस प्रकार से स्पष्ट की है, ''संस्कृति..... विवेक बुद्धि का जीवन को भले प्रकार जान लेने का नाम है।''[५]

राधाकृष्णन ने सतसत् विवेक बुद्धि से जीवन को अच्छी प्रकार से समझ लेना ही संस्कृति माना है।

४.२.६. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, ''संस्कृति की विविध साधनाओं की सर्वोत्तम परिणति है।''[६] इस प्रकार विविध साधनाओं से संस्कृति को पूर्णता आती है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि, संस्कृति मानव समाज की आन्तरिक उपलब्धियों की सूचक है। संस्कृति शब्द व्यक्ति की मानसिक तथा बौद्धिक गति विधियों, समाज के आचार–विचार, उन्नति–अवनति, रीति–रिवाज, धार्मिक – राजनैतिक एवं सामाजिक अवस्थाओं तथा परम्पराओं का परिचायक हैं।

४.३. सांस्कृतिक चेतना :

सांस्कृतिक चेतना हमारे जीवन को परिष्कृत सम्पन्न, उदार और सृजनशील बनाने का काम करती है, सांस्कृतिक चेतना का मुख्य कार्य मानवजीवन को उपयोगी क्रियाकलाओं के धरातल से ऊपर उठाकर चेतना या बोध की उस निरूपयोगी भूमिका में प्रतिष्ठित करना है, जहाँ सार्थकता का रूचिकार एवं आल्हादकारी उपभोग ही हमारा लक्ष्य

बन जाता है। सांस्कृतिक चेतना हमारे चेतनामूलक जीवन को विस्तार देने वाली तथा व्यक्तित्व को रोचक और गौरवशाली बनाने वाली है।

सांस्कृतिक चेतना वह तत्व है, जो हमारे चेतना मूलक जीवन एवं व्यक्तित्व को सुंदर, समृद्ध और सार्थक बनाता है। व्यक्तित्व के गौरव और उसकी भव्यता का आधार, प्रेम, सहयोग, करूणा, दया, सहानुभूति, साहस, निर्भीकता, कर्मण्यता, विनयशीलता, उदारता तथा कर्म एवँ वाणी सौन्दर्य आदि गुण संस्कृति चेतना में होते है।

संस्कारशील व्यक्ति इन्हें व्यवहार में लाने की सचेत कोशिश करता है। यह सचेत प्रयत्न दो स्तरों पर चलते है। एक तरफ अमानवीय, अनैतिकता का अस्वीकार एवं तिरस्कार दूसरी ओर मानवीय नैतिकता का स्वीकार एवं संस्तुति। इस प्रकार सांस्कृतिक चेतना व्यक्ति और जीवन को निरन्तर सम्पन्न और समृद्ध बनाती है।

सांस्कृतिक चेतना के संदर्भ में व्यंग्यकार ने लिखा है, ''परम्परा से चली आती हुई संकीर्ण साम्प्रदायिक भावनाओं, धार्मिक कट्टुताओं और विषमताओं को दूर करने तथा राष्ट्र में एकात्मता की भावना फैलाने के लिए संस्कृति के ऐसे–ऐसे आदर्श चरित्रों और घटनाओं को चित्रित करना; जो वर्तमान की अनेक विषय समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर सके उसे सांस्कृतिक चेतना कहा जा सकता है।''[७]

वैसे देखा जाय तो 'संस्कृति' और 'चेतना' अलग–अलग शब्दों से 'सांस्कृतिक चेतना' शब्द बना हुआ है, संस्कृति मनुष्य के आदर्शों, आचार, विचारों, कार्यो–अनुष्ठानों और जीवन के मूलभूत सत्यों को संस्कृति के रूप में जाना जाता है। 'संस्कृति' शब्द का प्रयोग विचारक अनेक अर्थों में करते है। वस्तुतः 'संस्कृति' शब्द अपने आप में एक व्यापक अवधारणा को समाहित किया हुआ है।

४.३.१. संस्कृति के तत्व :

साधारण बोलचाल की भाषा में समूह के विश्वासों, आदर्शो, विचारों, व्यवहारों, रीति–रिवाजों आदि व्यवहार के अनेक उपकरणों तथा साधनों का संस्कृति कहा जाता है।

यहाँ यह विचारणीय है कि, आखिर संस्कृति की अन्तर्वस्तु क्या है? इस संबंध में अनेक विव्दानों ने अपने विचार प्रकट किए है।

'अलैग्जैण्डर ए. गोल्डन वाइजर' ने संस्कृति के तत्वों में निम्नलिखित तत्वों को माना है – ''हमारी प्रवृत्तियाँ, विश्वास और विचार, हमारे निर्णय और मूल्य, हमारी संस्थाएँ (राजनैतिक और कानूनी, धार्मिक और आर्थिक) हमारी नैतिक संहिताएँ और शिष्टाचार के नियम, हमारी पुस्तकें और मशीनें, हमारे विज्ञान, दर्शन और दार्शनिक ये सब और दूसरी बहुत सी चीजें तथा प्राणि स्वयं भी और अपने विविध संबंधो में भी।''[८] जिसमें समाविष्ठ है, वे संस्कृति के द्योतक है। संस्कृति इन्ही पर आधारित होती है।

अलैग्जण्डर ने संस्कृति तत्वों में प्रवृत्तियाँ, विश्वास, राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक, नैतिक संहिताएँ, ज्ञान, विज्ञान आदि विविध संबंधो को संस्कृति माना है।

ए.डब्ल्यू ग्रीन के मतानुसार संस्कृति क्या है? तो ''संस्कृति ज्ञान, व्यवहार की उन आदर्श पद्धतियों को तथा ज्ञान और व्यवहार से उत्पन्न हुए साधनों की व्यवस्था को कहते हैं, जो सामाजिक रूप से दूसरी पीढी को दी जाती है।''[९]

ग्रीनने संस्कृति को ज्ञान, व्यवहार, विकास, आदि को सामाजिक रूप से एक पीढी से दूसरी पीढी को देना संस्कृति माना। उपर्युक्त विचारों से स्पष्ट होता है कि, सभी ने अपने–अपने ढंग से संस्कृति के संबंध में विचार प्रकट किए हैं। अर्थात कहा जा सकता है कि, संस्कृति शब्द विभिन्न उपादानों से मिलकर बना हुआ है। संस्कृति के अनेक अंग या पक्ष होते हैं, जिनसे संस्कृति का निर्माण होता है।

४.४. भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ :

भारतीय संस्कृति हिंदू संस्कृति है, या यूँ कहें कि वैदिक संस्कृति है जो मूलतः सिन्धु संस्कृति है। इस पर अनेक संस्कृतियों के आघात प्रघात हुए। अनेक आघातों एवं प्रत्याघातों सहन करने के पश्चात भी भारतीय संस्कृति की अपनी विशेषताएँ ज्यों की त्यों है। इस पर अनेक संस्कृतियों का प्रभाव भी पड़ा है। इसका समन्वयक रूप उपेक्षणीय नहीं है, फिर भी मूल आत्मा तो भारतीय ही है।

भारतीय संस्कृति के ऊपर अनेक आघात हुए, फिर भी यह संस्कृति अपने मूल रूप में अवश्यमेव विद्यमान रही है। अनेक विव्दानों ने इस पर विचार व्यक्त किये है, मुख्य रूप से देखा गया तो भारतीय संस्कृति में निम्न लिखित विशेषताएँ विद्यमान हैं।

४.४.१. अमरता :

यह संस्कृति देश के उत्थान–पतन, उसकी आंतरिक उथल–पुथल, विदेशियों के प्रबल आक्रमण, विभिन्न राजनीतिक एवं पराजय क्रांतियों के मार्ग से प्रभावित रहने पर भी अपने मूलरूप में विद्यमान है। भारत देश में बाहर से अनेक जातियाँ आयी तथा सबसे इस देश के ऊपर अपना – अपना प्रभाव छोड़ा है और वे सभी जातियाँ भारत देश की संस्कृति से प्रभावित रही है। इतने आघातों के पश्चात् भी भारतीय संस्कृति अविकल रूप में तथा अपने मूल रूप में ज्यों की त्यों रही है। उसमें परिवर्तन भी आया तो वह परिवर्तन नहीं रहा, वह उसका एक अंग बन गया है। अपने मूल तत्व को न छोडना इसमें ही उसकी अमरता दृष्टि गत होती है।

४.४.२. सार्वजनिकता :

भारतीय संस्कृति में अनेक संस्कृतियों का योग होने से सबके द्वारा प्रशंसनीय है। इस संस्कृति को आसानी से ग्रहण किया जा सकता है। भारतीय संस्कृति में वैदिक कालीन संस्कृति, रामायण कालीन संस्कृति, महाभारत कालीन संस्कृति, बौद्धकालीन संस्कृति, जैन कालीन संस्कृति, मुगलकालीन संस्कृति, अंग्रेज कालीन संस्कृति आदि का योग है। भारतीय संस्कृति ने इन सभी को अपनाया है। इन सभी को अपनाने से ही वह सबके द्वारा प्रशासनीय है। इसलिए भारतीय संस्कृति को आसानी से ग्रहण किया जा सकता है।

४.४.३. सर्वांगीनता :

भारतीय संस्कृति का निर्माण करने में सभी वर्गों और आश्रमों के लोागों का योगदान रहा है। इसमें जीवन के चारों वर्गों, धर्म–अर्थ, काम और मोक्ष का सफल समन्वय है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति में आशावादिता दृष्टिगत होती है। अनेक संस्कृतियों एवं जातियों के

मिलन से भारतीय संस्कृति में जो एक विश्वसनीयता उत्पन्न हुई है, वह संसार के लिए सचमुच वरदान है। पिछले अनेक वर्षोंसे पूरा संसार भारतीय संस्कृति का प्रशंसक रहा है।

४.४.४. आध्यात्मिकताः

भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक रही है। आत्मा के द्वारा परमात्मा का आनंद प्राप्त करना अध्यात्मिकता का लक्ष्य होता है। ऐसे अध्यात्म परायण लोंगो के सामने राजा भी नतमस्तक होता था। मोक्ष की प्राप्ति हो जाने पर सांसारिक व्याधियों से मुक्ति मिल जाती है। इस संसार में पुनः आकर जीवन को भोगना नहीं पड़ता है। सम्पूर्ण जीवनभर अपनी शक्ति एवं ज्ञान का सदुपयोग करते हुए मानव मोक्ष को कैसे प्राप्त करता है, यह भारतीय सांस्कृति का आध्यात्मिक पक्ष है। क्योंकि मोक्ष मानव का अंतिम लक्ष्य है।

४.४.५. धर्मप्रधानता :

'धर्म' शब्द का अर्थ 'धृ' धातू से बना है और इसका शाब्दिक अर्थ है, वह जो किसी को धारण करे अतः प्रत्येक वस्तु, मनुष्य और समाज जिन नियमों पर आधारित कर्म करते है, उनको धर्म कहा जा सकता है। साधारणतः धर्म – पालन का अर्थ कर्तव्य पालन माना जाता है। भारत में भौतिक और माध्यमिक दोनों पक्षों का सुन्दर मेल किया गया है। इस मेल को मिलानेवाला धर्म हैं।

४.४.६. प्राचीनता :

इस संस्कृति के कई विशिष्ट एवं प्रमुख अंगो का विकास – ई.सा.से कई शताब्दी पूर्व हो गया था। दूसरे देशों में जब बर्बरता व्याप्त थी, उस समय इस देश में संस्कृति प्रखर रूप में व्याप्त थी। इराक की सबसे पुरानी जाति पर वैदिक सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव है। वैसे तो मिश्र, यूनान और बेबीलेन की सभ्यताओं को प्राचीन मानते हैं, परंतु वैदिक सभ्यता उससे भी प्राचीन है। इस प्रकार की भारतीय संस्कृति प्राचीनतम रूप में विद्यमान है।

४.४.७. सर्व व्यापकता :

भारतीय संस्कृति ने भारत में ही नहीं बल्कि कारस, चीन, साईबेरिया क्षेत्र से लावा और बोर्नियों के द्वीपों तक और प्रशांत सागरीय द्वीपों तक अपने विश्वासों, कथाओं आदि का प्रसर एवं प्रसार किया है। संस्कृति का एक दूसरे के ऊपर बहुत असर पड़ता है। परिणाम स्वरूप भारतीय संस्कृति का चीन, तिब्बत, लंका, जपान, बर्मा, नेपाल, यूरोप आदि स्थानों में प्रभाव पड़ा हुआ है।

४.४.८. त्याग :

मानव जीवन की सफलता त्याग के द्वारा हो सकती है, भोग के द्वारा नहीं। पाश्यात्य संस्कृति की तरह भोग का उपदेश न देकर योग का उपदेश भारतीय संस्कृति देती है। त्याग एक महामंत्र है। गीता में निस्वार्थ कर्म का विधान है। त्याग से ही सभी सुखी रह सकते है। इसलिए आज भी समस्त विश्व में योग साधना का प्रभाव भारतीय संस्कृति के कारण ही है।

४.४.९. तपोवन :

भारतीय संस्कृति में तपोवन का स्थान इसलिए अधिक है क्योंकि जन–कोलहल से दूर शान्त एवं रमणीय स्थान आत्मिक उन्नति के लिए आवश्यक हैं। यह भारतीय संस्कृति की अपनी विशेष विशेषता है। कोलाहल से दूर रहकर शांत एवं रमणीय स्थान में ही गौतम बुद्ध को आत्मिक उन्नति एवं ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। इसलिए तपोवन का होना जरूरी है।

४.४.१०. चिंतन की स्वतंत्रता :

चिंतन की स्वतंत्रा के कारण देश में श्रुति, स्मृति, बौद्ध–दर्शन, चार्वाक –दर्शन, अद्वैत–दर्शन, विशिष्ट–द्वैत–दर्शन शुद्ध द्वैत–दर्शन, द्वैता–दर्शन आदि कितने दर्शनों एवं मत–मतांतरो का जन्म हुआ। भारत के प्रत्येक नर–नारी को चिंतन का अधिकार प्राप्त हुआ और मनमुटाव का परित्याग कर आत्म विश्वास मे लीनता की भावना आई। स्वतंत्रता

मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार है, हमारे मनुष्य इसे भली–भाँति जानते थे। इसलिए उन्होंने भारतीय संस्कृति में इसका विधान किया है।

४.४.११. परलोक तथा पुनर्जन्म में विश्वास :

भारतीय संस्कृति की इस विशेषता के फलस्वरूप बहुत से लोगों ने गलत काम करने से अपने को रोका है। किसी भी व्यक्ति के ऊपर नियंत्रण के अभाव होने पर वह उच्छृंखल हो जाता है। इसलिए यह परलोक तथा पुनर्जन्म की भावना लोगों को उचित मार्ग की ओर उत्प्रेरित करती है। परलोक तथा पुनर्जन्म में विश्वास के फलस्वरूप बहुत लोगों ने गलत काम करने से अपने को रोका है। यह भारतीय संस्कृति की अपनी विशेषता है।

४.४.१२. आश्रम व्यवस्था :

भारतीय संस्कृति में आश्रम व्यवस्था की स्थापना की गई है। मनुष्य की आयु को १०० वर्ष मानकर उसे चार भागों में विभक्त किया गया है। पच्चीस वर्ष तक की अवस्था को ब्रम्हचर्य, पचास वर्ष तक की अवस्था 'गृहस्थ' पचहत्तर वर्ष तक की अवस्था को 'वानप्रस्थ' और ७४ से १०० तक सन्यास के अंतर्गत रखा गया है। इस प्रकार ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, और शुद्र वर्गों में सामाजिक कर्मों को विभक्त करके अपनी रूचि के अनुसार अपने व्यक्तित्व के विकास का अवसर जन–समुदाय को प्रदान किया गया है।

४.४.१३. समन्वयवादिता :

भारतीय संस्कृति सभी संस्कृतियों का समन्वय रूप प्रस्तुत करती है। भारतीय संस्कृति की पचन शक्ति बड़ी प्रबल है। इसने सबको अपने में पचा लिया है। वेद का पवित्र उद्देश्य है कि, हे मानव! तुम दूसरे मानवों के साथ मिलकर चलो। तुम्हारा भाषण, तुम्हारा मनन और चितन मिलकर ही दूसरों की भावनाओं के साथ अपनी भावनाओं को मिलाते हुए तुम संसार के अनेक पदार्थों का उपभोग करों। इस में सभी धर्म या सभी जाति का समानता से आदर किया गया है।

४.४.१४. देवपाराणता :

यहाँ के लोग अपने से अलग ईश्वर की सत्ता में विश्वास करते रहे है। धर्म का सच्चा रूप ईश्वर को किसी रूप में भी मानने को तयार है। भारतीय धारणा के अनुसार ब्रम्ह (सर्व देवमयम) सर्वोच्च सत्य है। जिस ब्रम्हा से मनुष्य उत्पन्न हुआ है उसी में उसे लय होना है। भारतीय महामानवों ने इसी सत्य को और 'वसुदेव कुटुम्बकम्' के रूप में स्वीकार किया है; और 'वसुदेव कुटुम्बकम्' की यह धारणा इसी देव परायणता के बलपर पनपी और प्रबल हुई है।

४.४.१५. सहिष्णुता :

इसी गुण के कारण यह संस्कृति अब तक जीवित है। ऋगवेद में एक सद् विप्रा बहुधा 'वदान्ति' का वर्णन किया गया है। गीता में श्री कृष्ण ने भी इस पर जोर दिया है। जैन–धर्म तथा बौद्ध धर्म भी इस सिद्धान्त को मानते है। सम्राट अशोक अपने 'द्वादश शिला–अभिलेख' में इसे सुगम और सुन्दर रूप में लोंगों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। भारत के ही नहीं बल्कि विदेश के भी विवादग्रस्त लोग भारत में शरण लेते रहें है।

इस प्रकार भारतीय संस्कृति अनेक विशेषताओं से युक्त है। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीय संस्कृति के मूल में 'वेद', उपनिषद है और वेद के 'शब्द' विश्व के प्रथम शब्द है। भारतीय संस्कृति स्वयं में सभी संस्कृतियों से अपूर्व है। इसलिए विश्व में प्रभावित अवश्य रहीं है।

इससे यह सिद्ध होता है की भारतीय संस्कृति अन्य संस्कृतियों पर हावी रही है। यह सही है कि अन्य संस्कृति का इस पर प्रभाव पड़ा है, परंतु उनका प्रभाव इस प्रकार का नहीं रहा जिससे भारतीय संस्कृति का रूप पूर्णतः बदल जाय या विकृत हो जाय। इसी को यह कहे कि भारतीय संस्कृति की पाचन–शक्ति अत्याधिक बलवती रही है। जहाँ अन्य संस्कृतियाँ आकर और प्रभाव डालकर भी उसी में समाहित हो गई है। यही भारतीय संस्कृति का मूल रहा है।

४.५. हिंन्दी साहित्य में व्यंग सांस्कृतिक चेतना :

भारत वर्ष अपनी महान सांस्कृतिक परंपरा के लिए विश्व में जाना जाता है। लेकिन विज्ञान युग में विभिन्न माध्यमों द्वारा आक्रमण हो रहा है। इसके कारण संसार में आदर्शवत् मानी जानेवाली भारतीय संस्कृति धीरे–धीरे विसंगत होती जा रही है। इसे देखते हुए हिन्दी व्यंग्य साहित्य में सभी प्रकार की समकालीन विसंगतियों को अपनी लेखनीसे चित्रित किया है। भिन्न–भिन्न देशों के लोग आपस में मिल जुलकर विचार, वस्तु, भाषा आदि का अदान–प्रदान करते है। इसमें सांस्कृतिक लेन–देन भी होती है। इस लेन–देन का परिणाम भारतीय संस्कृतियों पर भी होता जा रहा है। पाश्चात्यों के अनुकरण के कारण हमारी संस्कृति में बहुत परिर्वतन हुआ है।

भारतीय संस्कृति की स्तुति प्रशंसा अनेक विद्वान करते है। लेकिन हम अपनी संस्कृति को बिगाडते जा रहे है। यहाँ के संस्कृति में रहन–सहन, रीति–रिवाज, विदेशी नकल, परदेशी बोली, नारी का धर्म, फिल्मी अनुकरण, देश की दुर्दशा, यंत्रयुग की संस्कृति, काफी हाऊस, रेस्टोरंट, क्लब, बार आदि में घुमनेवाली नई पीढी की संस्कृति, फैशन आदि सभी क्षेत्रों में परिवर्तन होने लगा है। यह परिवर्तन संस्कृति के कारण है। भारतीय संस्कृति पर पाश्चिमात्य संस्कृति का अनेक माध्यमों के द्वारा आक्रमण हो रहा है, इसके कारण आदर्शवत मानी जानेवाली भारतीय संस्कृति धीरे–धीरे विसंगत होती जा रही है। इसी को निबंधकारो ने अपनी–अपनी दृष्टियों से देखा है, परखा है। अतःकतिपय विसंगतियों को उजागर किया है।

पाश्चिमात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण तो हमारी संस्कृति ऱ्हास की ओर बढती जा रही है। इसके साथ–साथ अन्य भी कुछ कारण है जिससे भारतीय संस्कृति ऱ्हासोन्मुख हो रही है। आज–कल की परिस्थितियाँ, परिवेश, बदलती मानसिकता इस प्रकार की कुछ बातें भी व्यंगकारों के ऱ्हास के लिए परिणामकारक दिखती है। इन सभी बातों पर व्यंग्यकार की दृष्टि गयी है और उन्होंने अपनी व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से इन बातों पर कटु प्रहार किये है। इन बातों पर कटु प्रहार करना, उनपर व्यंग्य करना या उन्हें पाठकों के सामने

लाना इसके पीछे इन साहित्यकार का एक मात्र उद्देश्य है कि, वे न्हासोन्मुख हो रही हमारी संस्कृति को बचाना चाहते है। व्यंग्यकार का यह प्रयत्न सांस्कृतिक चेतना जगाने का प्रयत्न है। व्यंगकार के द्वारा किये गये इस प्रयत्न को निम्न दृष्टि से देखा गया है।

४.५.१. पाश्चिमात्य संस्कृति का प्रभाव :

विदेशियों के आगमन के साथ–साथ विदेशी संस्कृति देश में आ गयी। हम भारतीय लोग अपना सब कुछ भूलते जा रहे है और उनका अनुकरण करते रहे है। भारतीयों की ओर से पाश्चात्यों का किया जानेवाला अनुकरण अंधानुकरण है – पेहराव, वेशभूषा, खान–पान, तीज त्योहार, फैशन, आचार–विचार आजादी के पश्चात विराट–विश्व के साथ भारत के संबंधो ने भारतीय नागरिकों के लिए विदेश–भ्रमण से अधिक अवसर प्रदान की। मंत्री, प्रतिनिधि मण्डल, खिलाड़ी सांस्कृतिक आदान–प्रदान और उच्चाधिकारियों के प्रशिक्षण–भ्रमण्य, शासकीय दौरों द्वारा भारतीयों को प्रवास के अधिक अवसर मिले। अपने दायरों से बाहर निकलकर उन्मुक्त आकाश तले भारतीय व्यक्ति ने पाश्चात्य जगत् की विलासितापूर्ण तड़क–भड़क को देखा तो उसने उसे अपनी किस सीमा तक ग्रहण किया, वह तो नहीं कहा जा सकता, किंतु ढेर सारी बुराइयों से समाज और राष्ट्र भर गया है। तीर्थ यात्रा से लौटनेवाले व्यक्ति का स्वागत मध्य कालीन धर्म धारणा वाले समाज के द्वारा जैसे किया जाता था, वैसा ही स्वागत आज विदेश से लौटनेवाले व्यक्ति का किया जाने लगा है। आज के भारतीयों की यह मानसिकता है।

इसका परिणाम यह हुआ की गांधीजी ने विदेशी – वस्तुओं के बहिष्कार द्वारा भारतीयता के प्रति की जो भावना जगाई थी, वह समाप्त हो गई। 'मेड इन इण्डिया' वस्तुओं का पिछड़ेपन का प्रतीक माना जाने लगा। इसके बारें में डॉ. नरेंन्द्र कोहलीजीं ने 'अमेरिकन जांघिया' नामक रचना के माथुर साहब अपने जांघिए के प्रदर्शन के लिए नंगे तक होने में संकोच नहीं करते, इस पर करारी चोट की है इस बारें में व्यंग्य करते हुऐ व्यंग्यकार लिखते है, ''वह लंगूर की तरह लाल जांघिए का प्रदर्शन करते फिरते है – उन्होंने अपने लाल जांघिऐ को बड़े प्यास से सहलाया और कहा हमारी एम्बैसी के मिस्टर

किथकिन अमरीका लौट रहे थे। उन्होंने अपनी चीजों की निलामी की उसी में से लिया।''[१०] इस प्रकार आज प्रदर्शन करने हेतु आदमी कोई भी तरिका इस्तेमाल कर सकता है। इस बात पर व्यंग्य किया है।

पेहराव के साथ खानपान आदि दैनिक व्यवहार की वस्तुओं में भी विदेशी–वस्तुओं के पागलपन का दौर इस पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है। वे लिखते है ''गेहूँ है तो अमरीका से रेडिमेड चला आ रहा है। आदत नहीं पड़ गई रेडिमेड चीजों की तो और क्या? भिखमंगे कहीं के।''[११] इस प्रकार आज कल सभी रेडिमेड वस्तुएँ खरिदने में विश्वास रखते है।

पागलपन की सीमा तक पहुँचे हुए इस घिनोंने रूप को व्यंग्यकारों ने दिखाया है। इम्पोर्टेड होने के कारण दूसरे की उतरन, वह भी जाँघिया तक पहनने से हम नहीं हिचकिचाते और इससे हम अपनी वेशभूषा को भूलते जा रहे है।

हमारी मानसिकता गुलामी की बनायी गयी है और हमने इसे त्याग भी नहीं है इस मानसिकता पर भी व्यंग्य करते हुए व्यंग्यकार ने लिखा है, ''हिंदी का सबसे अच्छा शब्दकोश भी एक विदेशी कामिल बुल्के ने बनाया है।''[१२] इस प्रकार गुलामी की मानसिकता और विदेशी आकर्षण के बारें में व्यंग्य किया है। जिसमें पाश्चिमात्य संस्कृति पर व्यंग्य द्वारा क्षोभ प्रकट किया है। हमारी परम्परागत वेशभूषा वातावरण के अनुसार बनायी गयी है इसमें हमारी संस्कृति झलकती है परंतु पाश्चात्य अंधानुकरण से हम इसे भी भूल रहे है। ऊपर से खादी पहनते और नीचे टेरीलीन की लाल रंग की चड्डी इस पर व्यंग्यकार ने 'गरम हवा और भैया' में किया हुआ व्यंग्य अत्यंत मार्मिक है। मैने पूछा; ''मित्र, यह तो विशुद्ध विसंगति है। खादी के कपडों के नीचे टेरीलीन की चड्डी ! मैं एक भारतीय मर्द हूँ। मुझे संस्कृति प्यारी है। यदि तुम्हारे साथ रिक्षा में बैठूंगा तो लोग मेरी संस्कृति और सभ्यता पर कीचड़ उछालेंगे।''

उसने कहा – ''गरमी के दिनों हर समझदार आदमी संस्कृति भूल कर ठंडी बीयर पीने लगता है, मेरे साथ चलोंगे तो मजे में रहोंगे।''

मैंने कहा – ''मैं एक लेखक के साथ –साथ मास्टर भी हूँ और देश के तमाम मास्टरों ने ही तो संस्कृति को जीवित रखने का ठेका ले रखा है।''[१३]

आज की नयी पीढि एवं आदर्शवत् तत्वों को मानने वाले लोगों की टकराहट पर घोंघीजी ने किया हुआ व्यंग्य मार्मिक है।

भारतीय पुरूष ने देशी संस्कृति के साथ कैसा बर्ताव किया है, पाश्चात्यों का अनुकरण कैसा किया है इस पर व्यंग्यकार ने 'पाथेय' में लिखा है कि '' पाश्चात्य कपडे पहनता है, पश्चिमी देशों के समान अर्थ के पीछें अपना दीन–इमान खो बैठा है। इस देश का पुरूष क्या है? कूपमंडूक ! अपनी पत्नी और परिवार के हितों के खूंटे से बँधा रहट का बैल! स्वार्थी ! नीच! देश को लूटकर अपने परिवार का पेट भरनेवाला। न उदार दृष्टि न उन्मुक्त चिंतन पुरूष क्या सोचेगा देश के लिए।''[१४] भारतीय पुरूष अपनी संस्कृति के साथ त्याज्य बर्ताव करता है एवं पाश्चिमात्य संस्कृति को आदर्शवत मानता है, जो देश हित के लिए कुछ भी नहीं कर सकता इस स्थिति पर व्यंग्य किया है।

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण भारतीय संस्कृति कैसे बिगड़ती जा रही है, इसे व्यंग्यकार ने 'पहिलौ सुख जाके भले पड़ोसी' में व्यक्त किया – ''घरों मे शौचत्याग करने वालों को सुरमय और सुसंस्कृत नागरिक माना जाले लगा। माता – पिता की शादी में औलाद जाने लगी। बड़े –बड़े रईस स्वयं शेव बनाने और जूतों पर पॉलीश करने लगे। पहले गुरू शिष्यों को पाठ पढाते आज छात्र अध्यापक को सबक सिखाता है। पहले वर – पक्ष के गुण बखाने जाते थे और कन्या किसी के गले में फंदा 'जयमाला' डाल देती थी। आज कन्या पक्ष के गुण गाये जाते है और बर किसी की गर्दन पर हाथ रख देता है।''[१५] इस प्रकार आज के लोगों की मानसिकता पर विचार किया है।

पराधीनता के पश्चात हम स्वाधीन हुए। स्वाधीनता संग्राम के दौरान हमने स्वस्थ और युगानुरूप आदर्श समाज का चित्र के फलक पर बनाया था। आजादी के पश्चात् उस पर कुंठा की काली स्याही गिर गयी। नीतिहीन राजनीति और न्यायहीन न्यायव्यवस्था ने समाज में पाखण्ड, छल, स्वार्थ और नैतिकता रूपी मूल्यों को उगाया है। आजादी के

पश्चात का समाज उच्छृंखल और खोखला हो गया है। सामान्य मध्यवर्गीय मनुष्य के लिए सम्मापूर्ण जीवन सपना बन गया है।

पाश्चात्य की सत्ता के साथ–साथ पश्चिम का दर्शन भी हमारे यहाँ के शिक्षितों के ऊपर हावी हो गया है। जैसे कार्ल मार्क्स, फ्रायड, डी.एच. लॉरेन्स, और फ्रेजर के विचारों ने शिक्षित युवा पीढी का वैचारिक मानस कब्जे मे कर लिया है। स्वतंत्रता का अर्थ अराजकता – उच्छृंखलता बन गया है। वह किसी प्रकार के बंधन में (कमिटमेंट) समर्पित होना नहीं चाहता। अपने यहाँ के ज्ञान को वह तुच्छ हीन समझता है। इस संदर्भ में यह बात बेबाक सिद्ध होती है – ''उनको अपने देश और समाज के प्रति गहरी विरक्ति की भावना किसी प्रकार के दायित्व से पूरी मुक्ति की कामना आत्मरति, भोगवृति में गहरी आसक्ति एक प्रकार से व्यापक वर्ग खाली यानी खालिस (शुद्ध) जीने की माँग करता है वह किसी सामाजिक, राष्ट्रीय या मानसिक मूल्य दायित्व के चक्कर में नहीं पड़ना चाहता।''[१६] इस प्रकार देश प्रेम कम होता हुआ नजर आ रहा है।

पाश्चिमात्य संस्कृति के कारण भारत में स्वतंत्रता का अर्थ फ्री सेक्स किया गया है। जिसके कारण स्त्रिया भोग का साधन मात्र रह गयी है। उनको भी भोग का अधिकार मिल गया है। अवैध यौन संबंध इसकी परिणति है। व्यंग्यकार अपनी रचना में इस पर प्रहार करते हुए बच्चे के मुँह से कहलवाते है कि – ''मम्मी तुम अपने बॉयफ्रेंड से डैडी की गर्लफ्रेंड को क्यों नहीं पिटवाती।''[१७] इस प्रकार पति–पत्नि के रिश्ते में तीसरे ने स्थान पा लिया है।

आज भारतीय विदेश से बहुत अधिक प्रभावित है इस बात को व्यंग्यकार प्रकार व्यक्त करते है – ''क्विट इंडिया को बड़ी तड़प है, आज हिंदुस्तानियों में, तमाम डाक्टर, इंजिनियर, गणितज्ञ, अर्थशास्त्री, रसायनशास्त्री, भौतिकशास्त्री आदि क्विट इंडिया किये चले जा रहे है।''[१८] इस प्रकार सभी अपने कामों से भटक रहे है।

क्विट इंडिया यह ब्रिटिश शासन को यहाँ से भगाने के लिये प्रयुक्त शब्द था किंतु विसंगति देखिये कि भारतीय ही, विशेषकर, सुशिक्षित भारतीय भारत छोड़ विदेश जा बसने के लिये आतुर है।

अपने देश की संस्कृति पर विदेशी संस्कृति का प्रभाव बढता जा रहा है। इससे चतुर्वेदीजी के मन को बड़ी वेदना होती है। अपनी चिंता को वे इस तरह व्यक्त करते है – ''इधर से संस्कृति जाती है और उधर से आधुनिक तकनीक आती है। दिक्कत है कि संस्कृति कही जाते गाते गाते चल ही न बसे। ''[१९] इस प्रकार आधुनिकता के कारण संस्कृति का टिकना संदेहास्पद है।

पाश्चिमात्य संस्कृतिका प्रभाव इतना दिखाई देता है कि, भारत के स्वतंत्र होने के साठ वर्ष पश्चात भी विदेश से वापस लौटकर आए भारतीय स्वयं को न जाने क्या समझने लगते है। विदेश – से लौटकर वहाँ की तरीकों के पुल बाँधना तथा भारतीय वस्तुओं, संस्कृति को हेय दृष्टि से देखना विदेश से लौटे भारतीयों की सभ्यता बन गई हैं। विदेशी भाषा और विदेशी संस्कृति ने भारतीयों में मानसिक दासता कूट–कूट कर भर दिया है। विदेशियों ने सहायता दे–देकर देश को इतना असहाय बना दिया है कि, उनकी अनुचित माँगों, अभ्रद एवं अन्यायपूर्ण नीतियों को चुपचाप अनदेखा करना पड़ता है। 'चावल से हीरे तक' में इर पर कटु आक्षेप करते हुए कहते है, ''वैसे तो चौकीदार वर्दी पहनकर, बंदूक लेकर अकडा खड़ा रहता है, पर अमरिका और अंग्रेज चोरी करने आतें है, तो वह पान खाने च३ला जाता है। व्यंग्यकार कटाक्ष करते हुए कहते है कि वैसे तो हमारा ईमान और आत्मसम्मान विदेशों ने खरीद लिया है उन्हे चोरी करने की क्या आवश्यकता है? तो होम डिलीवरी ही कर दी जायगी।''[२०] इस प्रकार अपने गौरव को वे भूले है।

आज पाश्चिमात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण तो हमारी संस्कृति चरमरा रही है। पाश्चिमात्य संस्कृतिका इतना प्रभाव दिखाई दे रहा है। इससे भारतीय कला, संगीत, नयी एवं पुरानी सांस्कृतिक मान्यताओं में परस्पर टकराव हो रहा है।

४.५.२. चलचित्र (फिल्म) का प्रभाव :

संस्कृति को बनने और बिगड़ने में चलचित्र (फिल्म) का प्रभाव बहुत बड़ा है। संस्कृति पर प्रभाव डालनेवाले हिस्सों में ये महत्व का हिस्सा है। इससे संस्कृति बनने की अपेक्षा अधिक बिगड़ती जा रही है।

वर्तमान भारतीय संस्कृति का एक सशक्त माध्यम फिल्मों को माना जाता है, किन्तु सच्चाई यह है कि, आज के चलचित्र, अपराध मारधाड, सैक्स, वासनापूर्ति के प्रदर्शन मात्र बन गये है। विदेशी थीम को लेकर उसका भारतीयकरण करके उसे विकृत रूप में प्रस्तुत किया जाता है। जिसका भारतीय जनता पर बहुत अधिक कुप्रभाव हो रहा है।

जिस तरह फिल्मों मे भारतीय लड़की खेतों में, पहाडों पर, शहर और गाँव की गलियों में, सड़को पर किसीं युवक के पीछे दौड़कर लुका –छिपी का खेल खेलती है, वैसा यथार्थ जिन्दगी में कभी संभव नही होता। कच्ची उमर की मासूम किशोरियाँ अपरिपक्व मस्तिष्क होने से गुमराह हो जाती है। चाहे गँवार ही क्यों न हो परंतु आज की फैशन में सज्जित फिल्मी हिरोईन का प्रभाव उनपर पड़ता है और वे अंधानुकरण करने लगती है। युवतियों की हेयर स्टाइल आये दिन बदलती है। साड़ी से –सलवार–कुर्ता, सलवार–कुर्ते से जीन्स पँट –शर्ट। कभी मोटी लंबी बाँहो वाला फ्रॉक तो कभी बिना बाहों वाला हिरोईन के हिसाब से ड्रेस पहनने की स्टाईल में प्रतिदिन परिवर्तन दिखाई देता है। इस प्रकार सिनेमा के कारण हो रहे सांस्कृतिक विघटन पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है।

आज के चलचित्रों पर बड़े चातुर्यपूर्ण ढंग से व्यंग्यकार ने ‘आपबीती’ में व्यंग्य किया है, ‘‘खुशनसीब है जो पिक्चरों में प्रेम करते है। प्रेम क्या होता है, जिंदगी का मजा लेते है। घूमते – फिरते है, गाते–बजाते है, पार्टियाँ एटैण्ड करते है। सारा मुहल्ला, जात– बिरादारी और रिश्तेदार उनका विरोध करते है। मारधाड होती है। प्रेमी अपनी प्रेमिका के लिए लड़ता है, मारता है मार खाता है, घर में किसी से प्रेम किया तो क्या किया यहाँ तो किसी को आँख भर देखों कि माँ–बाप कहेंगे अच्छा है, शादी कर दो।’’[२१] इस प्रकार कल्पना और वास्तव दोनों में अंतर आता है।

’ग्यारहवें राजकुमार का चरित’ में सीधे – सपाट शब्दों में व्यंग्य करते है – ’’सिनेमा के कारण ही देश के लड़के–लड़कियाँ आजकल दस वर्ष की ही अवस्था में यौवन का अनुभवन करने लगते है और मृत्यु पर्यंत करने रहते है। देश के यौवन की वृद्धि में सिनेमा ने जो सहयोग दिया है उसका अनुमान ही नहीं लगाया जा सकता।’’[२२] सिनेमा

संस्कृति के कारण भारतीय संस्कृति टूट रही है, जो भारतीय संस्कृति की विशेषता के विरोधाभाषी है, इसपर व्यंग्य किया गया है।

व्यंग्यकार ने एक ही थीम फिल्मों पर व्यंग्य किया है। जिनका आरम्भ, मध्यांतर और अंत सब कुछ का पहले से ही पता लग जाता है, सिनेमा को लेकर व्यंग्यकार ने की हुई छींटाकशी इस प्रकार है, – ''ऐसी उबाऊ फिल्मों में न कोई कथा–प्रवाह होता है, न रोचकता न उत्कण्ठा। नाच – गानो से भरपूर घिसी–पिटी कहानी पर आधारित फिल्मों का कोई सिर–पैर नहीं होता। जो न मनोरंजन करती है, न आदर्श प्रस्तुत करती है।''[२३] इसी फिल्मों को लेकर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है।

फिल्मों की फैशन के अनुकूल आज युवतियों की हेयर स्टाईल में प्रतिदिन परिवर्तन दिखाई देता है। परीक्षा का समय नजदिक है और बातें फिल्मों की हो रही है, इस बात को व्यंग्यकार ने व्यंग्य करते है जैसे, ''लड़कियाँ बड़ी –बड़ी बालियाँ और लम्बे लहके हुएँ इयररिंग पहनती है। मैंने उनसे बाते की तो वे बोली–बाबू आजकल यही फैशन है बड़ी बालियों का या लंबे इयरिंगो का।''[२४] इस प्रकार फिल्मों का अंधानुकरण युवा पीढि द्वारा होता है।

फिल्म में व्यवसायिकता आ जाने से निर्माता इस सोच के शिकार हो गए हैं उसमें ज्यादा बिकने वाले माल–सेक्स और हिंसा भरी हो। शहरों, कस्बों और चौराहें पर लगे फिल्मों के विज्ञापन सभी का ध्यान दूर से खींच लेते है। इस पर व्यंग्यकार व्यंग्य करते है – ''निर्माता उस उँची औरत को सूटिंग के लिए भिखारिन बनाने आदेश दे रहा था, तो इधर नेता उस भिखारिन को पोस्टर के लिए उँची औरत बनाने के आदेश दे रहा था।''[२५] आज हर व्यक्ति अपनी दृष्टि से दुनिया देखने का काम करता है। दर्शनीय चित्रों को लेकर व्यंग्यकार ने व्यंग्य कसा है, ''फिल्म अभिनेता – अभिनेत्रियों को छोड़कर और लोग सुंदर चेहरा लेकर पैदा होते है।''[२६]

आज की स्थितिसे व्यथित होकर लेखक दिग्दर्शक नायक और निर्माता पर व्यंग्य करते हुए लिखते है – ''किसी के पास धन की कितनी तगडी पूँजी हो वह सफल फिल्म नहीं बना सकता जब तक उनकी गाँठ में मूर्खता की तगडी पूँजी न हो।''[२७]

फिल्म में टू–इन –वन कोई बड़ी चीज नहीं है। यहाँ तो कोर–इन जीरो भी होते है – जिसमें लेखक, दिग्दर्शक, नायक और निर्माता मिलकर वही कथानक, कही संवादो को लेकर फिल्म बनाते है, अधिकांश फिल्म बनाते है, अधिकांश फिल्म में यही सब कुछ होता है। इन स्थितियों पर व्यंग्यकार ने व्यथित होकर अपनी बात कही है।

'भारत के अज्ञात वीर' में फिल्मों की पुलिस पर व्यंग्य की छींटाकशी की है – हिंदी फिल्मों में जो पुलिस दिखाई जाती है, आदर्श चरित्रों का यथार्थ रूप क्या होता है। इसी पर पूरे व्यंग्य 'कर्तव्यनिष्ठा' में उसका मुकाबला किसी देश की पुलिस नहीं कर सकती। फिल्म में यदि हीरो पुलिस इन्सपेक्टर हुआ तो उसे अपने कर्तव्य पर कैसे मर मिटना चाहिए इस पर मासूम सी दिखनेवाली नायिका भी हिरो की कर्तव्यनिष्ठा से प्रभावित होकर उसे अपला तन–मन– दे बैठती है।

व्यंगकार अपनी व्यंग से कभी कोई और वह फिल्म फ्लॉप हो जाती है। ऐसी यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए मृदु चुटकिया भरी है, जैसे ''इधर डिप्टी डायरेक्टर रामकरण जैन की पत्नी ने अपने पति से झुककर कहा हमें तो ये खेल सायको जैसे लगे।''

''नहीं सायको जैसा मजाकिया खेल है। भाई खून–खच्चर हो तो हमें बता देना। हम बाहर जाकर बैठ जायेंगे। वह बोली और फिर पास बैठी गुप्ता जी की पत्नी को बताने लगी कि सायको के बाद उन्हें नींद नहीं आई थी पूरी रात।''[२८]

भारतीय फिल्मों के पर्दे पर दुनिया में सबसे औरत को देखा जा सकता है। नारी जीवन और स्वभाव का अस्वाभाविक और अतिरंजीत चित्रण इसमें मिलता है। वर्तमान में सास है तो साक्षात रणचंडी और बहु है तो नितांत गऊ और चुपचाप आँसू बहाने वाली। सौतेली माँ खलनायिका है तो दूनिया की बुराइयों की जड़ जिसमें भलापन कहीं भी शेष नहीं है लेकिन अंत में वहीं औरते एकदम नाटकीय तरीके से बदल कर वह भली औरत बन

जाती है। फिल्मी नारी का यह रूप व्यंग्यकारो की नजर से कैसे बच सकता है? हिरोईन से लेकर भिखारीन तक के विविध रूपों की तरफ व्यंग्यकार ने पैनी दृष्टि से देखा और नकलीपन पर व्यंग्य किया गया है।

वर्तमान संस्कृत के प्रतीक चल–चित्रों में कितना अतिरंजित रूप दिखलाया जाता है। कितना अश्लील चित्रण होता है। कथानक में यथार्थता का अभाव, चरित्र – चित्रण में बेसिर पैर की बाते तथा प्रस्तुतीकरण में व्यावसायिक दृष्टि आज की फिल्मों में आम बातें है जिनका बुरा प्रभाव मनोरंजन के नाम से युवा पीढी पर पड़ता है। इसके कारण संस्कृति बनने की अपेक्षा बिगड़ती ही जा रही है। व्यंगकार का इसपर किया हुआ व्यंग्य मार्मिक एवं सार्थक है।

४.५.३. दूरदर्शन का प्रभाव :

दूरदर्शन समाज को प्रभावित करने वाले सबसे प्रभावी माध्यम के रूप में आज अपनी भूमिका निभा रहा है। दूरदर्शन का प्रमुख रूप से कार्य मनोरंजन करना है, परंतु आज इस छोटे परदे पर दिखाए जानेवाले कार्यक्रम का तथा विज्ञापनों का समाज पर कुप्रभाव दिखायी देता है। भविष्य की भूमिका के बारे में तो कल्पना भी नहीं की जा सकती है। व्यंग्यकार डॉ. नरेंन्द्र कोहली ने सबसे अधिक व्यंग्य इस क्षेत्र में प्रसारित किये जाने वाले विज्ञापनों पर किया है। एक ही चीज का विज्ञापन अलग–अलग ढंग से इतना किया जाता है कि, सामान्य नारी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहती। सुंदर वह स्त्री मानी जाती है, जो अत्याधुनिक लिबास में लिपटी या 'खुली' विज्ञापित वस्तुओं का स्नो, पावडर, क्रीम, साबुन, लिपिस्टिक, हेयर ऑयल वगैरे का अधिक से अधिक प्रयोग करे, इसपर व्यंग्य करते हुए व्यंग्यकार कहते है, ''हम तो उसे ही सुंदर कह देते है जो चेहरे पर पाऊडर ठीक से मलना जानती है। स्नो मली चमडियों की इस आधुनिक जगमगाहटने हमें चौधिया रखा है। उन दिन दुकान पर देखा कि लिपिस्टिक कितने रंगो में मिलने लगी है। देखा और नारी जाति को सराहा जो इन सब शीशियों को होंठो पर रगड़ती है। गजब करती है। मेरे धन्य भाग कि मैं स्त्री नहीं हूँ।''[२१] इस प्रकार विज्ञापनों का असर लोगों पर पडता है।

विविध विज्ञापनों को देखते हुए इनकी विसंगतीयों पर व्यंग्यकार व्यंग्य करते हुए कहते है – ''विज्ञापन साबुनों का इस्तेमाल यदि हम करें तों हमारी त्वचा बिल्कुल फिल्मी हिरोईन की त्वचा जैसी सुकोमल बन जाती है। विज्ञापन में खुद फिल्मी हिरोईन अपनी मधुर मुस्कुराहट के साथ बात की ताइत करती हुई दिखायी देती है। साबुनों के विज्ञापन देखने से पहले अज्ञानवश हम यह समझ बैठे होते है कि, फिल्मी हिरोईनो की त्वचा का राज उनके उँचे रहन–रहन और खान–पान में समाया हुआ है। किंतु अब हमें सही–सही ज्ञान हो जाता है भले ही हम झोपड़ीयों मे रहते, रूखा–सुखा खाते हो क्रीम के कभी दर्शन न किये हो, हमारी त्वचा पर क्रीम – ही क्रीम चढ जाए यदि हम विज्ञापित साबुनों का इस्तेमाल करें।''[३०] कभी–कभी विज्ञापनों की इस प्रभावशीलता को देखते है तो लगता है कि, विज्ञापन न होते तो सारा बाजार ही सूना–सूना लगता न ही नारी इतनी आज के बच्चे इतने ज्यादा – चतुर होते।

कुछ विज्ञापन तो ऐसे है जिन्हें देखने के लिए बच्चे टी.वी. के सामने बैठते है। सुंदर, मोटे– मोटे एवं स्वस्थ बच्चे, देखने की आदत आँखो को हो गयी है। इसकी ओर व्यंग्यकार व्यंग्यात्मक टिप्पणी करते है – ''इक्कीसवी सदीं में प्रोटीन युक्त आहार खा–खाकर मुटलाए बच्चे तथा साबुनों के विज्ञापन में इतराती नारियों को टी.वी. पर देख–देखकर हमारी आँखो का जो डाइजेशन बिगड़ जाता है, उसके लिए जरूरी है कि बीच–बीच में बाढ और सूखे से ग्रस्त कुछ चिपके हुए पेट और धँसी हुई आँखो वाले – चेहरे भी टी.वी. पर दिखाए जाएँ।''[३१] इस प्रकार समाज की दो स्थितियाँ यहाँ स्पष्ट करने को कहा है।

आज समाज को प्रभावित करने वाले सबसे प्रभावी माध्यम के रूप में दूरदर्शन को अपनी भूमिका निभानी है। लेकिन इस छोटे परदे पर दिखाए जानेवाले कार्यक्रम तथा विज्ञापनों का कुप्रभाव समाज पर अधिक होने लगा है। इससे भारतीय संस्कृति बनने की जगह पर बिगड़ती जा रही है। संस्कृति को सुधारने की जगह पर दूरदर्शन का उसके बिगाड़ने में बड़ा योगदान दिखाई देता है।

४.५.४. फैशन प्रियता :

फैशन प्रियता भी संस्कृति को बनाने बिगड़नेवाले घटकों में से एक है। इसके कारण भी संस्कृति बनने की अपेक्षा बिगड़ती जा रही है। आज की फैशन परस्ता में और आधुनिक बनने की होड में भद्दा प्रदर्शन मात्र दिखाई देता है। नारियों में आधुनिक होने की जो धारणा मन में बनी रहती है। उससे तो दिखायी देता है कि, वे फैशन नहीं स्वयं पर अत्याचार कर रही है। उनकी इन गलत धारणाओं तथा व्यवहारों से कभी–कभी तो उन पर तरस आता है। सुंदर दिखने के लिए दुबला–पतला–छरहारा होना अनिवार्य मानकर वे न ढंग से खा सकती है न खुलकर कोई क्रिया कर सकती है। आधुनिक और फैशनेबल होने के नामपर स्त्रियाँ अपना अच्छा–खासा रूप बिगाड़ लेती है। उनकी दृष्टि में बाल कटवाना आधुनिक होता है। तभी वह कहती है– मैने अपने बाल कटवा दिये है। लुंगी और बेलबॉटम पहनती हूँ दूपट्टे को एकदम छोड दिया है। आप मुझे पिछडी हुई कैसे कह सकते है।''[३२] इस प्रकार फैशन के नाम पर आज की नारी भारतीय संस्कृति को भूल रही है। इसे व्यंग्यकार ने उजागर किया है।

फैशन के नाम पर सौंदर्य प्रतियोगिता में नारी के अंगो का नख–शिख–दर्शन होता है। इस पर व्यंग्यकार आघात करते है, ''प्रभु ने ऐश्वर्य तो प्रदान कर दिया, मगर छप्पर फाड़कर नहीं, ब्लाऊत फाड़कर।''[३३] पुरूषो की छद्म मनोवृत्ति का परिणाम है कोई भोली–भातली लड्की भी अंग प्रदर्शन कर विश्व की सबसे सुंदर युवती के रूप में चुनी जाती है। इस फैशन का आघात भारतीय संस्कृति पर हो रहा है। इस कारण भारतीय संस्कृति चरमरा रही है। फैशन के नाम पर आज छात्र की वेश–भूषा में भी बदलाव आया है, इस पर लिखते है, ''पतलून कसी हुई और चपटी हैं। कमीजों के तीन चार बटन खुले हुए है। भीतर से गंदी गंधाती बनियन आती है। आस्तीनें रूई की बत्ती के समान लपेंटी हुई है और सीकों जैसी बाते नजर आ रही है। किसी के भी हाथ में काफी किताब नजर आ रही है। किसी किसी ने दो चार कागज और एकाध किताब मोड–तोडकर अपनी जेबो में ठूँसी

हुई हाथ में डायरी जैसा कोई चित्र पकड रखा है।''[३४] इस प्रकार डॉ. नरेन्द्र कोहली ने फैशन को लेकर आज के छात्रों को सोचने के लिए मजबूर किया है।

फैशन की दुनिया में विज्ञापन संस्कृति पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य करते हुए कहा है, ''तीसरे कमरे में विश्व की एक महान सुंदरी बैठी थी। मुझे देखकर मुस्करा दी आप जानना चाहते है, मै कौन सा साबुन इस्तेमाल करती हूँ। मै एक साबुन इस्तेमाल ही नही करती। अलग–अलग मौसम में, दिन के विभिन्न समयों में मै अलग–अलग अंगो पर विशेष ढंग के कई साबुन उपयोग में लाती हूँ।''[३५] इस प्रकार व्यंग्य करते हुए फैशन ने नाम पर मौसम के साथ शरीर के अलग–अलग भागों पर साबुन के उपयोग पर व्यंग्य किया है। जो आज फैशन बन गयी है।

आज फैशन के नाम पर विज्ञापनों में प्रदर्शित नारी के मौसम सौंदर्य का दरिया मॉडलिंग है। आज ट्रक, मोटार सायकल, सिगारेट, शराब, साबुन, पान मसाला, पेप्सी आदि चीजों के लिए नारी को प्रदर्शित किया जाता है। कंपनी को यह डर रहता है की, बिना लड़की का जिस्म दिखाए उत्पदित चीज की विक्री में कमी आ जाएगी। उनका यह मानना है कि विज्ञापनों में नारी के रहते यदि माल में कुछ कमियाँ है तो वे ग्लैमर युक्त विज्ञापनो में नारी के रहते यदि माल में कुछ कमियाँ है तो वे ग्लॅमर युक्त विज्ञापनों मे नारी के रहत दब जाएँगी आज की फैशन परस्त संस्कृति में ओढ़ना, बिछोना, खाना–पीना, सब बातें फैशन के नाम पर चल रही हैं

आज की फैशनपरस्त नारी आधुनिक बनने की होड़ में अपने आपका भद्दा प्रदर्शन मात्र करने लगी है। के. पी उनकी विसंगति की ओर कटाक्ष करते हूए लिखते है, ''अति लघु कंचुकी, नाभिदर्शनाा, साडी, गॉगल, हेयर ऑयल, सब इकठ्ठे महक उठे।''[३६] फैशन के नाम पर आज जो विकसित सोच अपेक्षित है उनकी मात्रा अत्यल्प दिखाई देती है, किंतु फैशन के नामपर नारियाँ, आज संस्कृति को भूलकर अनोखे अंदाज में संचार कर रही है।

आज कुल मिलाकर फैशन के नाम पर सब कुछ नकली प्रसाधनों का प्रयोग किया जाता है। इस पर व्यंग्यकार लिखते है की, शहरों में तों फैशन परस्ततता ज्यादा बढ़ रही

है, जैसे, ''रंग पुता चेहरा नकली–नकली पलकें बरौनियाँ कटे बाल, जंगे कंधे, उभरा वक्ष और कसी हुई कमीज। सुडौल और गोरी टांगे और उंची एडी के सैडल।''[३७] इस प्रकार आज फैशन के नाम पर वेशभूषा को परिवर्तित करना आम बात हो गयी है। जो देहात की तुलना में शहरों में ज्यादा है। शहरी जीवन की यह फैशन प्रियता ने लोगों को अपनी मुठ्ठी में बंद कर दिया है।

व्यंग्यकार लिखते है, ''मिस अलका युनिवसिटी में उतनी ही प्रसिध्द थी, जितनी के सिनेमा क्षेत्र में माला सिन्हा। सुबह का सारा टाईम आईने सत्संग मे ही व्यतीत करती थी। बालों का नित्य डिजाइन बदलती थी। तंग सलवार पारदर्शी कमीज, तेज लिपीस्टिक, हाथ में वैनिटी बॅग या उनकी वेशभूषा थी। मोटे होने के डर प्रायः भूखी ही उठ जाती थी।''[३८] फैशन के नाम पर आज न लोगों को न समय का ध्यान है, न खाने–पीने का! शरीर को बनाये रखने के लिए आधा पेट खाना खाया जाता है क्यों की फैशन युग है।

आधुनिक बनने की होड में नारीयाँ चाहे फँसती हो या न हो किंतु दूसरों के देखादेखी से हम भी पिछडे नहीं है ऐसा दिखाने की उनमें एक होड सी लगी है, ''फैशन के नाम पर वह पराभूत हुई और जाकर बाल कटवा आई, अगले ही दिन और आधी दर्जन औरतें जाकर अपने अपने बाल कटावा आयी।''[३९] फैशन के नाम पर आज नारीयों में प्रतियोगिता बनी हुई है। तो फैशन के नाम पर कुछ भी करने के लिए तैयार हो जाती है।

आजकल नारीयों मे नित्य परिवर्तित होने की फैशन बन गयी है उससे तो यह दिखायी देता है की, वे फैशन नहीं स्वयं पर अत्याचार कर रही है। उनकी इन गलत धारणाओं तथा व्यवहारों से कभी कभी तो उन पर तरस आता है। सुंदर दिखने के लिए दुबला पतला होना अनिवार्य मानकर वे न ढंग से खा सकती है न खुलकर कोई क्रिया कर सकती है। व्यंग्यकारों ने नारी को इस दशा पर तथा फैशन के नाम पर उनकी सोच की दिश पर व्यंग्य किया है। पाश्यात्य नारियों की फैशन देखकर आज भारतीय नारियाँ भी इस फैशनेबल संस्कृति का अनुकरण कर रही है, जिसके माध्यम से कटु कटाक्ष किय है।

व्यंग्यकार ले लिखा है कि, ''लोग कपडा नही, उसका रंग देखते है। खोपडी नही, बातो को अलग नजर से देखते है, वे उच्च कला के घोसलें है।''[४०] मनुष्य का जीना कला है, लेकिन मनुष्य जीवन में कला और संस्कृति के नाम उत्पन्न फैशन को देखता है। इससे जीवन में कई प्रकार की विसंगतियाँ पैदा होती है, इसे कोई नही देखता, इसे उजागर किया है।

सांस्कृतिक व्यंग्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि अनेक व्यंग्यकारों ने अपनी संस्कृति पर कठोर व्यंग्य किया हुआ है। अपनी संस्कृति की प्रशंसा अनेक पाश्चात्य विव्दान करते है किंतु फैशन परस्तता के कारण हम अपनी संस्कृति को बिगाड़ते जा रहे है।

आज आधुनिक बनने की होड में आज का पुरूष वर्ग एंव नारी वर्ग अपने आप पर अत्याचार तो कर रहे है। किन्तु फैशन के नाम पर गलत धारणाओं तथा व्यव्हारों से कभी–कभी इतना तरस आता है कि सुंदर दिखने के लिए दुबला पतला, छरहारा होने के लिए अच्छा खासा रूप बिगाडा जाता है। आज की वर्तमान पीढ़ि आधुनिक है। इसमें विकसित सोच की कमी दिखाई देती है। नारी भी आधुनिकता के नाम पर फैशन नहीं अपने आप पर अत्याचार कर रही है। सुंदर दिखने के लिए दुबला पतला होना, अनिवार्य मानकर न खा सकती है न कोई अच्छा कार्य कर सकती है। इससे संस्कृति बनने की जगह बिगड़ रही है।

४.५.४.पत्र–पत्रिका :

पत्र–पत्रिकाएँ यह माध्यम भी संस्कृति को बनाने बिगाड़ने वाला माध्यम कहा जाता है। इसमें भी यह माध्यम अधिक मात्रा में संस्कृति बिगाड़ने का ही काम करता है। आज पत्र–पत्रिकाओं में चित्रित बदलता स्वरूप उससे अछूता नहीं है। पारिवारिक, साहित्यिक, पत्र–पत्रिकाओं में भी सनसनीपूर्ण चीजें अधिक खपती है इसलिए एक अनुपात में छपती है। पत्र–पत्रिकाओं में भी सनसनीपूर्ण चीजें अधिक खपती है इसलिए एक अनुपात में छपती है। पत्र–पत्रिकाओं में भी कला से अधिक कला व्यवसाय पर जग्नता के सौंदर्य से अधिक नग्नता के भागों पर अधिक ध्यान दिया जाता है।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में शिक्षा प्रसार के कारण पढ़ने लिखने की प्रवृत्ति का प्रोत्साहन मिला है। दैनिक पत्रो, साप्ताहिक एंव मासिक पत्रिकाओं को पढ़नेवाले पाठकों की संख्या प्रचूर मात्रा में बढ़ गई है। इसका परिणाम यह निकला कि साहित्य में पत्रिकांओ की बाढ़ गई है। साहित्यिकता गौण हो गयी। टीमटामा विज्ञापन और प्रचार प्रमुख बन गये है। आये दिन नये नये पत्र–पत्रिकाओं का जन्म होने लगा है और उसी तेजी से उनका लोप भी होने लगा है। पत्र–पत्रिकाओं को चलाने के लिए नये–नये हथकण्डे अपनाये जाने लगे है। सिनेमा और सिनेमाई साहित्य के बढ़ने के कारण पत्र–पत्रिकाओं में सनसनीपूर्ण चीजे अधिक बिकती है। इसलिए एक अनुपात में छपती है। पत्र–पत्रिकाओं में चित्रित नारी के बदलते रूप भी उससे अछूते नहीं है। पत्र–पत्रिकाओं में कला से अधिक नग्नता के भागो पर बल दिया जाता है। क्या लाभ है? जबकि वह कहीं छपता ही नहीं।''[४१]

आज की पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादक का ध्येय केवल पत्रिका को अधिक बिक्री करना होता है। इसके लिए वह आकर्षक मुखपृष्ठ और उनके रंगीत तस्वीरों के जरिए उसका रूप खुबसूरत बनाने का प्रयत्न करता है, चाहे वह गलत ढंग से ही क्यों न प्रस्तुत की गयी हो, इस पर व्यंग्य करते व्यंग्यकार लिखते है, ''पिछले दिनों मैने एक रंगीत तस्वीर में एक लडकी को सितार लिए देखा। वह सितार गलंन पकडे थी। जो ऊँगलियाँ पर्दो पर होती चाहिए थी वह उससे तार बजा रही और ऊँगली में। मिजराब होनी चाहिए वह पर्दे पर रखी थी। और बजाने के लिए उसने सितार को यों सीने से चिपका रखा था, जैसे वह वाघ नही कोई बॉयफ्रेंड हो। चित्र देखकर मुझे 'थ्री टायर तरस' आया।''[४२] एक उस लड़की पर, दूसरा फोटोग्राफर पर जिसने चित्र लिया और तीसरा उस सम्पादक पर जिसने कन्या के कोन देखे मगर सितार के नहीं। खुशी हुई कि एक भारतीय वाद्य प्रगति कर रहा है। और उन क्षितिजों को स्पर्श कर रहा है जहाँ उसकी जरूरत नहीं थी।

लेखक के लिए पहली बाधा सम्पादक है, उससे भी बडी बाधा प्रकाशक है। प्रकाशक ने लेखक पर बन्धन लगा दिया है। साहित्यकार प्रकाशन को बिना प्रसन्न एवं आश्वस्त किये कुछ नहीं छपवा सकता। प्रकाशकों के मानसिक स्तर का यथार्थ खाकर

व्यंग्यकार ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है, प्रकाशक बोले ''एक बात और, आप इस कविता और व्यंग्य वगैरह के जाल में कब तक उलझे रहेंगे? अपराध, सैक्स, जासूसी और अनैतिक प्रेम इन विषयों पर कुछ क्यों नहीं लिखते? हमारे सुझाव आपने शायद उस इंसान के बारे में सुना होगा जिसके हाथ से एक बार वक्त ऐसा। निकला था कि, फिर कभी वापिस नहीं लौटा, ठीक वैसी ही स्थिति जैसी कि एक बार आपकी पांडुलिपि के साथ हुई।''[४३] इस प्रकार प्रकाशकों की मनमानी पर प्रकाश डाला है।

साहित्यिक पत्र पत्रिकाओं औरंतो के इसी रूप को उभारती है। जो अत्यंत लज्जाजनक और निदंनीय है। पत्रिका के सम्पादक पत्रिका को लोकप्रिय करने के लिए पत्र–पत्रिका पर औरतों की कैसी भी तस्वीरे छपवाते है। इस पर व्यंग्य करते हुए व्यंग्यकार लिखते है, ''पत्रिका चलने के गुरू सीख और नंगी जाँघो का बाजार लगाओ। नंगी तस्वीरो और नंगी जाँघो का बाजार गर्म रखो, उस पर कविता छापो, नंगी छातीपर कहानी छापों तब देखो तुम्हारी पत्रिका कैसे दौडती है।''[४४] इस प्रकार नैतिकता का पतन शुरू हुआ है।

पत्रिकाओं को आकर्षक बनाने के लिए विशेषांको का प्रचलन बहुत बढ़ गया है। छोटी–छोटी बातों के उपर विशेषांक निकलने लगे है। इसी लक्ष्य पर व्यंग्यकार लिखते है, ''समाचार छापने के भी पैसे मिलते है, और न छापने के भी।''[४५] इस प्रकार समाचार अपने दायित्व से भटक रहे है।

प्रकाश को तो अपनी थैली भरनी है, इससे चाहे साहित्यकार की प्रतिमा का गला ही क्यों न घोटा जाये। साहित्य और कला का महत्व कुछ भी नहीं। साहित्यकार हीन बन गया है। सम्पादकों और प्रकाशकों का भी प्रभुत्व स्थापित हो गया है। उनकी मनमानी है, उनका हस्तक्षेप है, ऐसी विकृत एवं विसंगतिपूर्ण स्थिति पर व्यंग्यकार ने विडम्बनात्मक शैली में प्रहार किया है, ''वाकई सम्पादक काफी बडी चीज है। वह चाहे तो गधे को बाप बना सकता है। उदाहरण की तौर पर मै खुद को अपने को प्रस्तुत करता हँ। हाँ अलबत्ता जो, है वह सम्पादक से भी बडी चीज है। वह चाहे तो गधे को लेखक क्या सम्पादक तब बना सकता है। प्रकाशक की लीला अपरम्पार है। साहित्य में जो कुछ भी प्रकाश शेष है वह

प्रकाशकों के कारण है। आधुनिक कवियों के कारण नहीं।''[४६] इस प्रकार आज के युग में सम्पादकों की मनमानी जादा हो रहीं है। इस बात का प्रमाण मिल जाता है।

आज की गणतंत्र प्रणाली में पत्रकार की शक्ति परमात्मा से भी बढ़ गयी है। ऐसा कहना पड़ रहा है कि पत्रकारों (प्रभो) आपकी लीला अपरंपार है। सृष्टि का निर्माता भी इतने कार्य कर नहीं सकता लेकिन पत्रकार इन सभी कार्यो को चुटकी में कर देते है उसी पर व्यंग्य करते हुए चतुर्वेदी लिखते है, ''आप रूपए नव्वे नये पैसे के बराबर शक्ति रखते है। पानी में आल लगा देना आपके बायें हाथ का खेल हैं। लिल का ताड़ कर देना आपके नित्य कर्म का एक स्वाभाविक अंग है। आप प्रलयकारी है। आपकी कलम आपका तीसरा नेत्र है। आपकी यदि कृपा हो जए तो एक दिन में गंगू तेली राजा भोज बन सकता है। एवं तुक्कडा महाकवि बन सकता है, एक नवीन युग प्रवर्तक बन सकता है, एक ब्लैक मार्केटियर समाजसेवी बन सकता है। एक लफंगा लोकप्रिय नेता बन सकता है। आपकी शक्ति अपरंपार है। हे अंतर्यामी।''[४७]

आज के रूप मे कहा जाता है कि, आज पत्र–पत्रिकाओं में चित्रित बदलते स्वरूप भी उससे अच्छुते नहीं है। पारिवारीक या साहित्यिक पत्र–पत्रिकाओं में भी सनसनी पूर्ण चीजे अधिक बिकती है। पत्र–पत्रिकाओं में कला से अधिक कला के व्यवसाय पर सौन्दर्य से अधिक नम्रता से भागोंपर अधिक ध्यान दिण जा रहा है। इसी कारण संस्कृति टुट रही है। आज के दिनों में पत्र–पत्रिकाओं को चलाने के लिय नये–नये हथकण्डे अपनाये जाने लगे है। पत्र–पत्रिकाएँ यह माध्यम भी संस्कृति को बिगाडने वाला माध्यम कहा जाने लगा है। पत्र–पत्रिकाओ के कारण संस्कृति बनने की जगह बिगडती जा रही है।

४.५.५.आधुनिकतापन :

आज के सांस्कृतिक परिवेश में एक विषय स्थिति उत्पन्न हो गई है। एक ओर प्राचीन संस्कृकति की अवहेलना की जा रही है उसे हय माना जा रहा है। दूसरी ओर संस्कृति के कोई नये मानदण्ड या रूप बन नहीं पा रहे है। परिणाम यह निकल रहा है कि नयी और

पुरानी सांस्कृतिक मान्यताओं का परस्पर टकराव हो रहा है। इस कारण स्थिति बहुत विषम और विसंगत बन गई है।

उच्चवर्ग और मध्यवर्ग पूर्ण रूप से विदेशी साँचे में ढल रहा है। इस कारण क्लब, पार्टी में सहभागी होना आधुनिकता माना जा रहा है। इनके कारणवश शराब पी जाती है। भिन्न–भिन्न स्त्री पुरूष कमर में हाथ डाले नाचते है। नैतिकता और चरित्र का नामोनिशान नहीं रहा है। अपने अफसर को खुश करने के लिए कर्मचारी, क्लब, पार्टी में अपनी पत्नी को पूरी छूट देते है।

आधुनिक संस्कृति के नामपर आज की पीढ़ी कुछ भी याने नाक भी कटवाना चाहती है। नाक भी काट लिया तो उसे उच्च आदर्श मानती है। पीढीयों में परस्पर मतभेद है। एक पीढ़ी प्राचीन से ही जुडी रहना चाहती है। जब कि दूसरी पीढी क्रांतिकारी परिवर्तन लाकर नूतन संस्कृति को अपनाना चाहती है। संस्कृति के नाम पर आडम्बर, अनैतिकता भ्रष्टाचार ही पनप रहा है। इसी को लक्ष्य बनाकर व्यंग्यकारने व्यंग्य करते है, ''दोस्त वर्तमान सभ्यता जेब काट है।''[४८] हर आदमती दूसरे की जेब काट रहा है। सिर्फ उसकी जेब सुरक्षित है जो दूसरे की जेब पर नजर रखता है। हर आदमी दुसरों की अनैतिकता का अनुकरण करके अपने आपको बड़ा बनाना चाहता है जिसमें अपनी संस्कृति को भूलकर दूसरों का अनुकरण करना ही अच्छा समझता है।

आधुनिक भारतीय संस्कृति की विरूपता पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''विदेशों में तो सुधर जाओ हर जगह अपनी हिन्दोस्तानी प्रतिभा का प्रदर्शन क्यों करते हो। विदेश में यदि किसी को गाली देना हो तो भारतीय संस्कृति और उसके लोगों की हद से ज्यादा तारीफ करो।''[४९] इस प्रकार स्वयं के लाभ हेतु देश के प्रतिभा के साथ लोग खिलवाड करते है।

ऐसी ही स्थिति का यर्थाथ चित्रण करते है। बुढ़ा कर्नल कॅप्टन की सुन्दर पात्नी के साथ नृत्य करना चाहता है। पत्नी वनपरणीता है। वह कोने में छुंईमुई बन बैठी रहती है। कर्नल कॅप्टन को समझाता है– ''कैप्टन तू अपनी पत्नी को कफ्यर्ड बनाओ, क्लब में लीड

कर सकती है...... कर्नल बात तो कॅप्टन से कर रहा था किन्तु उसकी आँखे उसकी पत्नी की ओर ही थी उसी प्रकार जैसे घोड़े की आँखे घास की ओर लगी होती है।''[५०] इस प्रकार नारी की स्थिति आज के गुण में उपभोग के अलावा कुछ नहीं है।

डान्स शुरू हुआ। किसी की बीबी किसी के साथ नाच रही थी। कर्नल की पत्नी ने स्वयं एक जवान कॅप्टन को पकड़ रखा था। आधुनिक संस्कृति में विदेशी चीजों के प्रति इस कदर आकर्षण बढ़ गया है। व्यंग्यकार इसी लक्ष्य पर सीधे–सीधे व्यंग्य करते है, ''मैं देखता हूँ कि मेरे आसपास और हो सकता है कि सब जगहों का यही हाल हो। विदेशी चीजों के प्रति पागलपन बढ़ता जा रहा है। कोई भी चीज हो–खाने की हो, पहनने की हो, ओढने–बिछाने की हो सजावे की हो, पर यदि विदेशी हो तो अधिक पसन्द की जाती है। तो हर चीज विदेशी ही अच्छी होती है। बस गेहुँ ही विदेशी किसी को पसन्द नहीं आता।''[५१] इस प्रकार सभी विदेशी वस्तुओं का स्वीकार करने में हम गर्व महसूस करते है।

आज आधुनिक संस्कृति के कारण आदमी झूठी प्रतिष्ठा पाने के लिए अपनों का शोषण कर रहा है, इस प्रतिष्ठा को पाने के लिए वह निन्दा करता है, चाटुकारिता अपनाता है इस पर व्यंग्य करते हुए व्यंग्यकार ने लिखा है, ''मस्के के बिना तो रोटी भी हजम नहीं होती, परमात्मा भी नहीं मिलता भगवान की खुशामद का नाम ही भजन है।''[५२] आधुनिक संस्कृति का प्रभाव इतना छा गया है कि, भगवान को पाने के लिए आज भजन की जरूरत आ गयी है। इस बाहय आड़म्बर का प्रभााव बढ़ता जा रहा है और आधुनिक संस्कृति के कारण भारतीय संस्कृति चरमरा रही है।

व्यंग्यकार अपने व्यंग्य में आधुनिक संस्कृति के बढ रहे प्रभाव को चित्रित करते हैं पार्टी में शराब बहते प्रवाह और प्रभाव को देखकर व्यंग्यकार का मन पीड़ा से भर जाता है, इस संदर्भ में वे लिखते है, ''मै सोचता रहा कि देश में सुखाग्रस्त क्षेत्रों में शराब की सिंचाई क्यों नहीं की जाती? अगर शराब, अफसर समाजसेवक और कलाकार पैदा कर सकती है तो क्या वह बाजरा और चावल पैदा नहीं कर सकती है।''[५३] आधुनिक संस्कृति से प्रभावित

होकर समाज एवं भारतीय संस्कृति दिशाहीन बन गयी है। इसी कारण भारतीय संस्कृति टूट रही है।

आज यह स्पष्ट होता है कि, आधुनिक संस्कृति प्रदर्शन की संस्कृति है। प्रदर्शन का एक अंग विज्ञापन है। विज्ञापनों के माध्यम से नारी के भौंड, भद्दे, बीभत्स रूप की ही प्रस्तुति हो रही है। इनमें नारी का योग्य रूप ही अधिक आया है। क्लब, डिनर, पार्टी, लंच आदि बातें स्वाथ्य सिध्दि के लिए है। स्त्रियों को उपभोग करने का साधन बनाया गया है। ऐसे समाज में अवैध यौन संबंध की मात्रा अधिक देखी जाती है। आधुनिकता के आगमन के साथ साथ स्त्रियों में बदलाव आया है। अर्थिक क्षेत्र में स्वावलंबिता के कारण उन्हे आजादी मिली है। फलतः अधिक मात्रा में बाहरी बदलाव आया है। आधुनिकता के कारण संस्कृति बनने की जगह बिगड़ती जा रही है। आधुनिकतापन यह घटक भी भारतीय संस्कृति को अधिक मात्रा में बिगाड़ने का काम करता है।

४.५.६. नारी की स्थिति :

वेदो, पुराणों और शास्त्रों में भारतीय नारी को उच्च स्थान दिया गया है। उसको उँचा आसन तो दिया गया है, किंतु यथार्थ यह है कि आज समाज में अधिकांश रूप में पत्नी का दासी रूप और पति का स्वामी रूप ही दिखलाई देता है। गृह–लक्ष्मी या गृह सम्राज्ञी का रूप न्यूनतम है। पति आज भी परमेश्वर है, पत्नी को उसकी पूजा करनी चाहिए और आँख मुँदकर उसकी हर आज्ञा का पालन करना चाहिए। समाज में आदर्श और यथार्थ का वह विरोधाभास सदैव से ही रहा है।

भारतीय समाज ने नारी को देवी, अर्धांगिनी, भार्या, सहधर्मिनी, गृहलक्ष्मी, रानी, पटरानी आदि नाना विशेषणों से सज्जित किया है। उसे उच्च आसन पर आसीन किया गया है। पत्नी का बड़ा ही आदर्श चित्र खीचा गया है। समाज के एक ओर नारी को पूज्य स्थान दिया जाता है। उसे माँ, बहन, पत्नी और बेटी का रूप दिया जाता है। हवाई यात्रा से लेकर ब्लेड तक के विज्ञापन में नारी शरीर का प्रदर्शन परमावश्यक बन गया है। अधिक से अधिक

कामुक और कामोत्तेजक मुद्राओं में नारी को विज्ञापन का माध्यम बनाया जाता है। यह नारी की ही नग्नावस्था का ही द्योतक है।

नारी को अब भी पर्दे की रानी बनाकर ही रखा जा रहा है। गृह लक्ष्मी की संज्ञा देकर उसकी स्वतंत्रता, प्रतिभा एवं योग्यता को दबाया जाता है। अपनी 'वाईफ' को 'तवाईफ' समझा जाता है, ''हमारी मुश्किल यह है कि हम हमेशा दूसरे की बीवी की खोज करते है। दूसरे की स्टेज पर आ जाए, अपनी न आये। दूसरे की नहीं आती है तो कहते है कि बड़े पिछडे हुए लोग है, हम पिछडे नहीं है जिन्होंने उसका मुरब्बा बनाकर घर में छोडा है।''[५४] इस प्रकार दूसरों की औरतों पर आदमी की नजर हमेशा रहती है। यह वास्तविक सामने आती है।

नारी को आज भी आचारदान में बंद करके रखा जाता है, केवल अपने को चखने के लिए। नारी दासी के समान है। उसके विक्रम के केंद्र स्थल अनेक है, जहाँ हर एक प्रकार का माल खरीदा, वेचा जा सकता है, ''अनाथालय, विधवाश्रम नारी निकेतन ऐसी अनेक सामाजिक संस्थाये तो इस दिशा में इतनी नि'स्वार्थ होती है कि, उनके यहाँ सामान के नापसन्द आने पर अदल-बदल करने की भी समुचित सुविधा प्राप्त होती है।''[५५] नारी विषयक दृष्टिकोन आज समाज में अच्छा नहीं दिखाई देता नारी के बारें में जो दृष्टिकोन समाज में है, उसे बदलने की बहुत जरूरत है। व्यंग्यकार ने इस ओर संकेत किया है।

एक कवयित्री के पति उसकी रचना पत्रिका में छपवाने के लिए संपादक के पास ले जाता है। संपादक कुछ संशोधन कर वह बात कवयित्री को समझाना चाहता है। उसके लिए पत्नी का संपादक के दप्तर में आना आवश्यक है। पति महोदय शंकालू स्वभाव के है, जो पत्नी को चार दिवारों में ही बंद रखना चाहते है। इस पर पति महोदय संपादक को कहते है कि, वे नहीं आ सकती क्योंकि वह वाईफ है। हमारा समाज तो यह मानता है कि, कि जो बाहर आए वह तवाईफ है जब इसकी पत्नी बीमार होती होगी और डाक्टर आता होगा, तो यह ''स्टैथकोप अपने सीने में लगवाता होगा। डाक्टर कहता होगा, बीमार तो वे है। ये

कहता होगा, हॉ मेरी जाँच कर लिजिए, वे वाईफ है न।''[५६] इस प्रकार नारी को आज भी घर में दबाकर रख दिया जाता है।

अपनी पत्नी को पर्दो के पीछे रखा जाता है। उसे समाज के सामने नहीं लाना चाहते लेकिन दूसरों की नारियों को तवाईफ समझा जाता है। ऐसी स्थिति आज समाज में दिखायी देती है। उसको बदलने की जरूरत है। इसी ओर व्यंग्यकार ने संकेत किया है।

जब स्त्रियाँ पतिव्रत धर्म के प्रति एकनिष्ठ हो तभी पुरुष का पुरूषार्थ समाज को दृष्टि से मान्य होता है, व्यंग्यकार व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''प्रतिष्ठा का जब पलायन करने का समय आता है तो स्त्री की प्रतिष्ठा पहले जाती हे।, पुरूष इस जगह घास खाकर भी मुंछे उँची किए पगडी सलामत लिए फिरता है। जबकि उसकी पत्नी उसके सिवा अन्य किसी पुरूष के संपर्क में आकर कहीं और दिल लगाए उसकी प्रतिष्ठा घट जाती है।''[५७] इस प्रकार पुरूष के सभी अपराध माफ होते है। नारी के लिए ऐसी स्थिति हमारे सामज में नहीं है।

व्यंग्यकारने नारी प्रतिष्ठा के अपने पौरूष से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति और इसके कारण नारी को मिले दासी रूप को स्पष्ट किया है।

नारी पूजनीय है, इस पर व्यंग्य करते हुए एक गो भक्त से भेट में कहते है, ''बच्चा, यह कोई अचरज की बात नहीं है। हमारे यहाँ जिसकी पूजा की जाती है, उसकी दुर्दशा कर डालते है। यही सच्ची पूजा है नारी को भी हमने पूज्य माना है। उसकी दुर्दशा की तो तुम जानते ही हौ।''[५८] इस प्रकार नारी के प्रति दिखावटी सहानुभूति दिखाई जाती है।

नारी देवी है, इसलिए वह पूजी जाती है। ग्रंथो में भी कहा है कि जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवताओं का वास होता है। इस पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''तुलसीदास एक जगह नारी को ढोलक की तरह दोनों तरफ से पीटने को कहते है और दुसरी जगह उनकी तुलना देवियों से करते है। यह हमारी परंपरा है कि, किसी चीज को पतित भी रखें और उसकी प्रतिष्ठा भी करते रहें।''[५९] इससे नारी को सम्मान नहीं मिलता, यह बात स्पष्ट होती है।

आज स्त्रियों के आत्मविश्वास और पुरूषों की कुष्छा ने आपस की तकरार को जन्म दिया है। बात तलाक तक नहीं पहुँची हत्या तक गयी है। इस पर करारा व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''देश में चोरी–छुपे का मामला है, यहाँ तलाक नहीं होता औरत की नाक काट ली जाती है यही उसकी हत्या कर दी जाती है।''[६०] नारी विषयक दृष्टिकोन समाज में इतना बदल चुका है कि, उसको जहर दिया जाता है, नहीं तो उसकी हत्या की जाती है। इस मर्म स्पर्शिता को व्यंग्यकार ने स्पष्ट किया है।

'भारतीय संविधान एक ओर स्त्री–पुरूष को समानता के अधिकार देता है, स्त्री को विशेष संरक्षण प्रदान करता है, सरकार और नेता संविधान की हटाई देते है। इस संबंध में कुछ अधिनियम भी पास किए गए है। परंतु भारतीय नारी की स्थिति में कुछ विशेष सुधार नही आया है। नारी और पुरूष समानता की बात कुछ पढ़े लिखे उच्च मध्यमवर्गीय परिवारों तक हि सीमित है।

आज को नारी मुक्ति का व्दार खुलने पर तो उसका शोषण और भी अधिक हुआ है। उसका विज्ञापनों में अश्लील प्रयोग होने लगा है। दहेज के कारण उस पर होने वाले अन्याय, अत्याचार में कोई कमी नहीं आयी है। समाज में स्त्रियों की दशा के कारण वह शोषित है। नारी का जीवन विसंगतियो से भरा है। समाज में नारी को एक ओर पूज्य स्थान दिया जाता है। उसे माँ, बहन, बेटी, और पत्नी का रूप दिया जाता है। दूसरी ओर उसको विकृत कर, तंगा कर विज्ञापनों में प्रदर्शित किया जाता है। हवाई यात्रा से लेकर ब्लेड तक के विज्ञापन मे नारी शरीर का प्रदर्शन परमावश्यक बन गया है। अधिक से अधिक कामुक और वासनोत्तेजक मुद्राओ में नारी को विज्ञापन के माध्यम से प्रदर्शित किया जाता है। जिसके कारण संस्कृति बिगड़ती जा रही है।

४.५.७. थोथापन :

आज संस्कृति के कार्यक्रम, नृत्य, संगीत, कला आदि बाहयाडम्बर एवं दिखावे की वस्तु बनकर रह गये है। आप यह छिछोरी संस्कृति के प्रतीक बन गये है। आज सांस्कृतिक समारोहों का आयोजन किसी स्वार्थ पूर्ति, आत्म प्रशंसा, चाटूकारी या फिर चंदा उगलने

लिए किया जाता है। सांस्कृतिक समारोहो में आवाजे कसना, सीटियाँ मारना, गालियाँ बकना, महिलाओं पर कागज की गोलीबारी करना, कुर्सियाँ तोडना, आदि का बोलबाला होने लगा है। हुल्लड, हंगामे और शोर शराबो ने सांस्कृतिक कार्यक्रम में जगह बना ली है।

आज विज्ञापन संस्कृति के कारण लोग इतने गिर गये है कि विज्ञापित चीजों का ही इस्तेमाल कर रहे है, अच्छाई एवं बुराई की तरफ कोई देखने के लिए तैयार नही है। ऐसी सोचनीय स्थिति बनी है।

नई पीढ़ी व्दारा गांधीजी के नामपर अधनंगा घूमना और अत्यल्प वस्त्रों के प्रयोग करना इसे गांधीजी के प्रवृत्ति ने धारणा को विकृत और दूषित किया है। इस बाहय आडम्बर युक्त योयी संस्कृति पर व्यंग्य कसते है, ''कभी नहीं सोचा होगा गांधीजीं ने कि देश के इन फैशन परस्तों की स्वतन्त्रता के लिए स्वतन्त्रता माँग रहे है। जो अति वैभव से पीड़ित है और करने को कोई काम न होने के कारण नंगे होकर विचित्र वेशभूषा में राजधानी की फैशनेबल सडको पर बहुरंग मयाचे फिरते है। उन्होंने मिनी धोती गरीबी के प्रतीक रूप में बाँधी थी और यारों ने उन्हे फैश का मॉडल बना दिया।''[६१] इस प्रकार रास्ते पर रंगीन कपडे पहनकर घूमना एक गर्व का अनुभव होता है।

व्यंग्यकार सांस्कृतिक कार्यक्रमों पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''असली सांस्कृतिक कार्यक्रम चार–पाँच दिन तक चला। गाने वाले आये, गा बजाकर चले गये। कवि आये, कविता कविता कर निकल गये। चिंतक–किंतक आये, खूब बोले बड़बड़ाये। एक मुशायरा हुआ जो पूरी रात चला, तो दूसरे दिन हॉल के कचरे में अधजली बूँझी बीडी, सिगारेट के टुकडों के साथ कोई ही क्विंटल वाह–वाह और मुकर्रर इशारद निकने जो राम भर में हात में जमा हो गये थे।''[६२] आज संस्कृति योनी बनी हुई है, इसी ओर व्यंग्यकार संकेत करते है।

इस प्रकार बाहयाडंबर के थोथेपन ने संस्कृति को घेर डाला है। बाहयाडम्बर की यह प्रवृति दिन–ब–दिन भारतीय संस्कृति को खोखला बना रही है। हम भारतीय अपनी संस्कृति को भूलने जा रहे है। ने इस पर किया हुआ व्यंग्य सार्थ है।

४.५.८.विदेशीपन :

आज भारतीय समाज में विदेशीपन तथा विदेशी वस्तुओं मे प्रति अधिक मोह बढ़ गया है। यह धारणा बन रही है, कि, यदि खान–पान में रहन–सहन में, वस्त्र पहनने में तथा भाषा, के प्रयोग में विदेशीपन को अपनाया जाता है, तो शानो–शौकत में चार चाँद लग जाते है। विदेशगमन और विदेशपन के आकर्षण में न जाने कौनसा जादू भरा है कि, हर कोई विदेश जाने के लिए लालायित रहता है। विदेशी भाषा एवं विदेशीपन का भूत भारतवासियों पर वेश–भूषा, खान–पान, रहन–सहन और संस्कृति को हेय तथा निम्न दृष्टि से देखते है। विदेशीपन के प्रति आस्था रखनेवालों पर व्यंग्यकारों ने व्यंग्य किये है।

४.५.८.१. विदेशी आचार– विचार :

मनुष्य का आचार–विचार ही सभ्य समाज जीवन का आधार होते है। अपनी–अपनी संस्कृति के आचार–विचार होते है। आज हम पर विदेशी आचार–विचारों का प्रभाव है। आज भारतीय समाज में विदेशी आचार–विचार का प्रभाव ज्यादा दिखायी देता है।

भारतीयों के आचार–विचार में विदेशीपन के प्रति आस्था इन सीमा तक बढ़ गई है कि उसके आगे नैतिकता, सच्चरित्रता का कोई महत्व नहीं रहा है। व्यंग्यकार ने इसी पर विडम्बनात्मक व्यंग्य किया है। एक ऐसी ही लड़की अपने अमरीकन वॉस व्दारा गर्भवती हो जाने पर गर्व करती है। वह कहती है ''मै जानती हुँ वह दोगला और हरामी होगा। पर उसका सन्मान मुझसे अधिक होगा क्योंकि घटिया स्वार्थी और नपुंसक लोगों के करण घटिया बनोय गये भारत जैसे राष्ट्र का वह अंग नहीं होगा। मै जिन्दगी भर अपनी राष्ट्रीयता के कारण लज्जित रही, पर मैने अपनी अगली पीढ़ी को उबार लिया है।''[६३]

भारतीय संस्कृति का एक रूप एकदम विदेशी साँचे में ढल गया है। नैतिकता एवं चरित्र को ताक पर रख देना तथा विदेशी सभ्यता एवं संस्कृति को स्वीकार कर लेना ही आज का आचरण बन गया है। इस विदेशी मानसिक गुलामी के प्रति व्यंग्य किया है। संक्षेप में भारतीय समाज में आचार–विचार में भी परिवर्तन हुआ है, जिसके कारण भारतीय संस्कृति बनने के जगह बिगड़ती हुई दिखायी देती है।

४.५.८.२. विदेशी रहन–सहन :

आज भारतीय समाज की रहन–सहन विदेशीपन के कारण बदल रहा है, बंगला, कार, टेलीफोन, मोबाईल, रंगीन टी. वी. व्ही. सी. आर. युक्त व्यक्ति प्रतिष्ठत माना जाता है। इस झूठी प्रतिष्ठा को पाने के लिए वह कुछ भी करता है। प्रतिष्ठा बढ़ते ही दैनंदिन जीवन में भी परिवर्तन होता है, ''जैसे हमारी पोजीशन बढ़ गई। पत्नी ने चाय में दो चम्मच चीनी डालनी शुरू कर दी। बच्चों ने पिताजी की जगहर पापाजी कहना शुरू कर दिया। मित्रों को हमारी कविताएँ ज्यादा अच्छी लगने लगी। मालिक ने किराये का नोटिस वापिस के लिया।..... मुहल्ले की चंद सुन्दर लड़कियाँ मुझे नमस्ते करने लगी।''[६४] एक गरीब क्लार्क से प्रमोशन पाकर अफसर बन गया तो उसके सोए भाग्य एकदम से जाग गये और वह सन्मान पाने लगा। जन–सामान्य आदमी को कोई पूछता तक नहीं, ऐसी झूठी प्रतिष्ठा भारतीयों में भरी हुई है।

आज समाज में रहन–सहन को इतनी प्रतिष्ठा दी जाती है कि, जो अच्छे बंगले में नहीं रह सकता वह भी किराये से क्यों न हो बंगले में रहना चाहता है। किराये की रक्कम इतनी बढ़ चढ़कर बतायी जाती है। कि जिसे चुकाकर आदमी खायेगा क्या इस पर महँगे किराये का मकान लिया जाता है। इस प्रकार झूठी शानौ–शौकत, रहन–सहन में उँचा दिखाना चाहते है। रहन–सहन में विदेशी का अनुकरण तथा सिनेमा का अनुकरण दिखायी देता है, इससें शहर ही नहीं गाँव भी अछूते नहीं है। कस्बे की लङकियाँ तक अपने आपको फिल्मों की फैशन के अनुकूल ढाल लेती है, व्यंग्यकार कहते है। '' तुम मुझसे प्रेम क्यों करना चाहती हो?'' उसने पूछा। ''उससे मेरा काम आसान हो जाता है।''[६५] इस प्रकार प्रेम आज सहज उपलब्ध होनेवाली चीज है।

आज भारतीय समाज में विदेशी रहन–सहन का तथा सिनेमा का अनुकरण दिखायी देता है। इससे शहर ही नहीं गाँव भी अछूते नहीं है। बंगला, कार टेलिफोन मोबाईल, कलर टी. व्ही. व्ही. सी. आर युक्त व्यक्ति प्रतिष्ठित माना जाता है। रहन–सहन में इस झूठी

प्रतिष्ठा को पाने के लिए वह कुछ भी करता है, इस विदेशीपन के अनुकरण के कारण आज भारतीय समाज की रहन–सहन में बहुत कुछ बदलाव आया है।

४.५.८.३ विदेशी वेश–भूषा :

भारतीय समाज में विदेशी वेशभूषा का अनुकरण किया जा रहा है। युवतियों की हेअर स्टाइल आये दिन बदल गयी है। साडी से सलवार कुरती, सलवार कुरती से जीन्स पॅन्ट, शर्ट, कभी मोटी, कभी लंबी बाँहो वाला फ्रॉक, इस प्रकार स्टाइल में प्रतिदिन परिवर्तन दिखता है। व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है,'' मैने उनसे बातें की तो वे बोली–बाबू आजकल यही फैशन है, बडी बालियों का या लम्बे इयररिंगों का।''[६६] इस प्रकार वेश–भूषा में विदेशीपन तथा फिल्मों का अनुकरण किया जा रहा है, लडकियाँ बडी–बडी बालियाँ और लम्बे लटके हुए इयररींग पहनने लगी है। जो विदेशीपन की नकल मात्र है। विदेशी वेश–भूषा के कारण आज आयु का पता नही चलता, सौंदर्य बढ़ाने वाले प्रसाधन है पाऊडर, स्नो, क्रीम, लिपिस्टिक बालों को रचना, मैचिंग आदि से मनुष्य धोखा खा जाता है। ''ड्राइंग रूम में रमा जी की मॉ जी से नहीं। रमा जी को बुला दो अंदर से। इस पर नौकर बोला– अभी आप रमा जी से नहीं। रमा जी को बुला दो अंदर से। इस पर नौकर बोला– अभी आप रमा जी की माँ से नहीं खुद रमा जी से ही तो बात कर रहे थे।''[६७] इस प्रकार आज वेश–भूषा एवं विदेशी सौंदर्य बढ़ाने वाले प्रसाधनों से आयु का पता नही चलता इस के इस कारण ठिक तरह से आदमी को पहचाना भी नहीं जाता।

वेश–भूषा पर फिल्मों का बढ़ता हुआ प्रभाव एवं अर्ध–विकसित गाँवो का चित्रण बडी व्यंग्यात्मकता के साथ व्यंग्यकार ने किया है, '' सामने सड़क पर एक सज्जन प्रकट हुए जिन्होने धोती के उपर बुशर्ट धारण कर रखी थी। एक हाथ में ट्रांजिस्टर या और दूसरे में काशीफल। संक्रमण काल के सच्चे प्रतिनिधी।''[६८]

भारतीय ग्रामों में विदेशीपन, नगरीय सभ्यता के सम्पर्क में आने के कारण गाँवो का शहरीकरण स्पष्ट दिखायी देता है। विदेशी को उतरण पहनना भी उँची सभ्यता माना जाता

है। इस प्रकार व्यंग्यकार ने विदेशी वेश–भूषा का अनुकरण करने वाले भारतीय ग्रामों पर व्यंग्य किया है।

आज भारतीय ग्राम हो या शहर समाज में विदेशी वेश–भूषा का अनुकरण किया जा रहा है। युवतियों की हेअर स्टाइल आये दिन बदलती है। वेशभूषा में परिवर्तन दिखायी देती है। इस के कारण भारतीय वेश–भूषा नष्ट होकर, विदेशी वेश–भूषा को ज्यादातर अपनाया जा रहा है यह भारतीय संस्कृति के लिए खेदजनक बात है।

४.५.८.४. विदेशी खान–पान :

भारतीय समाज के खान–पान में भी परिवर्तन हुआ है, क्लब, डिनर, बुफे, विदेशी शराब पीना, काँटे के चम्मच से खाना यह विदेशी सभ्यता की देन है। व्यंग्यकार कहते है, '' बीच–बीच में उन शराब की बोतलो को भी देखता रहा जो कि डिनर टेबूल की दिशा में ले जाई जा रही थी। उनकी संख्या और गति को देखकर में सोचता रहा।''[६९] भारतीय समाज के खान–पान में आज इतना परिवर्तन हुआ है कि, काँटे–चम्मच से खाना, क्लब में शराब पीना, विदेशी डान्स करके लड़कियों की कमर मे हाथ डालकर झूमना यह विदेशी क्लब संस्कृति उंची सोसायटी की जंगी सभ्यता के अड्डे बन गये है।

इस प्रकार क्लब, डिनर मे बुफे पध्दति को व्यंग्यकरा ने अपने व्यंग्य मे विदेशी खान–पान पर जो परिवर्तन हुआ है। इसी को लेकर व्यंग्यकार ने कसकर व्यंग्य किया है।

४.५.८.५. विदेशी भाषा :

देश में भाषा की अनिश्चितता के साथ ही एक और बढी विकृति शिक्षा पध्दति में व्याप्त है। विदेशी भाषा के प्रति लगाव मानसिक दसता की निशनी है। आज स्वतन्त्रता प्राप्ति के इतने दिनों पश्चात् भी संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकार करने की मानसिकता नहीं है। अंग्रेजी भाषा का महत्व राष्ट्रभाषा से कही अधिक है। राष्ट्रभाषा हिन्दी की ही आवस्था पर व्यंग्यकार ने तिलमिला देनेवाला व्यंग्य किया है, ''हिन्दी माता पर ऐसा क्या संकट आ गया? मुख्य मंत्रियों ने राष्ट्रीय एकता के हक्क में अंग्रेजी को अनन्त काल तक

चलाने का निश्चय किया है। जिस तरह अंग्रेजी की छत्रछाया में देशी रजवाड़े रहते थे।''[७०] इस प्रकार राजनीतिक लोगोंने हिंदी के हित में कभी सोचा नहीं था।

व्यंग्यकार विदेशी प्रेम, और निम्न वर्गीय व्यक्ति व्दारा अंग्रेजी स्कूल में बच्चे पढ़ाने की मानसिकता आदि पर व्यंग्य करते हुऐ लिखते है, ''भारत में जहाँ अधिकांश लोक अपने घर में खण्डवा तक जाने का किराया नहीं जुटा पाए, उनके लिए इस विश्वभाषा का साथ जरूरी समझा गया है। क्या पत्ता, सुनिया धोबन के नंगे बच्चों को कब विदेश जाना पड़े तब यदि उन्हें अंग्रेजी नहीं थी तो वह शर्म की बात होगी।''[७१] इस प्रकार अंग्रेजी को लेकर विदेशी भाषा के आकर्षण पर व्यंग्य करते हुए सामाजिक दयनीयता का करूण चित्र खींचा गया है।

अपनी भाषा को हीन समझने और विदेशी भाषा को ही सब कुछ समझने की दयनीय स्थिति पर खेद प्रकट करते हुऐ राष्ट्र भाषा को लेकर अर्थ के वाद–विवाद पर व्यंग्यकार ने कटाक्ष किया है, ''भारत मे पहले एक भाषा थी। उस भाषा का देव भाषा बनते ही भारत में अनेक भाषाओं का राज्य राष्ट्रभाषा मानी राष्ट्र में बोली जानेवाली भाषा, मात्र भाषा के पश्चात् सब राजनैतिक भाषा–शास्त्री पितृ–भाषा की खोज में भी लगे हुए है।''[७२] ऐसी विषमता पर मजीठियाने व्यंग्य व्दारा क्षोभ प्रगट किया है।

अंग्रेजी के निष्कासन और हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाये जाने के बीच जो रूकावटे है, इस पर आघात करते हुए सीधी चोट व्दारा व्यंग्य करते है, ''हिन्दी के लेखक और लेखिकायें भी घरों में बच्चो से 'मम्मी डैडी' कहलाते है। पत्नियों को 'डार्लिंग' बुलाते है। बच्चों को अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ात है और अंग्रेजी में ही बात करते है। शादी–विवाह के निमंत्रण पत्रों को अंग्रेजी में ही बात करते है। शादी विवाह के निमंत्रण पत्रों को अंग्रेजी में छपवाते है। मृत्यू पर भी अंग्रेजी में रोना, मातृभाषा में रोने से कही प्रभावकारी है। अंग्रेजी में भले नाम भी अच्छे लगते है।''[७३] विदेशी भाषा के प्रति लगाव मानसिक दासता की निशानी है। इसी कारण राष्ट्रभाषा को आनेवाले दिनों में बड़ा खतरा है। जो देश के लिए भी खतरे से

खाली नहीं है। हिन्दी भाषा को पिछड़ा समझने की भावना जिस दिन समाप्त होगी उसी दिन मातृभाषा राष्ट्रभाषा का आसन ग्रहण कर सकेगी।

ब्लड बँक की अप्सरा में व्यंग्यकार ने हिन्दी की विचित्र स्थिति का सजीव चित्र खींचते हुऐ खिल्ली उड़ाई है, ''गुढ हिन्दी बोले मेरे दुश्मन। मै मो जेहरू परिवार वाली हिन्दी बोलती हूँ जो बाकी सब लोग चाहे समझ जायें, बस हिन्दी पढे- लिखे और हिन्दी बोलने वाले न समझते''.........''तुम बहक जाते हो। मैने पुच्छा था वह विषकन्या क्या होती है?''......'' पुराने जमाने में होती थी, उसे भी हिन्दी में विषकन्या ही कहेंगे। सरकार की सरल हिन्दी में जहर लौडिंया कहने से कोई नही समझेगा।''[७४] अभी तक राष्ट्रभाषा का कोई निश्चित रूप नहीं की विसंगतीपूर्ण अवस्थां पर व्यंग्यकारों ने खुब मात्रा में व्यंग्य किया है।

व्यंग्यकार ने शिक्षा-पध्दती को लेकर अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी शासन के प्रति कहते है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश की आवश्यकताओं के अनुसार इसमें आमुल परिवर्तन लाना चाहिए था। परिणाम यह निकला कि अंग्रेजी शिक्षा पध्दति के कारण आज का विद्यार्थी दिशाशून्य है, बेरोजगार है, इसपर कटाक्ष करते हुए वे कहते है।'' पंरन्तु इस देश में अंग्रेजी शासन की प्रतिष्ठा के बाद यहाँ की शिक्षा पध्दति को एकाएक ऐसा रूप प्राप्त हुआ कि इस देश का विद्यार्थी एक और तो अपने देश के संस्कारो से एकदम विच्छिन्न हो गया और दूसरी और पाश्चात्य साहित्य में प्राप्त बातों को उसने इस रूप से ग्रहण कर लिया माना ये उन देशो में अनादिकाल से चली आ रही है।''[७५] अंग्रेजी भाषा के शिक्षा पध्दति के कारण हम हमारी संस्कृती को भुल रहे है। एवं पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण कर रहे है। इसलिए भारतीय संस्कृति में टकराहट पैदा हो रही है।

अंग्रेजी भाषा को लक्ष्य करवा के अपने निबन्ध 'स्मार्टनेस का मूल्य' में कहते है '' देश मेरे बच्चे के समान अपनी बोली में छत्तीसों गीत गाता है और सरकार मेरी पत्नी के समान कहती है, 'बेटा यह नहीं'। वह स्कूलवाला अंग्रेजी गाना थँक्यू गॉड......! बच्चा गूँगा हो जाता है और चुपचाप हाथ जोडकर खडा हो जाता है। उसकी माँ फिर एवरी थिंग। और

बच्चा भुख निगलकर बडी कठिनाई से कह देता है, 'इंग' माँ ताली मार देती है अहा कितना स्मार्ट है। मै सोचता हुँ गांधीजी देखे तो शर्म आ जाये। स्मार्टनेस के पीछे देश का गूँगा कर दिया कम्बख्तोंने।''[७६] व्यंग्यकार कहता है अंग्रेजी चाहे लिखनी, पढनी, बोलनी न आती हो स्मार्टनेस का गुंग वही है। किस सीमा तक अंग्रेजी भाषा के दास बन गये है। इसको लक्ष्य किया है।

संक्षेप में देश में भाषा कि अनिश्चितता के साथ ही एक और बडी विकृति दूषित शिक्षा पध्दति के रूप में व्याप्त है। हिन्दी को मातृभाषा, राष्ट्रभाषा कहा जाता है। हिन्दी को समस्त देश की राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने की बात भी जिसमें राष्ट्रीय एकता को स्वरूप मिलता है। लेकिन अंग्रेजी चाहे लिखनी, पढनी, बोलनी न आती हो स्मार्टनेस का गुण वही है। रौबदाब उसीसे पडता है। किस सीमा तक अंग्रेजी भाषा के दास बन गये है। व्यंग्यकार ने विदेशी भाषा का खुलकर विरोध व्यंग्य के माध्यम से किया है।

अंतः स्पष्ट होता है कि भारतीय में विदेशीपण तथा विदेशी वस्तुओं के प्रति अधिक मोह बढ गया है। यह धारणा बज रही है कि, खान–पान, रहन–सहन, वेश–भूषा तथा विदेशी भाषा का प्रतिदिन प्रयोग करने से शानो–शौकत में चार चाँद लग जाते है। भारतीय संस्कृति का रूप एकदम से विदेशी साँचे में ढल गया है कि विदेशी संस्कृति एवं सभ्यता का अंगीकार कर लेना ही आज का आचरण बन गया है। रहन–सहन में विदेशीपन आया है, बंगला, कार, मोबाईल, कलर टि.व्ही., व्ही.सी.आर युक्त व्यक्ती को प्रतिष्ठित माना जाने लगा है। भारतीय ग्राम हो या शहर समाज में विदेशी वेश–भुषा का अनुकरण किया जा रहा है। युवतींयो की हेअर स्टाईल आये दिन बदल रही है। साडी से सलवार, कुर्ता, फिट जीन्स, पॅन्ट–शर्ट आदि में प्रतिदिन परिवर्तन दिखाई देता है। विदेशी खान–पान (क्लब में शराब पीना, विदेशी डान्स करके लडकियों के कमर में हाथ डालकर झुमना, यह विदेशी क्लब संस्कृति ऊँची सोसायटी की नंगी सभ्यता के अड्डे बन गयी है। परिणाम स्वरूप भारतीय समाज का सांस्कृतिक ढाँचा चरमराने लगा है। संस्कृति बनाने की जगह बिगड रही है।

निष्कर्ष :

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण तो हमारी संस्कृति ऱ्हास की ओर जा रही है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव वश चरमरा रही है। आज पाश्चात्य संस्कृति का इतना प्रभाव दिखाई देता है। भारतीय कला, संगीत, नयी एवं पुरानी सांस्कृतिक मान्यताओं में परस्पर टकराव हो रहा है। व्यंग्य का सृजन भी उस समय होता है, जब विसंगतियाँ पैदा हो जाती है। तब व्यंग्यकारों की लेखनी से व्यंग्य ही वैदग्ध्यपूर्ण तीखी अभिव्यक्ति होती है। इसलिए व्यंग्य और संस्कृति का संबंध जब से संस्कृतियों में विसंगतियों पैदा हो रही है, तब से व्यंग्य और संस्कृति का संबंध आता रहा है एवं आता रहेगा।

संस्कृति बनने और बिगडने में चलचित्र (फिल्म) का प्रभाव बहुत बडा है। सच्चाई यह है कि, आज के चलचित्र में अपराध, मारधाड, सेक्स, वासनापूर्ती के प्रदर्शन मात्र बन गये है। विदेशी थीम को लेकर उसका भारतीयकरण करके उसे विकृत रूप में प्रस्तुत किया जाता है। सिनेमा के कारण देश के लडके–लडकियाँ आजकल दस बरस की अवस्था में यौवन का अनुभव करने लगे है। इससे संस्कृति बनने कि अपेक्षा अधिक बिगडती जा रही है। संस्कृति मानव समाज की आन्तंरिक उपलब्धियों की सुचक है, तथा आचार–विचार, उन्नती–अवन्नती, रिती–रिवाज, धार्मिक–राजनीतिक एवं सामाजिक अवस्थाओं तथा परम्पराओं की परिचायक है।

दूरदर्शन समाज को प्रभावित करनेवाले सबसे प्रभावी माध्यम के रूप में आज अपनी भूमिका निभा रहा है। इसे छोटे परदे पर दिखाए जाने वाले कार्यक्रम तथा विज्ञापन का जो प्रभाव समाज पर दिखाई देता है। इससे भारतीय संस्कृति को सुधारने की जगह संस्कृति बिगाडने में बडा योगदान दिखाई देता है कि सांस्कृतिक चेतना हमारे जीवन एवं व्यक्तित्त्व का सुंदर, समृध्द और सार्थक बनाती है।

आज की वर्तमान युवा पीढी आधुनिक बनने की होड में अपने आपका भद्दा प्रदर्शन मात्र करती है। इसमें विकसित सोच की कमी दिखाई देती है। नारी भी आधुनिकता के

नामपर फॅशन नही अपने आप पर अत्याचार कर रही है। सुन्दर दिखने के लिए दुबला पतला होना अनिवार्य मानकर न खा सकती है। न कोई अच्छा कार्य कर सकती है। फॅशन प्रियता के कारण संस्कृति बिगडती जा रही है। भारतीय संस्कृति की पाचन–शक्ती अत्याधुनिक बलवती रही है। जहाँ अन्य–संस्कृतियाँ आकर और प्रभाव डालकर भी उसी में समाहित हो गई। यही भारतीय संस्कृति का मूल रहा है।

आज के दिनों में नये पत्रिकाओं का जन्म होने लगा है और उसी तेजी से उनका लोपन भी होने लगा है। पत्र–पत्रिकाओं को चलाने के लिए नये–नये हथकण्डे अपनाये जाने लगे है। पत्र–पत्रिकाएँ यह माध्यम भी अपनी संस्कृति बिगाडनेवाले माध्यम कहा जाने लगा है। पत्र–पत्रिकाओं के कारण संस्कृति बनने की जगह बिगडती जा रही है।

आधुनिकता के आगमन के साथ–साथ स्त्रियों में बदलाव आया है। आर्थिक क्षेत्र में स्वावलंबिता के कारण उन्हें आजादी मिली है। परिणामतः अधिक मात्रा में बाहरी परिवर्तन आया है। क्लब, डिनर, पार्टी, लंच का जमाना आ गया है। स्वार्थ सिध्दी के लिए नारीयों का उपयोग करने का शिष्ट साधन बन गया है, इसके कारण समाज में अवैध यौन संबंध की मात्रा अधिक देखी जाती है। आधुनिकतापण के कारण संस्कृति चरमराने लगी है।

समाज में नारी को एक और पूज्य स्थान दिया जाता है। उसे माँ, बहन, पत्नी, और बेटी का रूप दिया जाता है, तो दूसरी और उसको विकृत करके विज्ञापनों में प्रदर्शित किया जाता है। हवाई यात्रा से लेकर ब्लेड तक के विज्ञापनों में नारी–शरीर का प्रदर्शन परमावश्यक बन गया है। अधिक से अधिक कामुक और वासनोत्तेजक मुद्राओं में नारी को विज्ञापन में प्रर्दशित किया जाता है। नारी की यह स्थिति अत्यंत सोचनीय बन गयी है। जिसके कारण संस्कृति बिगडती जा रही है।

भारतीय संस्कृति पर बाह्य आडम्बर युक्त थोथी संस्कृति हावी हो गयी है। आज नयी पीढी का रूखा–सूखा चेहरा, सायबर या कॉफी हाऊस में अड्डेबाजी करनेवाला तथाकथित बौध्दिक वर्ग संत्रस्त है, कुंठाग्रस्त है, उस दम को बचाने के लिए तरह–तरह के

नशे चल रहे है। इन्हें अपने देश की सभ्यता और संस्कृति की सुदृढ बुनियाद की कोई खबर नहीं है क आज–कल की सभ्यता की नींद टुँटती हुई दृष्टिगोचर होती है।

भारतीय समाज में विदेशीपन तथा विदेशी वस्तुओं के प्रति अधिक मोह बढ गया है। यह धारणा बन रही है कि, यदि खान–पान, रहन–सहन, वेशभूषा तथा विदेशी भाषा का प्रतिदिन प्रयोग करने से शानो–शौकत में चार चाँद लग जाते है। भारतीय संस्कृति का रूप एकदम विदेशी साँचे में ढल गया है। विदेशी संस्कृति को अंगीकार कर लेना ही आज का आचरण बन गया है।

प्राप्त परिस्थिति को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि, सांस्कृतिक ढाँचा यदि चरमरा जाता है। तो देश कि स्थिति को बिगडने में देर नहीं लगती।

आज के सांस्कृतिक ढाँचे को व्यवस्थित बनाये रखने के उद्देश्य से व्यंगकारोंने बिगडनेवाले घटकों पर व्यंग्य किया है। और संस्कृति को बचाने की डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने चेतावनी दी है। उन्होने व्यंग्य से सांस्कृतिक चेतना में आपना योगदान दिया है।

संदर्भ ग्रंथ

१) सर मोनियर विल्यम संस्कृत, इंग्लीश डिक्शनरी, पृष्ठ ११२०

२) हिन्दी विश्वकोश, खंण्ड –१२ पृ.१४

३) हिन्दी साहित्य कोश भाग पृ.सं. ८०१–८०२

४) सिंह रामधारी दिनकर –संस्कृति के चार अध्याय, भुमिका से

५) डॉ. राधाकृष्णन – स्वतंत्रता एवं संस्कृति, पृ.४३

६) द्विवेदी हजारी प्रसाद : अशोक के फुल, पृ.६४

७) सिंह जवाहरलाल –भगवती चरण वर्मा के उपन्यास और युग चेतना, पृ. २५३,२५४

८) पाण्डेय गणेश – समाजशास्त्र के सिध्दांत, पृ.सं.१२३

९) पाण्डेय गणेश – समाजशास्त्र के सिध्दांत, पृ.सं.१२३

१०) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें पृ.सं.९९

११) कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोण पृ.सं.४४

१२) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध पृ.सं. १४३

१३) घोंघी लतिफ – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें पृ.सं.११५–११६

१४) कोहली नरेन्द्र – आधुनिक लडकी की पीडा पृ.सं.१४३

१५) सुरीवाला रोशनलाल – ये माँगनेवाले पृ.९०

१६) धर्मयुग, १७ जुलाई १९९७, पृ.१४

१७) कोहली नरेन्द्र – पाँच एब्सर्ड उपन्या पृ.सं.१४३

१८) राय अमृत – विजीट इंडिया, पृ.२०

१९) चतुर्वेदी गोपाल – खंभो का खेल, पृ.५९

२०) कला नन्दलाल, परसाई हरिशंकर और नागफनी की कहानी पृ.४०

२१) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध पृ.सं.१२३

२२) त्यागी रविन्द्रनाथ – भित्ती चित्र, पृ.४४

२३) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध पृ.सं.१२३

२४) जोशी शरद – यथासंभव, पृ.१९३

२५) पुणतांबेकर शंकर – विजीट यमराज की, पृ.१७१

२६) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें पृ.सं.२१२

२७) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.सं.२१२

२८) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ.सं.१२१

२९) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.सं.९९

३०) कोहली नरेन्द्र – ''काटने की संस्कृति'' त्राहि–त्राहि, पृ.सं.९९

३१) तिवारी बालेन्दु शेखर – इक्सवी सदी में व्यंग्यकार, पृ.२४

३२) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.सं.१४६

३३) त्यागी रविन्द्रनाथ – फुलोंवाला कँक्टस, पृ.५६

३४) कोहली नरेन्द्र – पाँच एब्सर्ड उपन्यास, पृ.सं.४

३५) जोशी शरद – मुद्रिका रहस्य, पृ.१३७

३६) सक्सेना के. पी. – नया गिरगिट, पृ.२१

३७) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.सं.१११

३८) चतुर्वेदी बरसानेलाल – मुँच्छ पुराण, पृ.३९

३९) कोहली नरेन्द्र – समग्र व्यंग्य, पृ.सं.११४

४०) त्यागी रविन्द्रनाथ – अतिथि कक्ष, पृ.८७

४१) कोहली नरेन्द्र – आधुनिक लडकी की पीडा, पृ.सं.०९

४२) जोशी शरद – यथा संभव, पृ.१३७

४३) त्यागी रविन्द्रनाथ – अतिथि कक्ष, पृ.७८–७९

४४) गुप्त कमल – मैकाले का भूत, पृ.७४

४५) कोहली नरेन्द्र – प्रथम पृष्ठ का समाचार, पृ.सं.१०८

४६) कोहली नरेन्द्र – प्रथम पृष्ठ का समाचार, पृ.सं.१०९

४७) चतुर्वेदी बरसानेलाल –पत्रकारजी नमस्ते, पृ. १९४

४८) परसाई हरिशंकर – ठिठुरता हुआ गणतंत्र, पृ. ८७

४९) मजीठिया सुदर्शन – कुछ इधर कुछ उधर की, पृ.२२

५०) मजीठिया सुदर्शन – मुख्यमंत्री का डण्डा, पृ.२७–२८

५१) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ.सं.१४३

५२) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ.सं.१२०

५३) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.सं.१०१

५४) कोहली नरेन्द्र – पवित्रता के रक्षक, पृ.सं.७१९

५५) कोहली नरेन्द्र – पवित्रता के रक्षक, पृ.सं.७२०

५६) परसाई हरिशंकर – पगण्डियो का जमाना, पृ.८७

५७) मजीठिया सुदर्शन – टेलिफोन की घण्टी से, पृ.२२

५८) परसाई हरिशंकर –मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.१५४

५९) त्यागी रविन्द्रनाथ – मलिनाथ की परम्परा, पृ.७९

६०) परसाई हरिशंकर – अपनी अपनी बिमारी, पृ.८७

६१) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ.सं.२३

६२) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.सं.११७

६३) कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनायें, पृ.सं.१०१

६४) कोहली नरेन्द्र – समग्र व्यंग्य एक, पृ.३४

६५) कोहली नरेन्द्र – समग्र व्यंग्य एक, पृ.१५९

६६) पुणतांबेकर शंकर – विजीट यमराज की, पृ.४९

६७) त्यागी रवीन्द्रनाथ – प्रतिनीधी रचनाएँ पृ.८१

६८) कोहली नरेन्द्र – गणतंत्र का गणित, पृ.३४

६९) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ.सं.३५

७०) चौधरी धनराज – गौतम बुध्द और लाल तिकोन, पृ.६२

७१) कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ.सं.१०१

७२) परसाई हरिशंकर – और अन्त में, पृ.६८–६९

७३) कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोन, पृ.सं.३६

७४) द्विवेदी हजारी प्रसाद – विचार प्रवाह, पृ.१८३

७५) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ.सं.४६

७६) कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, पृ.सं.९८

५.०. प्रस्तावना :

आज जीवन के हर क्षेत्र को राजनीति ने प्रभावित किया है। राजनीतिक जीवन में यत्र–तत्र–सर्वत्र व्याप्त है। स्वातंत्र्योतर काल में राजनीति ज्यादा कलुषित हुई है। स्वातंत्र्यपूर्व काल में अंग्रेज शासन थे। राजनीति के सूत्र अंग्रेजो के हाथ में थे। अंग्रेजी सत्ता के विरोध में देशवासियों में देशभक्ति की भावना निर्माण करने में व्यंग्य का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। देशभक्ति की भावना से पारतंत्र्य की श्रृंखलाए तोड़कर हम आजाद हुए परन्तु स्वातंत्र्योत्तर काल में राजनीतिक विसंगतियाँ अत्याधिक बढ़ गयी है।

राजनीतिक लोगों ने प्रजातंत्र को भोंदुतंत्र बना दिया है। एक बोतल शराब पिलाकर या दस का नोट अदा कर सबेरे अपने पक्ष मे मतपत्र डाल दिया जाता है। राजनीतिक न्याय देवता को खरीदकर जेब में रखकर धूम रहे है। राजनेता करोंडो का घोटाला कर के खुले आम लोगों के सामने घूमते रहते है। उनके राजनेता संसद भुवन में सवाल पूछने के लिए लोगों से पैसे लेते हैं, इतनी गन्दगी राजनीति में फैली है कि, उसको नष्ट करने के लिए कई बरस लगने वाले है। राजनेता बनने के लिए कोई न योग्यता होती है, न पात्रता। कोई अगर बेकार रह जाता है, या उसे किसी तरह से अपना रोजगार जुटाने में कठिनाई लगती है, परन्तु वह भाषण देने की कला सीख जाये तो बिना किसी प्रयास के वह नेता बन जाता है। और तब वह परिवार के परवरिश की समस्याओं से मुक्त हो जाता है। उसके खोकले आश्वासन जनता को प्रभावित करते लग जाते हैं। जनता को अपने वादों में फँसाकर आगे बढ़ने की कला वह सीख जाता है। धीरे–धीरे वह एक–एक सीढ़ी चढ़ने लगता है। आज राजनीति का यह स्वरूप है।

आज राजनीति क्षेत्र में भ्रष्टाचार आज कोई नया विषय नहीं है। हर नेता दूसरे नेता को भ्रष्टाचारी सिध्द करने का पूरा प्रयत्न करता है। फिर भी नेता अगर भ्रष्टाचार को छोड दे तो फिर वह नेता ही न रहे वह कोई साधू संत हो जायेगा। आज धार्मिक भेदभाव बढ़ गये है, साम्प्रदायिक दंगे भड़क रहे है, भाई–भतीजावाद बढ़ गया है। जनसामान्य को इतनी

समस्याओं ने घेरा है कि, उसे साम्प्रदायिक दंगो, मारपीट से कोई लगाव नहीं किन्तु नेता उन्हें चुप बैठने नहीं देते। सारा प्रशासन जनतंत्र छल्–छद्म से दूषित हो गया है। सत्ताधारी मंत्री, संसद एवं विधान भवन, चुनाव, चुनाव के हथकंडे ने पूरी सीमाओं को पार कर दिया है। राजनीति में दल बदल, विपक्ष दल हास्यकोटी को पार कर चुके हैं। इसी कारण राजनीति हास्यस्पद बन गयी है। राजनीतिक विसंगतियों का परिणाम जनसामान्य को भुगतना पड़ता है। इस प्रकार राजनीति में जब विसंगतियाँ पैदा होती है तब व्यंग्य और राजनीति का संबंध गहरा बन जाता है। तब व्यंग्यकार अपनी लेखनी से राजनीति पर तीर छोड़ते है। इस प्रकार व्यंग्य और राजनीति का संबंध पानी और प्यास जैसा बन जाता है।

व्यंग्यकार ऐसी राजनीति से बहुत ही असंतुष्ट है, इसलिए अपने व्यंग्य साहित्य में 'हमरा को वोट दो' में कहते है, चाहे शासन पक्ष हो या विरोधी पक्ष हर एक को अपनी कुर्सी की चिन्ता लगी रहती है। एक बार कुर्सी हाथ आ जाये फिर वे हर कठिनाई से निश्चिंत हो जाते है। कुर्सी पर जब तक जमे रहते है, लक्ष्मीजी की कृपा दृष्टि होती है। इस सत्य का पर्दाफाश करते हुए डॉ. कोहली जी लिखते है, ''हम उनको देखने क्यों जाएँ, वो कोई हमरा वोट देता है। हम तो उसको ही देखने जाएँगे, जो हमको वोट देगा।''[१] मंत्री लोग मनुष्य को देखने नहीं जाते, वे वोट को देखने जाते है। इतना सच बोलने का साहस है किसी में?

इस प्रकार व्यंग्य और राजनीति का गहरा संबंध होता है। सारा शासन तंत्र छल्–छद्मसे दूषित हो गया है। जिससे राजनेता तथा राजनीति दोनों कभी हास्यस्पद बन जाते, कभी उनकी पोल खुलती है, लेकिन अधिकतर राजनीति विसंगतियों का परिणाम जनसामान्य को भुगतना पड़ता है।

५.१. राजनीति का अर्थ क्या है?

प्राचीन भारत में राजनीति सत्ता की अवधारणा की कोई सर्वसामान्य परिभाषा स्पष्ट रूप से सामने नहीं आयी है, जैसा कि, वर्तमान चिंतन में उसका प्रयाग किया जाता

है। परन्तु यह राजनीतिक चिन्तन की मौलिक समस्या है। अर्थशास्त्र में इस समस्या के समाधान के लिए अप्रत्यक्ष रूप से संकेत अवश्य किया गया है। इस शब्द को परिभाषित करने के लिए अलग–अलग दृष्टिकोन को अपनाया है। बहुत से आज के युग के विचारक शक्ति और सत्ता को एक दूसरे का पर्याय समझने की भूल कर देते है।

डॉ. शिवप्रसाद भारव्दाज शास्त्री 'मानक हिन्दी शब्द कोश' में राजनीति की परिभाषा इस प्रकार देते है, ''राज्य की वह नीति जिसके अनुसार प्रजा का शासन और पालन तथा दूसरे राज्यों से व्यवहार होता है (पॉलिटिक्स)''[२] राजनीति के अनुसार लोगों का शासन एवं पालन तथा अन्य राज्यों से व्यवहार राजनीति के अनुसार किया जाता है इसे शिवप्रसाद भारद्वाज शास्त्री ने राजनीति कहा है। प्राचीन भारत में धर्म का दृष्टिकोन बहुत व्यापक कहा है। सत्ता की उत्पत्ति कहा है। प्राचीन भारत में धर्म का दृष्टिकोन बहुत व्यापक है। सत्ता की उत्पत्ति संबंधी अध्याय में इसकी चर्चा की गई है। फिर भी इन आलोचनाओं का उत्तर हम १९६६ ई. में. प्रकाशित पी. एन. बॅनर्जी की 'पब्लिक ऐडमिनिस्ट्रेशन इन एंशिएन्ट इण्डिया' के माध्यम से दे सकते है। जिसमें उन्होंने कहा है कि, ''प्राचीन शासन पध्दति को संवैधानिक राजतंत्र की संज्ञा दी जा सकती है, यह सचिवतंत्र था।''[३] प्राचीन भारत में जिसे राजनीति एवं राजतंत्र की संज्ञा दी जाती थी वह सिर्फ सचिवतंत्र ही था।

राजनीति एक अविरल, कालातीत सतत परिवर्तनशील और सार्वजनिक कार्यकलाप हैं। जिसकी महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति 'विषमावस्था' आ पड़ने पर उसका समाधान करने के लिए निर्णय करने में होती है। यह ''एक विशेष प्रकार की क्रिया, मानव व्यवहार के रूप में से प्रवाहित होती है।''[४]

इसका निर्देश उस निर्णय– निर्माण से है, जिसमें कुछ–ना–कुछ राजनीतिक कार्यकलाप होता है। यह दूसरी बात है कि राज्य–वैज्ञानिक 'राजनीतिक कार्य' की व्याख्या

अपने–अपने तरीके से करते है। जिससे उन्हे रूढ़िवादी, परम्परावादी अथवा आधुनिकतावादी कहा जाता है।

'राजनीति' शब्द के तीन अर्थ है – राजनीतिक कार्यकलाप, राजनीति की प्रक्रिया और राजनीतिक सत्ता। राजनीतिक कार्यकलाप के अन्तर्गत प्रयास आते है, जिनसे विरोध की स्थितियों से निर्माण और समाधान ऐसे ढंग से किया जाता है, जिससे सत्ता के लिए संघर्ष में रत लोग अपने हितों की यथासम्भव रक्षा कर सके।

'राजनीतिक प्रक्रिया' राजनीतिक गतिविधि की भावना का विस्तार है। यहाँ उन सभी अभिकरणों की भूमिका का महत्व है जिनकी निर्णय निर्माण प्रक्रिया में कुछ भूमिका है। अतः राजनीति के अध्ययन को इस प्रकार व्यापक कर दिया जाता है ताकि 'राज्येत्तर अभिकरणों' को इसके अन्तर्गत लिया जाए। जिस तरीके से समूहों और संघों का परिचालन किया जाता है। उसका अध्ययन करने से हमें पता चलेगा कि वे सत्ता के लिए संघर्ष की प्रवृत्ति से मुक्त नही है। उनकी भी आंतरिक सरकारें होती है, जो उनके आंतरिक विरोधों और तनावों को निपटाती है। हमारे प्रयोजन के लिए चीज का महत्व है। वह यह है कि 'राज्येत्तर' संगठन अपने विशिष्ट हितों के प्रतिरक्षण और संवर्धन के लिए देश की सरकार को प्रभावित करते है। इस प्रकार, इन समुहों और देश की सरकार के बीच अन्तः क्रिया की अती तीव्र प्रक्रिया घटित होती है। फाइनर ने ठीक कहा है कि, अन्य समूहों से प्रतियोगिता में एक गैर–सरकारी संगठन की सफलता की आशा बहुत ही अधिक बढ़ जाती है, अगर राज्य की पूरी शक्ति सरकार के माध्यम से लागू करके उसके पीछे लगा दिया जाए। ऐसा होता है कि, यदि एक बार राज्य के ढाँचे के भीतर यह प्रतिस्पर्धा आरम्भ हो गई, जो अन्यथा एक गैरसरकारी समूह की दूसरे समूह से संघर्ष की स्थिति होनी चाहिए, तो वह अन्य समूहों के साथ सार्वजनिक प्रतियोगिता बन जाती है। इसका उद्देश या तो सरकार पर कब्जा कर अपनी नीति प्रवर्तित करना अथवा आगे बढ़कर समुच्चय को, जिनसे राज्य के भीतर रहनेवाले गैर–सरकारी संगठन, सरकार को प्रभावित करने की कोशिश करते है,

अथवा सरकार व्दारा नीति निर्माण या सरकार बनने की क्रिया में भाग लेते है, 'राजनीतिक प्रक्रिया' कहा जाता है।

राजनीति को 'वर्नोन वान डायन' ने निम्नलिखित परिभाषित किया है–

१) यह उन इच्छाओं से संचलित होती है, जिनकी कुछ सीमा लोगों में भागीदारी होती है।

२) यह एक प्रक्रिया है जो समूहों मे या उनके बीच होती रहती है।

३) इस क्रिया का एक अनिवार्य लक्षण यह है कि, अभिनेताओं का संघर्ष ध्येय इच्छाओं की पूर्ति से है।

४) जिसका ध्येय इच्छाओं की पूर्ति से है।

५) या उन लोगों के विरोध से है, जिनकी विविध इच्छाएँ होती है। अधिक संक्षिप्त रूप में, राजनीति की परिभाषा अभिनेताओं के बीच ऐसे संघर्ष से की जा सकती है जो सार्वजनिक विषयों पर विरोधी इच्छाओं को धारण करते हैं।

६) जिसका सम्बन्ध समूह नीति, संगठन, समूह नेतृत्व या अंतःसमूह सम्बधों के व्यवस्थापन से है।''[५]

राजनीति सत्ता और उसके उपयोग के बार में एक संगठित विवाद है जिसमें प्रतियोगी मूल्यों, विचारो, व्यक्तियो, हितों और माँगो के बीच पसन्द अथवा अभिमान्यता निहीत होती है। राजनीति के अध्ययन का सम्बन्ध उस तरिके के विवरण और विश्लेषण से है, जिससे सत्ता प्राप्त की जाती है। उसका उपयोग किया जाता है। जिस तरिके से निर्णय लिए जाते है, वे कारक जो निर्णयों के निर्माण को प्रभावित करते है, उसे राजनीति कहा जाता है।

५.२. राजनीति के विभिन्न अंग :

संसदीय प्रजातन्त्र के अन्तर्गत राजनीतिक प्रजातन्त्र, चुनाव, राजनीतिक दल, सत्ताधारी दल, विपक्षी दल, संसद भवन, प्रधानमंत्री, मंत्रालय, सचिवालय और शासन व्यवस्था आदि अंग समाविष्ट है। भारत एक प्रभुता सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य है। चुनाव प्रक्रिया से लोग अपना नेता चुनते है। राजनीतिक दल अपने सिध्दांतों के अनुसार शासन चलाने के लिए प्रयत्नशील होते है, अपने संयुक्त प्रयत्नों व्दारा सरकार पर भी नियंत्रण करते है। प्रजातंत्र की सफलता के लिए विपक्ष दल का होना अत्यंत आवश्यक है। संसद भवन में लोकसभा और राज्यसभा क्षेत्र से निर्वाचित सदस्य होते है, जो देश के विकास की दिशा तय करते हैं। मंत्रालय का मुख्य कार्य राष्ट्रीय नीति का निर्धारण करना है। सचिवालय का मुख्य कार्य सदन की कारवाही का सही–सही रिपोर्ट तैयार, करना है। इस प्रकार भारतीय प्रजातन्त्र के अनुसार कार्य करते है। इस प्रकार भारतीय प्रजातन्त्र के अन्तर्गत राजनीति के भिन्न–भिन्न अंग हैं। डॉ. नरेन्द्र कोहजी ने इनके अन्तर्गत होनेवाली बुराइयों को व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है। इनकी बुराइयों पर चोट करते हुए चेतानवी देने का प्रयत्न भी किया है।

५.२.१. राजनीतिक दल :

राजनीतिक दल प्रजातंत्र के लिए लाभप्रद हैं या हानिकारक इस विषय पर विभिन्न राजनीतिक विचारकों के विभिन्न दृष्टिकोन हैं। परन्तु इस तथ्य से सभी सहमत हैं कि आज के युग में राजनीतिक दल प्रजातंत्रात्मक शासन प्रणाली के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। आज के विशाल राष्ट्र में प्रत्यक्ष प्रजातंत्र सफल नहीं हो सकते, इसीलिए अप्रत्यक्ष प्रजातंत्र लोकप्रिय हो रहे हैं। अप्रत्यक्ष प्रजातंत्र शासन के स्वरूप का चुनाव जनता व्दारा होता है। निर्वाचन को संगठित करने के लिए राजनीतिक दल आवश्यक है।

५.२.२. प्रजातन्त्रः

भारतीय संविधान के अनुसार भारत एक प्रभुसत्ता सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य है, जिसमें समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय का आश्वासन दिया गया है। अभिव्यक्ति, विचार, निष्ठा, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता दी गयी है। भारत में संसदीय प्रजातन्त्र के अन्तर्गत संघ की संसद और राज्य के विधान मण्डल निर्वाचन व्दारा गठित किये जाते हैं। भारतीय संघ की कार्यपालिका का प्रधान राष्ट्रपति होता है और राज्यो की कार्यपालिकाओं के प्रधान राज्यपाल होते हैं। परन्तु वास्तविक कार्यपालिका प्रधानमंत्री और उसके मंत्रिमंडल तथा मुख्यमंत्री और उसके मंत्रिमंडलों में निहीत होती है। लोकसभा में बहुमत पार्टी का नेता प्रधानमंत्री होता है, जिसकी व्यावहारिक रूप से नियुक्ति राष्ट्रपति करता है और मंत्रिमंडल की नियुक्ति प्रधानमंत्री करता है और मंत्रिमंडल की नियुक्ति प्रधानमंत्री की सलाह से राष्ट्रपति करता है।

प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल का उत्तरदायित्व लोकसभा के प्रति होता है। संक्षेप में जनशक्ति का प्रतीक राष्ट्रपति न होकर प्रधानमंत्री और उसका मंत्रिमंडल होता है। वही सारी नीतियाँ निर्धारित करता है। और प्रशासन चलाता है। जितने भी विधेयक संसद पास करती है, उनमें से लगभग सभी सरकार व्दारा पारित किये जाते है। दिन–प्रतिदिन का प्रशासन सरकारी कार्यालयों के व्दारा चलाया जाता है। यह नीति मंत्रिमंडल व्दारा निर्धारित की जाती है। प्रशासन यद्यपि सरकारी कर्मचारी चलाते है, परन्तु उत्तरदायित्व समस्त मंत्रिमंडल का होता है। ऐसी शासन व्यवस्था में प्रधानमंत्री को असीम शक्तियाँ और विशेषाधिकार निहित होते है। जब तक उसकी पार्टी का संसद में बहुमत होता है, तब तक वह अपनी पार्टी का नेता होता है।

भारत में अनेक पक्षों की बहुलता है, जिससे प्रजातन्त्र है। जनता के प्रतिनिधि चुने जाने के पश्चात वे जनता को भूल जाते है। यह बहुत बडी विडम्बना ही है। गांधीजी के विचारों की अवहेलना करके मंत्री और विधायक उसी ठाठ–बाट से रहत है, जैसे अंग्रेजी

राज्य के शासक रहते थे। इन्होनें वही आचार व्यवहार और रहन–सहन के ढंग अपनाने शुरू कर दिये है। इसलिए प्रजातन्त्र में विसंगतियों ने विकृतियों ने, विषमताओं ने, अन्याय और दुर्बलताओं ने स्थान पा लिया है, जिस पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है।

५.२.३. विपक्ष दल :

विपक्ष दल प्रजातंत्र में विकल्पीय सरकार प्रस्तुत करते है। यह संसदीय लोकतंत्र के रथ के पहिए के भाँति है। दल उसका एक पहिया है, तो विपक्षी दल दूसरा पहिया है। प्रजातंत्र की सफलता के लिए आलोचक दल का होना अत्यंत आवश्यक है। जहाँ एक दल सरकार बनाकर शासन चलाता है वहाँ विरोधी दल उसकी आलोचना करके उसे सचेत करते है। राजनीतिक दल जनता और सरकार के लिए सामन्वय स्थापित करने के लिए कड़ी का कार्य करते हैं। विपक्षी दल मनमानी पर रोक लगाकर उसे तानाशाह होने से रोकते हैं। राजनीतिक दल जनता में राजनीतिक सजगता उत्पन्न करते हैं, तथा सकरार के कार्यो एवं नीतियों की सफलता असफलताओं का लेखा–जोखा जनता के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। संक्षेप में विपक्षी दल आधुनिक प्रजातंत्र को सफल बनाने के लिए अत्यावश्यक है।

प्रजातंत्र की सफलता समर्थ विपक्षी दल में होती है। चुनाव में जिस पार्टी के प्रतिनिधी कम चुनकर आते है, उसे विपक्षी दल में बैठना पड़ता है। विपक्षी दल अगर समर्थ होता है, तो सत्ताधारी पार्टी कामकाज अच्छी तरह से करती है। विपक्षी दल अगर असमर्थ होगा तो , सत्ताधारी पार्टी जो मन में आये वह निर्णय लेकर भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद को बढ़ावा दे सकती है। इसलिए विपक्षी दल की प्रजातंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका होती है, और आवश्यकता भी होती है।

५.२.४. संसद भवन या विधानभवन :

संसद भवन को विधि निर्माण का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। जिसमें लोकसभा, राज्यसभा और राष्ट्रपति का समावेश है। दोनों सदनों के व्दारा स्वीकृति होने के बाद राष्ट्रपति की स्वीकृति बिल के लिए आवश्यक है। लोकसभा से कम शक्तियाँ प्राप्त है कि संविधान के अनुच्छेद १०९ के अनुसार धन विधेयक राज्यसभा में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। संसदीय शासन प्रणाली का आधारभूत निगम कार्यपालिका का व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायित्व है। उनका बड़ा उत्तरदायित्व जनता की शिकायतों को सरकार तक पहुॅचाना है और यह कार्य वह लोकसभा में करते है। विभिन्न सदस्य जिन निर्वाचन क्षेत्रों से आते है, उस क्षेत्र की शिकायतों को लोकसभा के सामने प्रस्तुत करते है, तथा सरकार उसे विकसित कर सकते है। संसद के कुछ अन्य कार्य इस प्रकार है। जो लोकसभा और राज्यसभा मिलकर राष्ट्रपति पर महाभियोग लगा सकती है। उपराष्ट्रपति को उस के पद से हटाने के लिए यदि राज्यसभा प्रस्ताव पास कर दे तो लोकसभा उसका अनुमोदन करती है। लोकसभा और राज्यसभा मिलकर सर्वोच्च व उच्च न्यायाधीश के न्यायाधीशों के विरूध्द महाभियोग प्रस्ताव पास कर सकती है।

संसद भवन देश का सर्वोच्च अंग है। इनमें लोकसभा जनता का प्रतिनिधि सदन होने के कारण संसद का महत्वपूर्ण शक्तिशाली एवं प्रभावशाली अंग है। राज्यसभा भारतीय संसद का व्दितीय सदन है। राज्यसभा का निर्माण संघीय प्रणाली की आवश्यकता को पूर्ण करने तथा सम्मानित वाद–विवाद का अवसर प्रदान करने के लिए किया गया है। संसद भवन के दोनों भी सदन महत्वपूर्ण है। जो जनता की समस्या को सुलझाने का कार्य करते है।

भारतीय गणतंत्र प्रणाली में देश की केंद्रीय सत्ता के साथ–साथ राज्यों की सत्ता को स्वीकृत किया गया है। केंद्रीय सत्ता के लिए जैसे संसद भवन है वैसे राज्यों के लिए विधान भवन है। विधान भवन की रचना में विधानसभा, विधान परिषद ये दो गृह (सदन) है

और उनके उपर राज्यपाल होता है। राज्य की सत्ता इन तीनों के नियंत्रण में चलती है। विधान सभा बैठनेवाले सदस्य सीधे जनता से चुनकर आते है तो विधान परिषद के सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से ओते है। इस सदन में जिस दल का बहुमत होता है उसकी सत्ता कार्य करती है, तो जिनका पक्ष सत्ता से दूर विपक्ष होता है उनका नेता विरोधी पक्ष नेता बनता है। राज्य से संबंधित कानून करने का अधिकार इसी सदन का होता है परन्तु कानून तभी लागू होता है जब से दूसरे सदन की और राज्यपाल की अनुमति प्राप्त होती है।

५.२.५. प्रधानमंत्री/मुख्यमंत्री :

संविधान के अनुसार राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है, ऐसा लगता है कि, राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति अपनी इच्छा अथवा रूचि के अनुसार कर सकता है, लेकिन वास्तविकता इससे पूर्णतः भिन्न है। इस संबंध में राष्ट्रपति की शक्ति अत्यंत सीमित है। संसदीय प्रणाली का आधार मंत्रिमण्डल का संसद के प्रति उत्तरदायित्व है। केवल वही व्यक्ति इस उत्तरदायित्व को संभालते हुए सरकार के कार्यों को सफलतापूर्वक कर सकता है, जिसे लोकसभा में बहुमत का विश्वास प्राप्त हो। दूसरे शब्दों में, केवल वही व्यक्ति प्रधानमंत्री पद का अधिकारी हो सकता है, जो लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल का नेता है। अतः राष्ट्रपति इस बात के लिए मजबूर है, कि आम चुनाव के बाद जब नए मंत्रिमण्डल का गठन करता हो तो वह लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को ही प्रधानमंत्री पद के लिए आमंत्रित करे। इस पध्दति से राज्य विधान सभा में राज्यपाल व्दारा जिस पार्टी को विधानसभा में बहुमत है उसी पार्टी को मुख्यमंत्री बनाया जाता है। जिसे राज्यपाल नियुक्त करते है।

प्रधानमंत्री बनने के पश्चात जो पहला कार्य वह है। मंत्री परिषद के सदस्यों का चयन करना। प्रधान मंत्री मंत्रिमण्डल के निर्माण, जीवन तथा मृत्यु का केन्द्र है। प्रधानमंत्री मंत्रीपरिषद की सूचि तैयार करके स्वीकृती प्रदान कर देते है। प्रधानमंत्री मंत्रिमंण्डल की

अध्यक्षता करते है। मंत्रिमण्डल की बैठक बुलाते है और उनका सभापतित्व करते है। कोई भी मंत्री उसे सूचित किए बिना व्यक्तिगत रूप में कोई निर्णय नहीं ले सकता। मंत्रिमण्डल के निर्णय व नीति निर्धारण में उनका सर्वोपरि स्थान होता है। प्रधान मंत्री, राष्ट्रपति को मंत्रिमण्डल के निर्णयों से परिचित करते है। प्रधानमंत्री शासन का नेता होने के अतिरिक्त बहुमत दल का नेता भी होता है। लोकसभा में बहुमत दल का नेता होने के नाते ही वह शासन का प्रधान हो पाते है।

जितने भी उच्चाधिकारियों की नियुक्ति संविधान के व्दारा राष्ट्रपति के व्दारा होती है, वास्तव में वे प्रधान मंत्री के व्दारा ही चुने जाते है। संविधान के अनुसार जो आपातकालीन–अधिकार राष्ट्रपति को प्रदान किए गए है, व्यावहारिक रूप में उन सब अधिकारों का प्रयोग प्रधान मंत्री ही करते है। जब संकटकालीन स्थिति की घोषणा की जाए, कब तक उसको चालू रखा जाए, कब किस राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू किया जाए, यह सभी निर्णय प्रधान मंत्री करते है। इस प्रकार शासन के समस्त अधिकार वास्तविक रूप में प्रधान मंत्री को ही प्राप्त है। संक्षेप में प्रधान मंत्री का स्थान मंत्रिमण्डल में इस प्रकार का है, जिस प्रकार गगन में तारों के मध्य चंद्रमा का है। वे मंत्रिमण्डल की आधारशिला एवं मुख्य यंत्र होते है। मंत्रिमण्डल का उनके निर्णयों के अनुसार कार्य करना चाहिए नहीं तो प्रधान मंत्री उसके सदस्यों को उनके पद से हटा सकते है। कोई भी मंत्री प्रधान मंत्री के समर्थन के बिना मंत्रिमण्डल में नहीं रह सकता। प्रधान मंत्री की संवैधानिक स्थिति काफी मजबूत है। यदि उसका बहुमत चला जाता है, तो उसे पद से इस्तिफा देना पडता है।

केन्द्र सरकार के लिए जिस तरह प्रधान मंत्री की आवश्यकता है, उस तरह राज्य सरकार के लिए मुख्यमंत्री की आवश्यकता है। विधानसभा में जिस दल के पास बहुमत होता है, उस दल के नेता को मुख्यमंत्री बनने का निमंत्रण राज्यपाल देते है और वे ही उस नेता को मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाते है। मुख्यमंत्री अपनी इच्छा से मंत्रीमण्डल बनाता है

और उसके लिए राज्यपाल की स्वीकृति लेता है। राज्य के सभी मंत्री मुख्यमंत्री की सलाह से कार्य करते है और निर्णय भी लेने का अधिकार मंत्रियों को नहीं होता। मुख्यमंत्री कि स्थिति भी मजबूत होती है। यदी उसका बहुमत चला गया तो उसे पद से इस्तिफा देना पडता है।

५.२.६. मंत्रालय :

संसदीय सरकारों में परंपरा के अनुसार मंत्रिपरिषद का गठन प्रधानमंत्री की नियुक्ति के पश्चात् होता है। भारतीय संविधान में भी इस परंपरा का पालन करते हुए अनुच्छेद ७५ की व्यवस्था की गई है, जिसके अनुसार प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति के व्दारा होगी तथा अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति प्रधानमंत्री के परामर्श से करेंगे।

ब्रिटेन की भाँति भारत में भी मंत्रिमण्डल का मुख्य कार्य है राष्ट्रीय नीति का निर्धारण करना। मंत्रिमण्डल को गृह और विदेश नीति के निर्माण का अधिकार प्राप्त है। विदेश व गृह नीति संबंधी सभी महत्वपूर्ण विधेयकों के प्रारूप तैयार करते है, तथा उन्हे संसद के समक्ष रखते है। मंत्रिमण्डल के उपर देश के शासन का उत्तरदायित्व होता है। अतः प्रत्येक मंत्री अपने विभाग के कार्य को प्रस्तुत करते है, उनको केवल मंत्रिमण्डल के सदस्यों के अतिरिक्त किसी भी अन्य सदसय को लोकसभा के समक्ष वित्त विधेयकप्रस्तुत करने का अधिकार प्राप्त नाहीं है। केंद्र सरकार की तरह राज्य सरकार का भी मंत्रिमण्डल होता है। उनकी नियुक्ति मुख्यमंत्री करता है। उन्हे भी राज्य के संबंधित निर्णय लेने के अधिकार होते है।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि मंत्रालय ही देश की वास्तविक कार्यपालिका है। मंत्रिमण्डल के सदस्य अपने–अपने विभागों के अध्यक्ष होते है, जो केवल मंत्रिपरिषद के सदस्य को लेकर प्रधानमंत्री एक अन्य आंतरिक मंत्रिमण्डल का निर्माण कर लेते है। इस आन्तरिक मंत्रिमण्डल में पाँच या छः प्रमुख विभागों के मंत्री होते है। इन मंत्रियों से

प्रधानमंत्री के घनिष्ठ संबंध होते है और उन पर प्रधान मंत्री अधिक विश्वास कर सकता है। इसी प्रकार राज्य के विधानसभा में मंत्रिमण्डल की नियुक्ति की जाती है।

५.२.७. सचिवालय :

सविचालय का मुख्य कार्य सदन की सही–सही रिपोर्ट तैयार करना व शीघ्र से शीघ्र प्रकाशित करना है। जो सदस्य जिस भाषा में भाषण दे उसकी रिपोर्ट उसी भाषा में तैयार की जाती है। सदन के लिए एजेण्डा तैयार करने और सदस्यों की सब प्रकार से सहायता करना भी सचिवालय क मुख्य कार्य है। सचिवालय के अन्य कार्यो में सदन का अधिवेशन प्रारम्भ होने की तिथि से पहले सब सदस्यों को सूचित करना पड़ता है। सदन के सदस्यों व्दारा प्रस्तुत किए जाने वाले बिलो, प्रस्तावों, संशोधनो, काम रोको प्रस्तावो, अविश्वास प्रस्तावों, विशेषाधिकारी संबंधी प्रश्नों बजेट के साथ संबंध रखने वाले प्रस्तावों और प्रश्नों को लिखित रूप में प्राप्त करना पडता है। आदि कार्य सचिवालय के है।

संक्षेप में सचिवायल सदन से संबंधित सभी प्रशासकीय कार्यो को सम्पादित करता है। वह अध्यक्ष, उपाध्यक्ष समितियों तथा सदस्यों को परामर्श देता है। सचिवालय की पृथक व्यवस्था व्यवस्थापिका को कार्यपालिका से स्वतंत्र बनाए रखने के लिए की गई है। केंद्र सरकार की तरह राज्य सरकार का भी अपना सचिवालय होता है।

५.२.८. शासन व्यवस्था :

केंद्रीय सरकार की भाँति राज्य प्रशासन को भी मंत्रालयों, जिन्हे राज्यों मे विभाग कहा जाता है। मुख्यमंत्री तथा प्रत्येक मंत्री एकाधिक विभागों के लिए उत्तरदायी है। राज्य की राजधानी में शासन सचिवालय स्थित होता हैं जहाँ से समस्त सरकारी नीतिगत आदेश सम्बन्धित शासन सचिव के हस्ताक्षरों से जारी होते हैं। मुख्य सचिव की अध्यक्षता में शासन सचिव के हस्ताक्षरों सचिव, भारतीय प्रशासकिय सेवा व राज्य प्रशासकिय सेवा के वरिष्ठ अधिकारी के रूप में काम करते है अपने–अपने अधिनस्थ विभागों की देखरेख,

नीतिगत आदेशों के कार्यान्वयन में देश तथा राज्यशासन की व्यवस्था सुचारू रूप से चलाते है।

भारतीय राजनीति से संबंधित घटकों में प्रजातंत्र प्रधानमंत्री एवं मुख्यमंत्री संसदभवन और विधान मण्डल, राजनीतिक दल, विपक्षीदल तथा चुनाव यह राजनीति के भिन्न अंग है। भारतीय राजनीति और प्रशासन का ढाँचा इसीपर खड़ा है।

५.३. राजनीतिक से संबंधित भिन्न अंगो पर व्यंग्य :

राष्ट्रीय भावना के निर्माण के सहायक तत्व भारत में पहले से ही है। परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि, राष्ट्रीय भावना का निर्माण अंग्रेजी शासनकाल से पहले न हो सका था। अंग्रेजी युग केन्द्रीय शासन ने हमें राजसत्ता और अर्थसत्ता की एक सूत्रता दी और एक ही विदेशी जाति के व्दारा शासित होने की पीडा ने हम भारतवासियों को एक बनाया। केंद्रीय शासन से मोर्चा लेने के लिए हमने 'अखिल भारतीय काँग्रेस' जैसी संस्था को जन्म दिया और हमारे नेता सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय व्यक्तित्व से सम्पन्न हुए। वे किसी एक प्रान्त के न होकर पूरे राष्ट्र के नेता हो गये। 'गांधीजी' के व्यक्तित्व उनके राष्ट्रीय मुक्ति के महान प्रयत्नों और जेल यात्राओं ने हमें आग में तपाकर सच्चे अंर्थो में भारतीय बनाया। भारतीयों में आत्मविश्वास और साहस से विदेशी राष्ट्र की सत्ता और उसके शोषण में अनेक कारणों से हमारी राष्ट्रीय भावना को संगठित होने का अवसर प्राप्त हुआ, जिसके कारण भारत में राजनीतिक आन्दोलन का सूत्रपात हुआ।

राजनीतिक आरंभ से ही व्यंग्य लेखकों के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराती रही है। उठापटक, दाँवपेंच, पद-लोलूपता और जोड-तोड की विसंगतियाँ अधिकांश व्यंग्य लेखन का मूल आधार रही है। बालमुकुंद गुप्त का 'शिवशम्भू का चिठ्ठा' से लेकर परसाई और आज के व्यंग्यकारों तक, राजनीति पर जितना लिखा है, उतना दूसरी विसंगतियों पर नहीं। यह एक तरह की आलोचना मानी जा सकती है और कहा भी जाता है, कि यह एक तरह की

आलोचना मानी जा सकती है और कहा भी जाता है कि यह सबसे आसान विषय है। पिछले दो–चार दशक से जब से देश में अखबरों के स्वरूप में बाजारी बदलाव आया है और अलपसिलसिला बढ़ता ही जा रहा है और व्यंग्य राजनीतिक टीप्पणी में बदल गया है।

राजनीतिक का अर्थ केवल छींटाकशी, कुर्सी की दौड, दलबदलू, चुनावी हथकण्डे, झूठे वादे है, राजनीतिक लोगों के जीवन को बेहत्तर बनाने और उन्नयन का एकमात्र मार्ग है। धर्म, समाज और व्यक्ति या संस्थाएॅ अपने दम पर कुछ भी नही कर सकते, जब तक उन्हें काम के लिए उपयुक्त वातावरण नहीं मिलेगा, राजनीतिक के माध्यम से ही वह वातावरण बनाया जा सकता हैं। अच्छे राज के लिए अच्छे नीतियों की आवश्यकता होती है। दुर्भाग्य यह है कि लंबे समय से राजनीति व्यक्तियों और भंगिमाओं कि गुलाम होकर रह गई है और विसंगतियों का बडा ढेर खड़ा कर दिया गया है। ज्यादात्तर व्यंग्य लेखकों ने इन्हीं विसंगतीयों से अपने लिखने के लिए विषय चुन लिए है जो खूब छप भी रहे है। अधिकांश समकालीन व्यंग्य लेखन राजनीति के नाम पर व्यक्तियों और भंगिमाओं के इर्द–गिर्द ही हो रहा है। राजनीतिक को सीमित दायरे में समेट देने से समस्याए उत्पन्न हुई है।

राजनीति में चतुर्दिक नारों की नदियाँ बहती है, वादों की नावें चलती है, जातियों के स्टीमर का भोंपू बज रहा है, अफवाहों की बयार बट रही है। अपराध की शीतलता पर्यावरण को सुधार रही है। ऐसे में व्यंग्यकार तटबन्धों पर खड़ा होकर विसंगतियों के पक्ष में कोरस नहीं गा सकता। उससे अपेक्षा की जाती है कि, विभिन्न क्षेत्रों में मौजूद सडान्ध को अपनी सर्जना से यथावत प्रस्तुत कर सारे वातावरण के बदलाव की भूमिका तैयार करे। इसी कारण हिन्दी की मौजूदा व्यंग्य रचनाओं में वर्तमान व्यवस्था के विरूध्द आक्रोश दिखता है, तो कहीं परिवेश को बदलने की आकांक्षा पलती है।

राजतीति वर्तमान काल की जीवन नीति बन गई है। हिन्दी व्यंग्य साहित्य में डॉ. नरेन्द्र कोहली को अपनी दृष्टियों से देखा है, परखा है। राजनीति के अन्तर्गत निम्मलिखित बातों का अंतर्भाव होता है।

५.३.१. राजनैति प्रजातन्त्र :

आज राजतन्त्र या राजसत्ता खत्म हो चुकी है। उसकी जगह प्रजातन्त्र ने ले ली है। इसे हमने अपनी सुविधा के लिए अपनाया है, क्योंकि एक समय ऐसा आया, जब राजतन्त्र हमें बन्धनों में जकड़ता हुआ प्रतीत हुआ। तब हमने उसे त्याग दिया और लोगों के, लोगों व्दारा और लोगों के लिए चलाये जानेवाले प्रजातन्त्र को हमने स्वीकार किया। लेकिन यह भी एक शासन है। उसके अपने निर्णय है। उसमें भी कुछ सही, कुछ गलत है। इन सब बातों को हम राजनीति के अन्तर्गत रख सकते है। वर्तमान काल में आज सिर्फ प्रजातन्त्र का मजाक उडाया जाता है। प्रजातन्त्र के बारे में व्यंग्यकार व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''लाल किला अभी भी लाल ही है और आलोचक का दिल अभी भी काला है। जहाँ तक सरकार का प्रश्न है, वहाँ स्थिति ऐसी है कि होने को तो प्रजातन्त्र है पर वास्तविकता है कि तन्त्र जो है वह प्रजा से अब भी अधिक शक्तिशाली है। प्रजा की हम इज्जत करते है और इसी कारण, प्रजा शब्द का प्रयोग तन्त्र से पहले किया गया है। पर सचाई में स्थिति वही है जो 'सीताराम' शब्द में सीता की और राधाकृष्ण में राधी की''[६] लाल और काला जोडने के लिए लाल किले का संदर्भ भले ही लिया गया हो पर आलोचक की बात हमेशा कडवी ही लगती है। इसमें वर्तमान प्रजातन्त्र का मजाक उडाया गया है। असलियत यह है कि प्रजातन्त्र सिर्फ कहने कहलाने के लिए है, पर पहले यही होता है कि 'तन्त्र' या शासन हमेशा से बड़ा रहा है। असर हमेशा उसी का रहा है, 'प्रजा' का नहीं।

सब कुछ परिवर्तित होकर भी यह परिवर्तन हमें महसूस नहीं होता इसके सम्बन्ध में व्यंग्यकार लिखते है, ''आजादी लिए पच्चीस वर्ष हो गये देश की जगह कोई लड़का होता तो अब तक उसकी शादी हो गई होती और अगर लड़की होती तो दो-चार बच्चे भी हो गए होते। मगर इस चमन की बुलबुले ऐसे इस्पात की बन है कि, बदलना जानती ही नही चमन बदल रहा है मगल बुलबुले वही है, जहाँ थी। शायद वे बदलेगी भी नहीं। फ्रेंच दार्शनिक से पहले थी।''[७]

आजादी से पहले आजाद हिन्दुस्तान के बारें में हमारे कुछ सपने थे, आकांक्षाएँ थी। हम सोचते थे कि चारों तरफ खुशहाली छा जायेगी हर किसी की माँग पूरी हो जायेगी। लेकिन आजादी के बाद वे सपने चूर–चूर हो गये, सारी आकाक्षाएँ विफल हो गयी। जो परिवर्तन अपेक्षित था, वह नहीं हो पाया।

प्रजातन्त्र के अत्याधिक विकृत तथा घृणित रूप व्यंग्यकारोंने चित्रित किया है। प्रजातन्त्रवाद आने पर भेडियों ने सोचा कि, उनकी मौत का पैगाम आ गया है। भेड़िये के चमचे सियार ने स्थिति को बड़ी चतुराई से सम्हाला है। जब भेड़िये को जंगल में सरकार बनाने की चिन्ता सता रही थी और अपना आसन डोलता दिखने लगा तो वह बहुत अधिक परेशान हो गया। भेड़िये की परेशानी से सियार को विश्वात्मा से कनैक्शन जोड़ने के लिये प्रेरित किया। सियार को बोध प्राप्त हुआ और वह बोला, ''बस सब समझ में आ गया। मालिक अगर पंचायत में आपकी भेड़िया जाति का बहुमत हो जाये तो?''

भेड़िये को यह बात सम्भव नहीं लगी, फिर भी उसने सियार की सलाह पर चलना स्वीकार कर लिया। ''दूसरे दिन बूढ़ा सियार अपने साथ तीन सियारों को लेकर आया। उनमें से एक को उसने पीले रंग में रंग दिया था, दूसरे को नीले में और तिसरे को हरे में। भेड़िये ने देखा और पूछा, अरे, ये कौन है? बूढा सियार बोला, ये भी सियार है, सरकार, रंगे सियार है। आप की सेवा करेंगे आपके चुनाव का प्रचार करेंगे।''[८]

इस प्रकार पीला सियार विव्दान विचारक, कवि और लेखक बना, निला सियार नेता और पत्रकार बना तथा हरा सियार धर्मगुरू बना। परसाईजी ने प्रतीक योजना व्दारा जनता को किस प्रकार पलटा–खसोटा जाता है इसी बात पर व्यंग्य किया है।

काले धन की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए व्यंग्यात्मक रूप से उसका सरकार को कैसे फायदा होता है, इसका विवेचन किया, ''काले धन की उपयोगिता श्वेत–धन से कही ज्यादा है। इस धन के कारण विदेशों से स्मग्लींग किया हुआ सामान हमें सस्ते दामों में प्राप्त होता है, जिसके कारण हमारी आर्थिक स्थिति भी मजबूत होती है और विदेशों की भी।

जो लोग नकली नोट छापते है, वे भी सरकार की सहाय्यता ही करते है क्योंकि, अगर वे ऐसा नहीं करते तो शायद उतने नोट सरकार को छापने पडते। काला धन सरकारों को बनता और गिराता है। प्रजातन्त्र के अन्दर प्रजा चाहे तो तन्त्र को खरीद भी सकती है। यह सुविधा एकतन्त्र में नहीं है और इसी कारण प्रोफेसर लास्की प्रजातन्त्र को श्रेष्ठ माने थे। मार्क्स के अनुसार राजनीति जो निश्तिच होती है वह अर्थशास्त्र से ही होती है। इसी कारण विधायक जो खरीदे जाते है, वे काल धन से ही खरीदे जाते है। काले धन का क्रय-विक्रय भी किया जाता है जिससे देश में न्याय की जड़े मजबुत होती है।''[९]

यहाँ राजतन्त्र अर्थात एकतन्त्र और प्रजातन्त्र में भेद बतलाते हुए प्रजातन्त्र की श्रेष्ठता को प्रतिवादीत किया गया है। साथ व्यंग्य किया गया हैं कि, प्रजातन्त्र में एक सुविधा है कि, काले धन के सहारे प्रजा को खरीदा भी जा सकता है। चुनाव आयोजन और उम्मीद्वारों की तथाकथीत दयनीयता,धूर्तता, झूठे वादे और भ्रमजाल तथा चुनाव जीने के पश्चात की स्थिति का यथार्थ चित्रण जोशीजी ने किया है। उनका लक्ष्य चुनाव की विकृति और विसंगति की ओर है, ''नगर के गुण्डे उस समय काय्रकर्ता बन गये, स्मगलरों का त्याग अति सराहनीय था। चोर हो गये थे... बागों, वनो, गृहोगलियों और चौमुहानों पर खुले आम झूठा बका जा रहा था, सत्य क्या है, असत्य क्या है इसका भेद करना गुनीजन के लिए भी कठिन था।''[१०] व्यंग्यकार ने आक्रोश युक्त स्वर से धन के समान चोट पर चोट करते है। प्रजातन्त्र के प्रति गुण्डे, कार्यकर्ता, स्मगलरों का त्याग किस प्रकार सराहनीय है इसकी और इशारा किया गया है।

व्यंग्यकार ने प्रजातन्त्र के सत्ताधारी भेड़ियें, सियार चमचे और जनता रूपी भेड़ का रूपक रचकर परोक्ष व्दारा सूक्ष्म व्यंग्य करते हुए आदर्श यथार्थ का छद्म मुखौटा उतार कर ढोंगी और धूर्त रूप को इस प्रकार प्रस्तुत किया है, ''पंचायत में भेड़ियों ने भेड़ों को भलाई के लिये पहला कानून यह बनाया हर भेड़िये को सवेरे नाश्ते के लिए भेड़ का एक मुलायम

बचा दिया जाये, दोपहर के भोजन में एक पूरी भेड़ तथा शाम को स्वास्थ्य के ख्याल से आधी भेड़ दी जाए।''[११]

प्रजातन्त्र का चुनाव अभियान जोर–शोर से आरम्भ हो गया। बूढे सियार ने निरिह भेड़ों को समझाया कि बलवान ही उनकी रक्षा कर सकता है। अतः दो भेड़िये को ही वोट दे। भेड़े बहकावे में आ गये और भेड़िया चुनाव जीत गया। पंचायत भेड़ियों में भेड़ो की भलाई के लिये यह पहला कानून बनाया है।

आज के प्रजातन्त्र के युग में समाजवाद केवल चर्चा का विषय बनकर रह गया है। खाओ और बाँटकर खाओ, सभी स्तरों पर इस का अमल हो रहा है। सरकार की कई सारी योजनाओं को लोग बीच में ही खा जाते हैं, उन्हें जनता तक पहुँचने भी नहीं दिया जाता। इस बात पर व्यंग्यकार कहते है, ''समाजवाद की एक परिभाषा यह भी हो सकती है कि, जो खाओ, चाहे वह रोटी या रिश्वत।''[१२] यहाँ रिश्वतखोरी पर अच्छा खासा व्यंग्य किया गया है। जनता के प्रतिनिधि प्रजा के हित पर व्यक्त करते है, और व्यक्त होने में ही अपने सारे कर्तव्यों की इतिश्री मानते हैं।

व्यंग्यकार ने प्रजातन्त्र पर व्यंग्य करते हुए लिखा है कि, ''प्रजातंत्र में प्रजा के धन और धन की प्रजा को नित्य अपना बनाये रखना। मैं बहरा हूँ और तुम गूँगे, इसलिए आओ हम आपस में मिले और प्रजातंत्र को सफल बनाएँ।''[१३]

प्रजातंत्र आखिर एक तन्त्र ही है। विश्व बंधुता और सारे मनुष्य एक समान जैसे नारे तो बड़े लुभावने हैं परन्तु दूर के ढोल की तरह। पर प्रत्यक्ष? लेकिन ऐसा होने से प्रजातन्त्र कभी सफल नहीं हो सकता। व्यंग्यकार इसी बात की चेतावनी देना चाहते है।

५.३.२. चुनाव एवं चुनावी हथकंडे :

चुनाव की घोषणा होते ही नेताओं तथा कार्यकर्ताओं की भुजाएँ फड़कने लगती है। किस क्षेत्र में कौनसा उम्मीदवार हो इसकी गोटी फिट की जाती है। चुनाव क्षेत्र में किस

जाति के वोट ज्यादा है इस बात का विशेष ख्याल रखा जाता है। किस क्षेत्र में कौन सा उम्मीदवार हो इसकी गोटी फिट की जाती है। चुनाव क्षेत्र में किस जाति के वोट ज्यादा हैं इस कुम्हारो और नाइयों के बोट पक्के हैं, कुछ रूपया खर्च होगा। मुसलमानों की वोटें सदा काँग्रेस को जाती हैं। कायस्थ वोटें नहीं मिलेगी।''[१४] इस प्रकार आज की राजनीति जाति व्यवस्था पर चलती है। इस बात को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

'चुनाव' में इमानदारी से बेईमानी मूल्यहीनता, स्वार्थ आदि को निभाया जाता है। आज कल वोटों के भी ठेकेदार निर्माण हो गये हैं। चुनाव के वक्त वोटों का ठेका लिया जाता है। गणतंत्र प्रणाली में चुनाव सबसे अहम बात है। भारतीय ग्राम पंचायत से लेकर संसद तक हर तरह के चुनाव होते है। चुनावों की प्रक्रिया चलाने के लिए चुनाव आयोग का गठन किया गया है। उसका प्रमुख व्यक्ति चुनाव का नियोजन करता है। भारत जैसे विशाल राष्ट्र का नियोजन करता है। भारत जैसे विशाल राष्ट्र में ही रहता है। वोटों की ठेकेदारी के संदर्भ में व्यंग्यकार ने मार्मिक चोट करते हुए लिखते है, ''इनमें से एक तो ठेकेदार था जो चुनावों के अवसर पर एक निश्चित संख्या तक मत डलवाने का ठेका लिया करता था। आदमी ईमानदार था, ठेका मिलने के बाद वह वोट जरूर डलवाता था, उसके लिए उसे शराब और चाकू का सहारा क्यों न लेना पडे।''[१५] इस प्रकार लोगों को डराकर भी वोट पाए जाते है।

''राजनीतिज्ञों के लिये 'पेशेवर' यह विशेषण आज कितना सही लगता है, आज हर नेता कुर्सी पाने या उससे चिपके रहने की, उसपर जमकर बैठने की कोशिश में लगा हुआ है। इसी तीव्र इच्छा के कारण ही कुर्सी के छिने जाने पर उसके दुःख का पार नहीं रहता। ऐसे नेताओं के लिये चुनाव का कितना महत्व होता है देखिये, ''सचमुच का भूत जिस पर सवार हो जाता है, वह आसानी से पीछा नहीं छोड़ता। उन्हे तो सपनों मे भी विधानसभा का भवन नजर आता है, तो कभी विधायकों को दिए जानेवाले फ्लॅट्स तथा अन्य सुविधाएँ

नजर आती है।''[१६] इस प्रकार आरामदायी जीवन आज नेता लोगों का धंदा हो गया है। इसकी तलाश में वे हमेशा रहते है।

बड़े होने का दिखावा करने की प्रवृत्ति राजनेताओं में अधिक दिखायी देती हैं। वे एक तो आम आदमी से मिलने से कतराते हैं और अगर मिलने जाते भी है, तो अपने स्वागत के लिये भीड़ इकट्ठी करवाते हैं। नेता लोग अपने स्वार्थ के लिए –चुनाव के समय सभी हथकंडे अपनाते हैं, इस के बारे में व्यंग्यकार जी कहते है, ''राम ने फौरन उसे उठाया और गले से लगाया। केवल निम्न जाति का था, राम को उससे वोट नहीं चाहिए थे, फिर भी उसे गले लगाया अपने व्यक्तित्व की महिमा के विज्ञापन का हेतु भी इस प्रसंग के पीछे नहीं था, क्योंकि साथ में वे कोई फोटोग्राफर नहीं ले चले थे यह भी नहीं दिखाना था कि पिछड़ी जाति के लोग और तादाद इनकी ही ज्यादा होती है, देखो मुझे कितना चाहते है।''[१७] इस सन्दर्भ में व्यंग्यकार ने भी व्यंग्य किया है, ''रकम काटने वाले काट रहे हैं, पर्चियाँ काटने वाले पर्चियाँ काट रहे हैं। नोटों की ताल पर वोट नाच रहे हैं। अहा सखी, आँखें जुड़ी गयी, कैसी नरनागर बेला है, मोटरों की फेरी की वोटरो की हेराफेरी की।''[१८] इस प्रकार आज चुनाव क्षेत्र में पैसा लगाए बिना जीत नहीं होती।

चुनाव में लिये जानेवाले चिन्ह भी मजेदार और मार्मिक होते हैं। किसी एक दल का चुनाव के साथ, अफसरों के साथ होनेवाला बर्ताव भी चुनावों को सामने चिन्हा 'मुर्गा' था। इस बात को लेखर शरद जोशी जी ने व्यंग्य किया है, ''मुर्गी पीछे भागी... गाली देती रही।''[१९] इस प्रकार चुनाव में लिए जानेवाले चिह्नों पर सवाल खडा किया है।

नेताओं के व्दारा हमेशा आनेवाले चुनावो को सामने रखकर निर्णय लिये जाते है। उनका जनता के साथ, अफसरो के साथ होनेवाला बर्ताव भी चुनावो को सामने रखकर किया जाता है। इस संदर्भ में लिखते है। गृहमंत्री कहते है, ''सालो तुम्हें अक्ल नही है, सर पर चुनाव है और तुम लड़को को गिरफ्तार करते फिरते हो।''[२०] नेताओं के व्दारा कार्यकर्ता लड़कों को छूट दी जाती है।

चुनाव के दिन आते ही नेताओं की चापलूसी बढ़ जाती है। नेता चापलूसी से जनता के सामने हाथ जोड़ते हैं, सर झुकाते हैं। इसके बारे में लिखा है, ''चुनाव के दिनों में ये लोग वोटरों से बोलते नही बल्कि हिनहिनाते है हे हे हे हे हम आपकी सेवा में आए हैं। हे हे हे हे हमारा चुनाव चिन्ह चुल्हा है..... हमारी लक्कड पार्टी को अपना कीमती वोट प्रदान कीजिए।'' [२१] चुनाव के वक्त नेताओं का व्यवहार एकदम अलग–सा होता है।

भारतीय गणतंत्र प्रणाली में संविधान के अनुसार ही सर्व धर्म समभाव को स्वीकारा गया है। धार्मिक और जातिगत भेदभाव नष्ट करने की संविधान की घोषणा है परन्तु ऐसा चित्र दिखता है कि, चुनाव की नीति ने भेदभाव को मिटाने की अपेक्षा बढ़ाव दिया है। चुनाव में पक्ष की उम्मीदवारी जाति और धर्म को देखकर दी जाती है, यही प्रजातंत्र की सबसे बड़ी विडम्बना है। इस पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, '' बन्न ब्राम्हण है और राधिका प्रसाद ब्राम्हण सभा का मन्त्री आगामी चुनाव में खड़ा होगा। उससे कहा कि यही मौका है ब्राम्हणों के वोट इकट्ठे लेने का।''[२२] इस प्रकार किसे टिकट देना है यह बात भी जाति की जनसंख्या पर तय हो जाती है।

जब देश के कोने–कोने से अलग–अलग आंदोलन शुरू किये जाते है, जुलूस निकाले जाते है, किसानों और मजदूरों की समस्या को लेकर भाषण दिये जाते है, तब यह समझना कि, चुनाव का मौसम नजदिक आ गया है आजकल सत्ताधारी भी इसमें खुशी मनाने लगे है। इस ओर 'हम बिहार से चुनाव लड़ रहे है, में लिखा है, ''चुनाव नजदिक आता हैं। इसके दो लाभ होते है, पहला तो यह कि अवसरवादी इसका लाभ उठाकर सत्ता में घुस जाते है। दूसरा सत्ताधारी वर्ग खुश हुआ कि चलो जनता का ध्यान आन्दोलन में बँट गया।''[२३] इस प्रकार अपने स्थिति के अनुरूप लोगों का इस्तेमाल किया जाता है।

चुनाव के आते ही नेता अपनी वेशभूषा में और अपनी रहन–सहन में भी परिवर्तन कर डालते है यह परिवर्तन केवल वोटों की भीख माँगने के लिए ही होता है, ''चुनाव को ध्यान में रख उसने (नेता ने) कुरतें मं सुराख कर लिये थे। और इन पर पैबन्द लगा अपनी

अजब धज बनाई थी। उस दिन तो वह बड़े जनवादी ठाठ में था। आज तो वह पैदल घूम रहा था और वोट की भीख माँग रहा था।''[२४] इस प्रकार नेताओं द्वारा दिखावा किया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि, भारतीय चुनावों मे विकृति का आरम्भ उम्मीदवारों के चयन से ही हो जाता है। यह विकृति सभी पार्टियों में विद्यमान हैं। जातिवाद के नाम पर उम्मीदवारों का चयन किया जाता है। आम चुनाव में प्रचार बहुत अधिक धूम–धाम से किया जाता है। इसलिए तरह–तरह के हथकण्डों और तरीकों का प्रयोग किया जाता है। चुनाव की तिथि ज्यों–ज्यों निकट आती जाती है, पार्टियों के कार्यकर्ताओं की सरगर्मी बढ़ती जाती है। जाति–धर्म और क्षेत्रीयता के नाम की दुहाई देकर वोटों की भीख माँगी जाती है। जाति, बिरादरी के प्रधानों को वोटों के हिसाब से रूपया दिया जाता है। इस प्रकार चुनाव एक खेती बन चुका है, सफल गुण्डे आज देश के नेता एवं कर्णधार बन चुके हैं। जो बाद कुछ अपेक्षा करना व्यर्थ हैं।

भारतीय चुनाव आयोग में तथा उसके नियोजन में कोई विकृति नहीं है, राजनीतिक पार्टियों में तथा चुनाव लड़नेवाले उम्मीदवारों में विकृतियाँ भरी हुई है। हर बार के चुनाव में नये हथकण्डें इस्तेमाल किये जाते हैं। चुनाव में मारपीट, अपहरण और हत्या के कुछ सच्चे और कुछ झूठे आरोप लगाये जाते हैं। कभी–कभी एक दूसरे के विरूध्द झूठे लांच्छन और आरोप भी लगाते हैं।

व्यंग्यकार ने चुनाव के हथकण्डे को बेनकाब किया है। प्रजातन्त्र और चुनावों को झूठ–फरेब, राजनीतिज्ञों के झांसे, झूठे वादे, आश्वासन और प्रतिज्ञाओं, कपटताओं पर निर्देश किया है। चुनाव के हथकण्डों में शराब पहले क्रमांक पर है। इसमें तरह–तरह की उल्टी सीधी बातें अपनायी जाती है। और कुछ भी किया जाता है। नैतिकता नाम की चीज कहीं देखने को नहीं मिलती डॉ. कोहली लिखते है, ''प्रजातंत्र का यह हाल किया कि एक बोतल शराब रात को पिलाकर सबेरे उसने अपनी पेटी में मत पत्र गिरवा लिया। न्याय को

संस्थाओं को खरीदकर जेब में रख लिया हैं। भ्रष्टाचार पकड़ने वाले सरकारी कर्मचारी को बरखास्त कर दिया। लुटेंरो की रक्षा के लिय पुलिस तैनात कर दी और लुटने वालों को अध्यात्म सिखाने लगे। लायक को नोकरी नहीं दी और नालायक को ऊँचा पद दिया। पैसा लेकर नम्बर बढ़ा दिए। चापलूसी को श्रेष्ठ पुरूष समझकर गले से लगाया।''[२५] इस चुनावी हथकण्डे को अपनाते हुए राजनीति में चुनाव जीतकर आनेवाला नेता एक बोतल शराब रात को पिलाकर सबेरे वह अपनी पेटी में मत–पत्र गिरवाकर चुनाव जीत कर आता है। यह स्थिति आज के चुनाव व्यवस्था की एवं प्रजातंत्र की है।

भारतीय चुनावों में विकृति का आरम्भ उम्मीदवारों के चयन से ही हो जाता है। यह विकृति सभी पार्टियों में विद्यमान है। जितनी बडी पार्टी होती है उतनी ही बड़ी विकृति होती है। राष्ट्रीय हित के विरूध्द क्षेत्रीय हित, अखिल भारतीय नेताओं के विरूध्द राज्यों के नेता, पार्टी के एकता के विरूध्द दूसरा गुट, जातिवाद के जाम पर उम्मीदवारों का चयन किया जाता है। व्यंग्यकार चुटकियाँ भरते हुए चुनाव में खडे उम्मीदवारों के गुणों का बखान करते है, ''आप काँग्रेस के पुराने कार्यकर्ता हैं और सैंतालीस से आप काँग्रेस के साथ है.... फिर भी काँग्रेस से टिकट नहीं मिला तो जनसंघ से भी बात की जा सकती है। आशा है इस मामले में सिध्दान्त पर आपको पूरा अधिकार है कि आप असन्तुष्ट हो जाये, और तब विरोधी पार्टी आपकी भावना का मान करेगी। इस मामले में थोडी पॉलिटिक्स चलनी पडेगी सो आप समर्थ है।''[२६] व्यंग्यकार ने चुनाव –उम्मीदवारों व्दारा तरह–तरह के हथकण्डे, अनैतिक एवं भ्रष्ट आचरण अपनाने की कुप्रवृत्ति पर प्रहार किये है।

चुनाव का प्रचार बहुत अधिक धूम–धड़ाके से बढ़ता जाता है। इसके लिए तरह–तरह के हथकण्डों और तरीकों का प्रयोग किया जाता है। जलसे, सभायें, जुलूस–झाँकियाँ, सार्वजनिक स्थलों पर भाषण आम बात होती है। भाँति–भाँति के स्वांग और खेल–तमाशे भी किए जाते है। जीप और कारों से लेकर इक्के साइकिल और बैलगाडियों तक का चुनाव प्रचार में प्रयोग किया जात है।

जैसे चुनाव समीप आता है, देश में तरह–तरह के आन्दोलन खड़े होने लगते है। अवसरवादी इसका लाभ उठाकर सत्ता में घुस जाते है और सत्ताधारी यूँ खुश होते हैं कि, जनता का ध्यान आंदोलनों में बट जाता है, ''चुनाव आ रहा है तो गोरक्षा होगी ही। आप तो गोरक्षा आन्दोलन के जरिये पॉलिटिक्स में घुस ही जायेंगी।''[२७] इस प्रकार चुनावी प्रचार सभाओं में लोगों की संवेदना को पकड दिया जाता है।

चुनाव के समय किस प्रकार के चुनावी हथकण्डे अपनाये जाते है। उम्मीद्वार किस प्रकार छल–प्रपंच रचते हैं। वह जनता को ठगने और बहकाने के लिये गरीबी हटाव का नारा जोर–जोर से लगाते हैं। जनता में नोट, कम्बल, रजाइयाँ बाँटी जाती है। जनता भी चार दिन की चाँदनी को दोनों हाथों, से लूटने को तैयार रहती हैं वे क्षण भर भूल जाते है कि, बाद में उन्हीं की खाल खींची जायेंगी, उन्हीं का लहू चुँसा जाएगा। इसी प्रकार चुनाव के प्रचार में हथकण्डे अपनाये जाते हैं।

चुनाव की तिथि ज्यों–ज्यों निकट आती है, पार्टियों के कार्यकर्ताओं की सरगर्मी बढ़ती जाती है। जो बाते वे आम सभाओं में नहीं कह सकते उन्हें वह व्दार–व्दार जाकर कहते हैं। जाति–धर्म और क्षेत्रीयता के नाम की दुहाई देकर वोटों की भीख माँगी जाती है। गाँव, जाति और क्षेत्रीय नेताओं तथा मुखियों को वितरण हेतु धन दिया जाता है। कुछ लोग इसे धन्धा भी बना लेते है। जिससे सौदा पट जाए उसे ही वोट देते है। बिल्लियाँ कहती है, ''मैं सच कहती हूँ वर्माजी, अगर हमें वोट का हक मिल जाये तो इन पार्टीवालों को दातों चने चबका दे! कहें, बेटा रखो इधर कटोरा भर दूध और दस–दस चूहें नही तो अपना टस से मस नहीं होने से क्या नैतिक पतन हो गया है इन बिल्लियों का ? टूटू (कुत्ते) ने कहा।''[२८]

इस प्रकार जनता में भी एक विशेष वर्ग है जो अवसर का लाभ उठाना खूब जानता है। चुनाव ही तो ऐसा अवसर होता है जब उम्मीदवारों को इशारों पर नचाया जा सकता है। जाति–धर्म के नाम पर वोटों की माँग, चुनाव प्रचार के समय अलग–अलग बहाने बनाता,

पार्टी फंड, उम्मीदवारों का चयन क्षेत्रीय आधार एवं जाति के आधार पर तथा धर्म के आधार पर किया जाता है। ऐसे अलग–अलग चुनावी हथकण्डे इस्तेमाल में लाये जाते हैं।

५.३.३. सत्ताधारी गुट :

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सत्ताधरियों को एवं नेताओं को देश के विकास के बारे में सोचना था। देश को आगे बढ़ाना था। देश की प्रगति और विकास के लिए देश के नेताओं को तन–मन–धन अर्पित करना था। साधन जुटाने थे, उत्पादन बढ़ाना था, देश के धन का निःस्वार्थ भाव से सदुपयोग करना था। देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, अँधरे–गर्दी, स्वार्थ लोलूपता को जड़ से मिटाना था। जनकल्याण की नीवं–सदृढ करनी थी। देश और जनता के भाग्य की विडम्बना यह बनी कि, भाग्य विधाता ही घोर भ्रष्ट हो गए। शासन प्रणाली तथा इससे सम्बधित सत्ता तंत्र में विसंगति, विकृति, विषमता, अन्याय अत्याचार, दुर्बलता का बोलबाला हुआ। डॉ. नरेन्द्र कोहली ने अपने व्यंग्य लेखन से प्रहार किए है।

व्यंग्यकार ने अपने व्यंग्य से सत्ता में आते ही देश की भोली–भोली जनता एवं कर्मचारियों की लूट–खसोट तथा स्वार्थपूर्ति को लक्ष्य बनाकर व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''अंग्रेज छूरी काँटे से प्लेट में रखकर इंडिया को खातें रहे। देशी साहब बचे भारत को खाने लगे है। देश १९४७ में स्वतन्त्र हो गया। अहिंसक क्रान्ति कहलाई गयी। विदेशियों ने इसे ट्रान्सफर ऑफ पॉवर (सत्ता का हस्तांतरण) कहा। वास्तव में ट्रान्सफर ऑफ डिश हुआ। परोसी थाली एक के सामने से दूसरे के सामने आ गई। वे देश को पश्चिमी सभ्यता के सलाद के साथ खाते थे और देशी सत्ताधारी जन–तन्त्र के आचार के साथ खाते है।''[२९] डॉ. कोहली विकृत राजनीतिक परिवेश के प्रति अत्याधिक आक्रोश व्यक्त किया है। जिसकी खीझ और भडास को, उन्होंने व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त किया है।

सत्ताधारी गुट के नेता, विधायक सत्ता में आते ही अफसरों को अपने हाथों की कठपुतली बना देते है। इनकी मन–मानी को अफसरों को पूरी करनी पडती है। इनके

हस्तक्षेप को मानना पडता है। अफसर की हीनावस्था को लक्ष्य बनाकर व्यंग्यकार ने 'अफसरशाही और इसके बाद' इस निबंध में व्यंग्य करते हुए लिखा है, ''आजादी के बाद तख्ता पलट गया। अफसरों की तादाद बेतहाशा बढ़ गई जहाँ पहले जिले का मालिक कलेक्टर और गाँव का पटवारी होता था वहाँ अब स्थानीय नेता और ग्राम सरपंच ने शासन अपने हाथ में लिया। आस-पास के सत्ताप्राप्त लोगों ने भी शासन की मदद दी और परिणाम यह रहा कि स्थानिय नेता और बदमाशों में जो थोडा बहुत अंतर था वह भी मिट गया।''[३०] सत्ताधारी गुट के नेता एवं विधायक के कारण प्रशासन में अफसरों की हालत किस प्रकार बन जाती है। इस पर व्यंग्यकार ने खुलकर व्यंग्य किया है।

'मुख्यमंत्री का डण्डा' नामक रचना में सत्ताधारियों के लिए उसकी सूझ-बूझ कार्यकुशलता, तत्परता, चरमसीमा पर अकर्मण्यता किस प्रकार पहुँच जाती है, उसका चित्रण किया है। एक बार मुख्यमंत्री का डण्डा चोरी हो गया। इस पर पार्टी के लोग क्या-क्या सोचते है ? ऐसा लगता है, इन लोगों को जनता के दुःख-दर्द की अपेक्षा डण्डा ही किमती लगता है। इस पर व्यंग्यकार लिखते है, ''मंत्री कि पार्टी के सक्रेटरी ने डी. एस. पी. से मिलकर एक प्लान बनाया। पार्टी के मंत्री जी ने सुझाया क्यो न अपनी ओर से एक डण्डा तैयार कर भिजवा दिया जाये? प्रश्न डण्डा खर्च का खडा हुआ तो यह तय कर लिया कि अभी अपनी जेब से खर्च किया जाय। बाद को किसी न किसी योजना में एडजस्ट कर लिया जाएगा।''[३१] इस प्रकार सत्ता में आ जाने के बाद सत्ताधारी पार्टियाँ लोगों के बारे में सोचती नहीं है। इस पर व्यंग्यकारने व्यंग्य किया है।

पार्टी कार्यकर्ता को सारे गुनाह माफ होते है, इस पर व्यंग्यकार ने सुदामा-कृष्ण के रूपक व्दारा इसी तथ्य को व्यंग्य के माध्यम से खोलने की कोशिश इस प्रकार की है, ''पार्टी कार्यकर्ता को सारे गुनाह माफ होते है। उस पर कोई चालन नहीं होता। इसी कारण समाज में गुण्डागर्दी और अंधेर नगरी फैल रहीं है। पुराना कार्यकर्ता होने की वजह से कुछ भी कार्यवाही उस पर नहीं होती।''[३२] इस प्रकार संबंध आज भी देखा जाता है।

संक्षेप में सत्ताधारी पार्टियाँ सत्ता में आते ही अपना असली रूप दिखाने लगते है। चुनाव के समय जो वादे किए थे, उसको स्वार्थ–सिध्दि में लिप्त हो जाते है। सत्ता में आने के बाद भ्रष्टाचार, अँधेर गर्दी, धाँधली, स्वार्थ लोलूपता की भावना बढ़ जाती है। ऐसे में वे देश की जनता को एवं देश को भूल जाते है। इस प्रकार व्याप्त विसंगति, विकृति, विषमता, अन्याय, अत्याचार पर व्यंग्य के माध्यम से व्यंग्यकार सत्ताधारी पार्टियों पर व्यंग्य किया है।

५.३.४. संसद और विधान भवन :

संसद एवं विधान भवन प्रजातन्त्र का दर्पण होता है। उसमें नेता तथा मंत्रियों के कार्य का प्रतिबिम्ब प्राप्त होता है। लेकिन आज संसद भवन एवं विधानभवन में जो नेता चुनाव जीतकर चले जाते है। प्रजातन्त्र के साथ मजाक करते है। जनता के प्रति पाँच बरस तक नेता एवं मंत्री का कोई, लेना देना नहीं है, ऐसी हरकते इस भवनों में की जाती है। विधान भवन में समाज, राज्य तथा देश की समस्या हल होनी चाहिए लेकिन वहाँ सिर्फ भाषणबाजी ही चलती है। आज–कल तो वहाँ शोर–शराब और हंगामा ही चलता है।

जिसने भ्रष्टाचार करवाया उसके लिए उसे सुरक्षित रूप से छोड़ने के लिए जाँच समिति नियुक्त की जाती है, और भ्रष्टाचारी को इज्जत से बरी किया जाता है। विधानभवन एवं संसद में विधायक नेता, मंत्री तक बचाने का व्यवहार करते है। देखकर ऐसा लगता है कि स्कूली बच्चों जैसी हरकतें करनेवालों को विधानभवन एवं संसद में क्यों भेज दिया? क्योंकि आज के राजनेता को पात्रता की कोई जरुरत नहीं होती। जो ज्यादा रूपये चुनाव में खर्च करवायेंगे या गुंडागर्दी ज्यादा करवायेंगे वही नेता विधानभवन एवं संसद में पहूँच जाते है। और इन लोगों से अपेक्षा करना भी व्यर्थ है।

आज ऐसे दागी लोग विधानभवन एवं संसद में पहुँच जाते है। जिसने ज्यादा भ्रष्टाचार किया है, इतना ही नहीं घास खानेवाले, सिमेंट खानेवाले, तालाब, पुल गायब करनेवाले, भुकंप पीडित लोगों का राशन खानेवाले एवं पीड्तिों के लिए जमा करवाई राशी को

खानेवाले अधिक से अधिक दंगे फसाद करानेवाले लोग ही विधानभवन एवं संसद में पहुँच जाते है जैसे कोई बडा जादुगर है। इस भवनों में समस्या हल होनी चाहिए लेकिन इस में ज्यादा समय तक हंगामा, गाली गलौज विरोध के लिए विरोध के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। कोई मंत्री तो सिर्फ भवन में सोने का कार्य करते है। संसद एवं विधानभवन के कामकाज में ऐसा व्यवहार करते है देश के प्रति एवं राज्य के प्रति इन्हें कोई भी लेना देना नहीं है।

विधानभवन में नेता विधायक एवं मंत्री एक–दूसरे को बचाने व्यवहार करते है। उनमें हाथा–पायी तक नौबत आती है। इस संदर्भ में व्यंगकार कहते है। '' विधानसभा में स्थिति इतनी प्रजातांत्रिक हो गई है कि जूते–चप्पलों का आदान प्रदान होने लगा है। अंत में चलकर सभापति महोदय को आदेश जारी करना पडा कि दर्शक लोग नंगे पाँव ही विधानभवन में घुस सकेंगे, जुते पहेनकर नहीं।''[३३]

विधान भवन एवं संसद भवन में समाज, राज्य तथा देश की समस्या का हल होना चाहिए, वे लेकिन वहाँ सिर्फ भाषण बाजी चलती रहती है, व्यंगकार इस संदर्भ में लिखते है कि, ''अब बिना विचार भाषण देने को जी करता है, विधानसभा के बेहतर जगह इस के लिए क्या हो सकती है? वहाँ कुर्सिया है, माईक लगे है, जो तबियत आए बोलो जी गहरा विचार मन में उठे बाहर निकलो। न विचार आये तो भी बोलो।''[३४] इस प्रकार बोलने के लिए कोई ठोस नहीं होता फिर भी नेता बोलने का प्रयास करते है।

जाँच समिती नियुक्त की जानेवाली पध्दतिपर व्यंगकारने व्यंग्य किया है। '' मैं सिर्फ इतना जानता हूँ कि सुबह मैनें हजामत बनवायी, नहाया और खाकर लोकसभा में आ गया। मुँछे है या नहीं, यह भी मैं नहीं कह सकता सरकार जाँच करेगी। कारण सदन को तथ्य जानने का हक है। नन्दा तो मैं कह रहा हूँ कि एक समिती जाँच करेगी की पहले मेरी मुँछे थी या नहीं।''[३५] इस प्रकार जाँच समिती के कार्य पद्धति पर प्रश्न चिह्न खडा किया है।

संसद और विधानसभा का हाल देखकर व्यंग्यकार लिखते है, ''बैलों ने हमारे देश में बडा योगदान दिया है। अब तक की सारी सरकारों ने बैलो की जोडी के आधार पर ही

चुनाव पर ही चुनाव जीतती रही। चुनाव के अतिरिक्त वैसे भी सरकार में काफी बैल है, जो यथाशक्ती फाईलों मे खेतों को जोतते रहते है।''[३६] इस प्रकार कॉंग्रेस के प्रचार चिह्न पर व्यंग्य किया है।

संसद एवं विधानसभा जनतन्त्र का आधार स्तंभ होता है। यही से देश और राज्य के शासन की बागडोर चलती है। ये जनता की इच्छा आकांक्षाओं के प्रतिबिंब होते है। वह पार्टी शासन करती है। यहाँ देश और राज्य की समस्या का विचार विनिमय के माध्यम से हल निकाला जाता है। परन्तु वास्तव में यह होता है कि विधान सभाओं में अधिकांश सदस्य सोते रहते है। संसद एवं विधानसभा में जो बहस होती हे वह निरर्थक होती है। मन में आया वहीं बोला जाता है। कुछ संसद एवं विधायक सिर्फ वॉक आऊट करने के लिए वहाँ तक जाते है। इस भवन में कई बार मारपीट होती है, गाली–गलौज होती है, जुतों–चप्पलो का अदान प्रदान भी होता रहता है।

विधानभवन एवं संसद में देश को विकास एवं प्रगति के पथ पर आगे बढने के बारें में सोच–विचार करना चाहिए लेकिन इस भवन में सिर्फ खुद की समस्याओं को सुलझा जाता है। ये स्थितियाँ प्रजातन्त्र के खोखलेपन का प्रमाण है। विधानभवन एवं संसद भवन की इन विकृतियों को व्यंग्यकारने अपने व्यंग्य साहित्य में चित्रित किया है। और इस बात की चेतावनी दी है मत देनेवाला मतदाता को अब इसके बारे में सोचने की आवश्यकता है।

५.३.५. विपक्षी दल :

प्रजातंत्र की सफलता का लेखा–जोखा विपक्षी दल द्वारा किया जाता है। यदि सशक्त विपक्षी दल न हो तो प्रजातंत्र में सत्ताधारी दल तानाशाह बन जाता है। भारतीय राजनीति में सभी पार्टीयाँ सत्ता हथियाने के दाँव–पेंच खेलती है। इसमें जो चुनाव में सबसे बडी पार्टी के रूप में उभरकर आती है, वह सत्ता संभालती है। और बाकी के पार्टीयो को विपक्ष में बैठना पडता है।

देश की राजनिती में सिर्फ सत्ता दल के नेता ही नहीं विपक्ष दल के नेता भी सम्मिलित है। एक समय था कि, भारतीय राजनीति विपक्षी नेता की भी धाक थी। परन्तु आज स्थिति ऐसी है कि नेता विपक्ष में बैठना ही नही चाहते। विधायक बनने के बाद सत्ता प्रतियोगिता में दल से सम्बन्धित श्रध्दा, स्नेह, एकनिष्ठता, ईमानदारी आदि त्यागकर दल बदल होते है। यह भी राजनीति में दिखाई देता है।

आज मूल्यों की राजनीति नहीं रही है। राजनीति में मूल्यहीनता और अस्थिरता अधिक बढ गयी है। विपक्ष दल के नेता सत्ता हथियाने के षडयंत्र करते हे। विपक्ष दल के नेताओ की इस प्रवृत्तिपर व्यंग्यकारने व्यंग्य किया है, ''हम जनता को वचन देते है कि, जिस सरकार में हम नहीं होगें उस सरकार को गिरा देगें। अगर हमारा बहुमत नहीं हुआ तो हम हर महिने जनता को नयी सरकार देगें।''[३७] इस प्रकार विपक्षी दल के नेता सत्ताधारी दल को भी काम नहीं करने देते। हमेशा सरकार गिराने के बारे में सोचा जाता है।

विपक्षी दल के नेता सत्ता हथियाने के चक्र में सत्ताधारी पक्ष पर कैसे भी आरोप लगाते है। धर्म और संस्कृति की आड में सत्ताधारियों पर आक्रमक तेवर अपनाया जाता है। इस संदर्भ में व्यंग्यकार ने प्रहार किया है, ''जनसंधी नेता कहते, भारतीय संस्कृति की हत्त्या हो रही है और इनमें काँग्रेसियों का हाथ है, धर्म संस्कृति, सभ्यता की रक्षा की और कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है।''[३८] इस प्रकार सत्ताधारी पार्टी पर मनचाहे आरोप किए जाते है।

आज की राजनीति में सिध्दांत नहीं रहे है। सत्ता प्रति के हेतु हमेशा एक दूसरे के विरोध करनेवाले विपक्षी दल के नेता एकत्र आते है। विपक्षी नेताओं के इस चेहरे को व्यंग्यकार लिखते है, ''जनसंघ और समाजवादी पार्टियो में अंतर नहीं है। वे भी विरोधी है, विरोधी – विरोधी सब एक होते है।''[३९] चुनाव के समय अपने नीति–मूल्यों को विपक्ष में बैठने का समय आता है, तो कहते है समाजवादी पार्टी और जनसंघ सभी एक है।

संसद विधान भवन को सदन में विपक्षी दल के नेता को जो भूमिका निभानी चाहिए वह नहीं निभायी जाती। किसी भी विषय पर गंभीरता से चर्चा नहीं की जाती। चर्चा चाहे किसी खून की हो या दुर्घटना ग्रस्त हो जाने की, ''विरोधी सदस्यों के सब आरोप झूठे है। हमने उस कुत्ते का पोस्टमार्टम कराया है। रासायनिक जाँच कि रिपोर्ट है, कुत्ता बस से कुचलकर नहीं मरा। पहिये पर जो खून लगा था उसक सम्बन्ध में रासायनिक का मत है कि वह कुत्ते का खून नहीं है।

एक सदस्यः तो वह किसका खून है?

मंत्री : वह आदमी का खून है?

इस पर संसद में थोडी देर भुनभुनाट होती रही।''[४०] इस प्रकार सत्ताधारीयों द्वारा सत्य छिपाने का प्रयास होता रहता है।

चर्चा में किस विषय को कितना महत्व देना है, इसकी सुझ–बूझ नेताओं को नहीं है। विरोध के लिए विरोध करनेवालों पर आघात करते हुए व्यंग्यकार लिखते है कि, ''चीध्नी हमले के पहले हमने बजट में सैनिक–खर्च का विरोध किया फिर बात पर विरोध किया कि, तैय्यारी क्यों नहीं की और अब सरकार तैयारी के लिए पैसा वसूल करती है, तो हम उसका भी विरोध करते है। सरकार मॅकमोहन रेषा को भारत कि सीमा मानती है, तो हम आगे बढकर तिब्बत तक मानते है कल अगर सरकार तिब्बत तक सीमा मानने लगे तो हम मॅकमोहन तक आ जायेंगे।''[४१] इसमें व्यंग्यकार विपक्ष दल के नेताओं पर प्रहार किया है, जो सिर्फ विरोध के लिए विरोध करते है।

संक्षेप में देश की राजनीति में सिर्फ सत्ता दल के नेता भी सम्मिलित है। देश के हित का विरोध करनेवाले विपक्ष दल के राजनीतिक लोग भी दिखायी देते है। इन बातों को लेकर व्यंग्यकार व्यंग्य के माध्यम से विपक्ष दल पर व्यंग्याघात किया है। जो भारतीय प्रजातन्त्र के लिये खेद की बात है।

५.३.६. नेता :

राजनीति में नेता को देश और जनता के कर्णधार कहलाते है। नेता अपनी पार्टी को एकसूत्र में बांधकर पार्टी चलाने का कार्य करता है, कार्यकर्ता कि समस्या, जनता कि समस्या सुलझाने का कार्य नेताओं का होता है। लेकिन विडम्बना यह है कि, जिस नेता की पार्टी चुनाव के समय लोगों के पाँव पकडनेवाले नेता चुनाव के पश्चात लोगों को भूल जाते है। नेता कुर्सी मिलने के पश्चात खुद की समस्या सुलझाने का कार्य करता है। ऐसे नेताओं का चरित्र हमारे सामने इस सूत्र में रखते हुए व्यंग्यकार व्यंग्य करते हुए कहते है, ''सफल गुंडे लीडर कहलाते है और असफल लीडर गुंडे कहलाते है। ''[४२]

जो राजनीति में गुंडे सफल हो जाते है वह गुंडो के नेता बन जाते है। जनता के सुख–दुःख की चिंता नहीं। वह तो इनके लिए जैसे 'कच्चा माल' है। इस व्यंग्यकार बडे सहज भाव से कहते है, '' जनता कच्चा माल है। इसे पक्का माल विधायक, मंत्री आदि बनाते है। पक्का माल पाने के लिए कच्चे माल को मिटना ही पडता है।''[४३] ये नेतागण ही सभी समस्याओं का जड है।

भारतीय नेताओं को अगर एक्सपोर्ट कर दिया जाए तो भारत की समस्त समस्याएँ एक ही दिन में हल हो जाएगी। नेताओं को कही एक्सपोर्ट कर दिया जाये तो भारत की समस्त समस्याएँ एक ही रात में सुलझ जाएगी।

नेताओं की चरित्र–भ्रष्टता अनैतिकता और स्वार्थ परकतापर व्यंग्यकार बडी मार्मिकता से कहते है, ''एक स्थानिय नेता जो भाषण कर रहे थे बडे प्रेमी पुरूष थे। लडकी को देखा तो इससे भी प्रेम हो गया। ये उनकी सातवी धर्म पत्नी थी बाकी छह पत्नियाँ अलग अलग हवेलियों में रहती थी और उनमें से प्रत्येक अलग अलग राजनीतिक दलो से सम्बधित थी। स्थिति यह भी थी कि जैसे ही कोई नया राजनीतिक दल उस क्षेत्र में जन्म लेता था, वैसे ही नेताजी एक विवाह रचा लेते थे। इस तरह से वे सच्चे जनसेवक थे पद से उन्हें कोई मोह नहीं था। चुनाव में वह हमेशा खडे रहते थे और वह भी सरकारी उम्मीदवार

के खिलाफ परन्तु उनकी आत्मत्याग की भावना इतनी अच्छी थी कि, चुनाव के एक दो दिन पहले वे हमेशा अपना नाम वापिस लेते थे। वैसा करने के लिए उन्हें या तो शराब का ठेका दिया जाता था, या जंगल काटने की इजाजत। इसके बाद वे फिर उसी उत्साह से जनसेवा में जुट जाते थे।''[४४] केवल आश्वासन देना और नारेबाजी करना यही आज के नेताओं का काम बन गया है। इस संदर्भ में व्यंग्यकार कहते है, ''नेताओं का काम आज क्या है, तो बोलते रहना। बहुत लोग उसे विचारशील मानने लगते है।''[४५] आज कल नेताओं की मानसिकता एवं प्रवृत्ति ऐसी बनी है कि, उन्हे कोई ना कोई पद चाहिए। इस संदर्भ व्यंगकार ने कहा है,'' अपनों का काम करा देना, तबादले कराना, उँची नोकरी दिलवाना, लायसेन्स दिलवाना आज के नेताओं का काम बन गया है।''[४६] इस प्रकार नेताओं की राजनीति स्वयं के हित के लिए कार्य करती है।

आज के नेता और राजनीति कार्यकर्ता जनता की नजरों में आदर, स्नेह, और आस्था के पात्र नहीं रह गए है। नेता, भ्रष्टाचार, व्याभिचार, कुकृत्य, एवं अपनी मनमानी करता रहता है। विडम्बना यह है कि, रक्षक ही भक्षक बन गया है, उसका स्वरूप विकृत हो गया है। उसका आचरण भ्रष्ट हो गया है। वह स्वार्थान्ध और लोलची हो गया है। अंधेर गर्दी धांधली और अनैतिकता ने उसे चारों ओर से ढँक लिया है, जिसके अन्दर से वह देश और जनता की पीढी को नहीं देख पाता। ऐसी विडम्बनात्मक स्थिति पायी है।

व्यंग्यकार ने इस लक्ष्यों की धूर्तता, लम्पटता, कथनी–करनी के अन्तर, आदर्श और यथार्थ के वैषम्य पर कसकर व्यंग्य किया है।

५.३.७. मंत्री :

संसदीय शासन प्रणाली में केंद्रीय सत्ता मंत्रिमण्डल में ही निहित होती है। जिसमें शासन की वास्तविकता निहित होती है। मंत्रिपद जिस सदस्यों को दिया जाता है वे लोकसभा या राज्यसभा के सदस्य होते है। किन्तु छः माह तक के लिए एक गैर सांसद भी

मंत्रिमण्डल में रह सकता है शर्त यह रहती है कि मंत्री बनने के छः माह के भीतर उसको किसी भी एक सदन का सदस्य बनना अनिवार्य होता है, अन्यथा वह मंत्री नहीं रह सकता मंत्री लोकसभा के समक्ष बडी महत्वपूर्ण भूमिका निभातें है, संतुष्ट रखने के साथ ही विपक्ष के सदस्यों को भी अपने कार्यो की आधार पर यथासंभव संतृष्ट रखने का प्रयास करता है। मंत्री को अपने विभागों के सम्बन्ध में पक्ष–विपक्ष क सदस्यों के प्रश्नों का उत्तर भी देने होते है और उनकी माँगो को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने का संतोषप्रद आधार भी प्रस्तुत करना होता है। जनता के प्रश्नों के प्रति उनको सतर्क रहना पडता है। लेकिन आज मंत्रीपद प्राप्त होते ही जनता को भूल जाना नेताओं की प्रवृत्ती बन गयी है।

जनता की सेवा करना मंत्री भूल जाते है। बिना रिश्वत लिये आज कहीं भी काम नहीं होता। यहाँ तक मंत्री पद प्राप्त हो जाने के पश्चात सिर्फ आश्वासन देना ही मंत्री का कार्य बन जाता है। मंत्री अपने पाँच बरस के कार्यकाल में सिर्फ भाषणबाजी करने में उद्‌घाटन करने में व्यस्त रहते है। गीता जयन्ती हो या तुलसी जयन्ती, अभिनंदन समारोह हो अथवा शोकसभा, चित्रकला प्रदर्शनी हो या आधुनिक बोध पर विचार गोष्टी, अभिन्दनीय मंत्री किसी ना किसी रूप से अवश्य स्थानापन्न हो जाते है। आकाश में ईश्वर तथा पृथ्वीपर मंत्रीजी को सर्वज्ञ माना जाता है। व्यंग्यकार अपने व्यंग्य से मंत्रीजी की अकार्यक्षमता पर भाषणबाजी प्रवृत्ति पर, भ्रष्टाचारी वृत्तिपर प्रमुख व्यंग्यकार ने अपनी रचनाओं के द्वारा तिखे प्रहार किये है।

आज रिश्वत लिए बिना आज कहीं भी काम नहीं होता है, यहाँ तक मंत्री भी बिना रिश्वत लिए काम नहीं करते, मंत्री के रिश्वत लेने के बारे में व्यंग्यकार लिखते है, ‘‘ विरोधियों को क्या काम है? फाईले भी तो नहीं जमा कर सकते ठिक से। हम थे तो जैसा चाहते थे करवा लेते थे। रिश्तेदारों को नौकरीयाँ दिलवाते और अपनेवालों को ठेके दिलवाते। एक जमाना था अफसर खुद रिश्वत लेते थे और खा जाते थे। हमने सवाल खडा किया कि हमारा क्या होगा, पार्टी का क्या होगा ? हमने अफसरों को रिश्वत लेने से रोका

और खुद ली और काँग्रेस को चन्दा दिलवाया।''[४७] इस प्रकार पक्ष के लिए चन्दा इकट्ठा करना आज के नेताओं का काम बन गया है।

मंत्री होने की पुर्वदशा एवं मंत्री बनने के पश्चात की अवस्था का तुलानात्मक विवेचन करते हुए मंत्रीजी की रहन–सहन पर, कार्य प्रणाली पर करारा व्यंग्य किया है, ''मंत्री होने से पूर्व पत्थरों पर खर्राटे की नींद आती थी अब रेशमी रजाई का बिनौला चुभता है स्वयं को गरीबो का सेवक कट्टर अनुयायी कहते है किन्तु आपका जीवन स्तर कंचन की चोटीसे कम उँचा नही है। बिजली का मासिक व्यय हजारो रूपया बैठता है। टेलिफोन और फर्निचर का खर्च सुनकर बडे बडे रईसों को पसीना आ जाता है।''[४८]

व्यंग्यकार ने मंत्रियो के कार्यकलाप एवं राजनीतिक व्यवहार का रहस्य उद्घाटित करते हुए लिखा है, ''जब बडे बडे राज्यपाल स्थानान्तरीत हो जाते है, तब क्षुद्र साइकिल के स्थानान्तर का क्या शोक।''[४९] मंत्रीपद प्राप्त होते ही जनता को भूल जाना नेताओं की प्रवृत्ति बन गयी है।

मंत्रीपद प्राप्त होते ही वे जनता की सेवा करना भूल जाते है। इसे लेकर 'ठंड तथा रजाई' में मंत्रीजी का वास्तव कार्य प्रणाली का उद्घाटन करते हुए व्यंग्यकारने प्रहार किया है,

''किसी के पास परमिटों और लाईसेन्सो की रजाई है। सबसे बडी रजाई मंत्री–पद की होती है। किसी को रजाई मिल जाये, तो वह उससे अपना शरीर ही नहीं मुँह भी अच्छी तरीके से ढाँक कर सो जाता है। फिर उसे न किसी का रोना सुनाई पडता है, न छींकना दिखाई देता है।''[५०] इस प्रकार समय के साथ नेताओं में भी परिवर्तन आ जाता है।

भाषणबाजी, उद्घाटन, शोकसभा में मंत्री मशगुल रहते है। उनके कारोबार में अकार्यक्षमता होती है। मंत्री महोदय की मूर्खता पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''एक चित्रकला प्रदर्शनी में एक मंत्री महोदय ने उद्घाटन किया था, एक चित्र की प्रशंसा के फूल बाँध दिए। उसे सर्वश्रेष्ठ घोषित किया। जब बाद में पता लगा कि कार्यकर्ता भूल से वह चित्र

उल्टा टँगा हुआ था तो मंत्रीजी काटकर रह गये''[५१] इस प्रकार वास्तविकता जाने बगैर बोलना उनकी आदत बन गयी है।

संक्षेप मे मंत्री प्रजातन्त्र का महत्वपुर्ण भाग होता है। वे चुनाव के पश्चात सत्ताधारी पार्टी में रहकर संसद एवं विधानभवन में बैठकर लोगों के प्रश्न एवं समस्या सुलझा सकते है, लेकिन परिस्थिति का गांभीरता न समझकर वे भाषणबाजी करते है। मंत्री महोदय राजनीति में भी व्यापार करते है, सौदेबाजी करते है, बिना रिश्वत लिये आज कहीं भी काम नहीं होता है, यहाँ तक मंत्री बनने के पश्चात की दशा उसमें जमीन आसमान का फर्क हो जाता है। मंत्री होने के पूर्व पत्थरों पर खर्राटे की नींद आती थी अब रेशमी रजाई का बिनौला चुभता है। मंत्री की कथनी और करनी की विसंगतिपूर्ण कार्यप्रणाली पर व्यंग्यकार ने व्यंग्य किया है और मंत्रियों की पोल खोल दी है।

५.३.८. दलबदलू प्रवृत्ति :

शासन की नीति के संबंध में मुलस्वरूप से विचार रखनेवाले कुछ व्यक्तियों के संगठन को राजनितिक दल कहा जाता है। राजनितीक दल अपने सिध्दांतो के अनुसार जहाँ शासन चलाने के लिए प्रयत्नशील होते है वहाँ दूसरी और अपने संयुक्त प्रयत्नो द्वारा सरकार पर भी नियंत्रण रखते है। राजनीति दल के लिए कुछ आधारभूत तत्वों का होना आवश्यक है, जिससे मौलिक सिध्दांतो पर एकमत संवैधानिक तरीकों का होना आवश्यक है, जिससे मौलिक सिध्दांतो पर एकमत संवैधानिक तरीकों का प्रयोग, और उद्देश्य की पूर्ति के लिए शासन की शक्तियाँ प्राप्त करने का प्रयत्न करना। आदि का प्रयोग, और उद्देश्य का प्रयत्न करना आवश्यक होता है। साधारणः कुछ व्यक्तियों का एक ऐसा संगठन, जो निश्चित सिध्दांतो पर एकमत है तथा हित के लिए शासन की बागडोर अपने हाथ में लेने के लिए संवैधानिक तरीको से प्रयत्नशील है, उसे राजनीतिक दल कहला जाता है।

नेताओं का दलबदलू राजनीति में आम बात है। दलबदलू नीति अनेक व्यंग्य से आकर्षण का केंद्र है। एक जमाना था की नेताओं की पक्ष निष्ठा गर्व की बात थी। नेतागण उसूलों के साथ जुडे रहते थे। उसुलों से समझौता नहीं किया जाता था। परंतु आज उसूल नहीं रहे है। सुबह एक दल के साथ तो श्याम किसी दूसरे दल के साथ ऐसी स्थिति निर्माण हुई है। इसी को लेकर व्यंग्य रचना में लिखा है, '' उधर कितने लोग टूट कर इधर आ मिले, कितने एमेले जो अभी वहाँ दुर बैठे आरसीसी होकर रहे है।''[५२] इस प्रकार आज पलायनवादी नेता अपने स्वार्थ हेतु किसी भी पक्ष के साथ समझौता करते है।

अपना स्वार्थ जब तक पूरा होता है, तभी तक अपने दल के साथ निष्ठा बदली नहीं जाती है। स्वार्थ पूरा होना बंद होते ही निष्ठा बदली जाती है। और अपने पूर्व दल को छोडकर दूसरे दल के साथ रिश्ता जोडा जाता है। इस दलबदलू प्रवृत्ति पर नपे तुले शब्दो में व्यंग्य किया है, ''यदि वे मंत्री महोदय इस्तीफा देने के दबाव पर हमारे आदमी के नाम पर टेंडर मंजूर करने देते है, जो हम उनके साथ है और उनका समाजवाद का कार्यक्रम हमें निष्ठा के नाम खिसककर दूसरे गुट में चले जायेंगे'' [५३] कुछ नेता ऐसे है कि सरकार चाहे किसी भी पक्ष कि हो, उसमें उनका मंत्रीपद पक्का होता है। अर्थात उनके दलबदलू प्रवृत्ति की कोई सीमा नहीं होती। दलबदलू करनेवाले नेताओं की इस प्रवृत्ति पर व्यंगात्मक प्रहार किया है, '' मैनें तो समझ लिया कि मेरे जीवन का लक्ष्य मंत्री बनना है। इस सत्य के लिए मैनें इमान, धर्म सबका परित्याग किया सत्य के लिए बडे से बडा त्याग करना पडता है। सत्य मुझसे कभी नहीं छूटा। किसी भी पार्टी का मंत्रीमंडल बना, मै उसी का हो गया। आप मेरे आदर्श पर चले।''[५४] इस प्रकार स्वार्थ ही आज के नेताओं के लिए सर्वोपरी होता है।

दलबदलू प्रवृत्ति के कारण नेताओं मे नियतपर भरोसा नहीं किया जा सकता इस संदर्भ में लिखते है, ''विधायकों की नियत का क्या भरोसा जिस पार्टी से चुने जाते है। उसी पार्टी को छोड जाते है। सैकडो एकर भुमि होते हुए भी भूमिहीनोंमे नाम लिखा देते है।''[५५] इस प्रकार लाभ पाने के लिए वे कुछ भी करने के लिए तैयार है।

नेताओं कि दलबदलू प्रवृत्ति के कारण स्थिति ऐसी निर्माण हो गयी है, इन नेताओ को सभी प्रकार के रंगो की टोपियों का थैला अपने पास रखना पड रहा है। नेताओं के दलबदलू प्रवृत्ति पर आघात करते हुए लिखते है, ''आप हर प्रकार की टोपियों का थैला अपने पास रखीए अपने डायरी में अप टु डेट सुचना रखीए। हर एम.एल.ए. की सूची प्रतिदिन दशा नोट करीए यदि किसी जनसंबंधी न अपने को बदल लिया है, तो उस स्थान पर जिस रंग की टोपी वाला हो गया है, वैसा निशान उसी रंग को लगा दिजीए।'' [५६] इस प्रकार जातिवाद को आधार आज कि राजनीति चलती है।

संयुक्त विधायक दल तथा संयुक्त मोर्चे की सरकारों की बाढ आ गई। छोटे–छोटे मंत्रिमंडल बढते चले गये सरकारे फिर भी स्थायी न रह सकी। विधायक एक पार्टी से दूसरी पार्टी में ऐसे आते–जाते रहते है जैसे रेल के डिब्बे से दूसरे में या एक वेश्यालय से दूसरे वेश्यालय में। ऐसी दलबदलूओं की मनोवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए लिखते है, ''राजनीति के मर्दों को देखे, वे उसी के घर में बैठ जाते है, जो मंत्रिमंडल बनाने में सर्मथ हो। शादी इस पार्टी से हुई थी मगर मंत्रिमंडल दूसरी पार्टीवाला बनाने लगा तो उसी की बहु बन गये। राजनीति के मर्दो ने वेश्यालय को मात कर दिया। किसी–किसी ने तो घण्टे भर में तीन–तीन खसम बदल डाले।''[५७] इस प्रकार सत्ता प्राप्ति के लिए पक्ष त्याग करनेवाले लोगों पर व्यंग्य किया है।

अवसरानुकूल गिरगिट की भाँति रंग बदलने और सब प्रकार के भ्रष्टाचार और व्यभिचार में लिप्त किंतु उपर से सफेदपेशी का लबादा ओढे हुए एक नेता पर वृत्तांत के रूप में व्यंग्य किया है, ''आयु मे वृध्दि होने के बावजूद भी वे प्रगतिशील ही रहे। अंग्रेजी हुकूमत में वे रायबहाद्दुर बने और स्वाधीनता के पश्चात उन्होंने उसे भी राजनीतिक रूप दिया। जब देश में समाजवाद आया तो वे पंक्ति में सबसे आगे खडे हो गये। सारे समाज का धन वे अपने पास ट्रस्ट की भाँति रखते थे जो गांधीवाद के एकदम अनुकूल था। इस दिन मे गया तो वे एक नक्सलपंथी से प्रेम वार्ता में सलग्न थे। मुझसे कहने लगे कि यदि अब संपत्ती

बचानी है तो नक्सली होने के अतिरिक्त कोई राह नजर नहीं आती।''[५८] इस प्रकार राष्ट्र के खिलाफ काम करनेवालों के साथ वे हाथ मिलाते हुए नजर आते है। दलबदलू उतने अधिक चिकने घडे बन चूके है कि, कभी भी परिस्थितियों के साथ तालमेल बैठा लेना उनके लिए चुटकीयों का खेल हो गया है। ऐसी विषम स्थिति पर व्यंग्यकार ने कटु व्यंग्य किया है।

भारतीय राजनीति में दलबदल की सबसे बडी विसंगति और विकृती यही रही है कि, दलबदल न तो सिध्दांतो के आधार पर किया जाता है और न तो नीति के आधार पर। दल –बदल अवसरवादिता के आधार पर किया जाता है। यह एक संक्रमक रोग की भाँति फैल रहा है, प्रजातंत्र के लिए यह सबसे बडा संकट बन गया है। भारतीय प्रजातंत्रवाद में पार्टी व्यवस्था कुछ इस भाँति बनती है कि पार्टीयाँ सिध्दांतो और नीति पर आधारित न होकर किसी बडे नेता के इर्द–गिर्द कुकुरमुत्तों की भाँति उठ खडी होती है। यह भारतीय प्रजातंत्र के लिए बडा खतरा है।

५.३.९. राजनीतिक भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार शब्द को यदि परिभाषित किया जाए तो कहा जाएगा जिसका आचरण भ्रष्ट हो गया है। जिसमें सदाचरण का लोप हो गया है। भ्रष्टाचार राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक, आत्मिक सब प्रकार का होता है।

स्वतंत्रता से पूर्व भी भारत में भ्रष्टाचार व्याप्त था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् वह ज्यादा बढ गया है। आज भारत के समस्त जन–जीवन को भ्रष्टाचार ने जकड लिया है। वह उसका रस चुसने लगा है।

भ्रष्टाचार का बोलबाला इतना अधिक बढ गया है कि, आज हर व्यक्ति यह सोचता है कि, बिना सिफारीश के या बिना रिश्वत दिए साधारण से साधारण काम हो ही नहीं सकता। मामला चाहे नियमित काम का ही क्यों न हो। रिश्वत देना–लेना एक आम बात बन

गयी है। नेहरूजी ने एक बार की खाई बढती जा रही है, भयंकर से भयंकर होती जा रही है, और इस खाई में देश डूबा जा रहा है।

भ्रष्टाचारी दानव के अनेक रूप है। इसकी क्षुधा सदैव ही अतृप्त रहती है। घूसखोरी, कथनी–करनी का अंतर, भाई–भतीजावाद, जातियवाद, राजकीय सुविधाओं का अनुचित प्रयोग, आर्थिक लुट आदि रूपों से वह दिखाई देता है। आज मंत्रियो, कर्मचारियों और वे सब जो प्रशासन से किसी भी प्रकार से संबंध है, भ्रष्टाचार में लिप्त है।

आज स्थिति ऐसी है कि, कोई भी ऐसा कार्य नहीं है जिसमें भ्रष्टाचार न हो। प्रभावशाली स्थान पर नियुक्त अपने प्रभाव का प्रयोग हर छोटे–बडे स्वार्थ सिध्दि में करता है। प्रतिभा एवं गुणों का विचार न करके, पार्टीबाजी के आधार पर विचार किया जाता है, इसका और भी अधिक विकृत रूप लेकर कार्य करता है।

आज भ्रष्टाचार ईश्वर का ही प्रतिरूप बन गया है। क्योंकि उसकी ही सबसे अधिक पूजा हो रही है। अर्थात ईश्वर का प्रतीक बन गया है, ''राजन, यह स्थूल नहीं सुक्ष्म है, अगोचर है। पर सर्वत्र व्याप्त है। उसे देखा नहीं जा सकता, अनुभव किया जा सकता है। राजा धन्य हो जाता है, कह उठता है, यह तो ईश्वर के गुण है, क्या भ्रष्टाचार ईश्वर है?''[५९] इस प्रकार आज सभी स्थानोंपर भ्रष्टाचार व्याप्त है। यह बात सामने आती है। कोटा पध्दति आज सर्वत्र व्याप्त है। कोटा पध्दति के कारण भ्रष्टाचार को बढावा मिल रहा है। देवता भी वरदान देते वक्त कोटा पध्दति का इस्तेमाल करने लगे है। अर्थात इसमें भी राजनीति आ गयी है।

''देखो देवता, अपने कोटे की बात करके तुम हार नहीं सकते। मैं जानता हूँ तुम यहाँ वरदान बचाकर ले जाओगे और फिर उन बचे वरदानों को ब्लॅक में बेंच दोंगे।'' और वह माँगने पर वरदायी देवता कहते है, ''भ्रष्टाचार के केस के कारण तो वरदान देने का लाईसेन्स ही कैन्सिल हो गया।''[६०] कोहलीजी के इस वाक्य में कोटा पध्दति पर व्यंग्य है।

आजादी की घास गुलामी के घी से अच्छी होती है। जनता संघर्षरत रही है और आजादी की घास को संतोषपूर्वक चरती भी रही किंतु जनता का दुर्भाग्य यह रहा है कि, आजादी के इतने वर्ष बीत जाने पर भी जनसामान्य लोंग इससे वंचित है, ''मगर हमने देखा कि कुछ लोगों में अपनी काली–काली भैंसे आजादी की घास पर छोड दी और घास उनके पेट में जाने लगी। तब भैंसवालोंने उन्हें दुह लिया और दुध का घी बनाकर हमारे सामने ही पीने लगे।''[६१] यहाँपर आजादी के पश्चात की स्थिति पर व्यंग्य किया है।

भ्रष्टाचार कि बीमारी खत्म होने वाली नहीं है। भ्रष्टाचार जादूगार के थैली की तरह है, जिसमें होनेवाले पैसे खत्म नहीं होते। व्यंग्यकार इस संदर्भ में लिखते है, ''जादूगर छोटी टेबल पर रखी एक थैली को उलटाता है और रूपये थैली में से गिरने लगते है'' जादूगार कहता है, ''ये करप्शन की, भ्रष्टाचार की थैली है भाईसाहब इसका रूपया कभी खत्म नहीं होगा। थैलीपर नजर रखिये साहबान, इसका रूपया कभी खत्म नहीं होंगा...... करप्शन कभी खत्म नहीं होंगा थैली खाली नहीं होंगी। पिछले तेईस साल से यह जादू इस देश में हर जगह दिखा रहे है। हमें आशिर्वाद दिजीये देवियों और सज्जनों की हम आपकी खिदमत में पेश होते रहे, और ऐसे ही जादू दिखाकर मुल्क का नाम उँचा करे। जयहिंद।''[६२] इस प्रकार लोगों को नए–नए प्रलोभन दिखाकर फँसाया जाता है।

भ्रष्टाचार अंगूर की लता है, जो सभी को अपनी ओर आकर्षित करती है। सभी के मन में पाप जागृत करती है। इस संदर्भ व्यंग्यकार लिखते हे, '' इस देश का वैधानिक उपभोक्ता या स्वामी कोई नहीं है। यह तो अंगूरो की बेल है। सारे मुहल्लेवालों के मन में इसने पाप जगा रखा है। जो आता है गुच्छा तोडकर ले जाता है। कभी–कभी मुहल्ले के बाहरवाले भी हाथ मार जाते है।''[६३] इस प्रकार सभी लोग अपनी तरफ भ्रष्टाचार बढाने का कार्य करते है।

रिश्वत अफसर लोगों ने ली तो हमारा क्या होगा पार्टी का क्या होगा इसलिए अफसरों को रिश्वत लेने से रोक लिया एवं पार्टी के हित के लिए मंत्री महोदय न रिश्वत ले ली। पार्टी के लिए चंदे के नाम पर यह सब कुछ होता है।

संक्षेप में भारतीय राजनीति में भ्रष्टाचार का बोलबाला है। कोई भी अवसर क्यों न हो रिश्वत लेने का बहाना निकाल ही लिया जाता है। भ्रष्टाचार का साम्राज्य दूर–दूर तक फैला हुआ है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में वह ज्यादा बढ गया है। आज भारत के समस्त जन–जीवन को भ्रष्टाचार ने जकड लिया है और वह उसका रस चुसने लगा है। जिसमें राजनीति भी बहुत आगे निकल गयी है।

५.३.१०. राजनीतिक भाई–भतीजावाद

आज किसी भी पद के लिए योग्यता को एवं प्रतिभा को नहीं देखा जाता है, बल्कि भाई–भतीजावाद और रिश्तेदारी ही आज की योग्यता बन गई है। ''अन्धा बाँटे रेवडी, फिर फिर अपने ही को दे।'' इस कहावत के अनुसार सब कुछ अपने संगे संबंधियों को ही दिया जाता है। भाई–भतीजावाद भयंकर रूप से फैला है। यहाँ, वहाँ सब जगह, छोटी–छोटी बातों में भी सी.एम., पी.एम, एम.पी. एम.एल.ए., की एप्रोच और फुल चलती है। क्योंकि इसके द्वारा ही उनके सगे सम्बधियों का कल्याण हो रहा है, '' साहब ने कहा, कहाँ तबादला कर रहे है? फलाँ जगह सी.एम.का भांजा है, फलाँ जगह सी.एम. का साला है....कोई जगह ऐसी नहीं है जहाँ किसी का कोई न हो। ''[६४] इस प्रकार सभी स्थानोंपर अपने परिवार को स्थान देने की नेताओं में होड ही लगी है।

भाई–भतीजावाद तथा नेताओं, मंत्रियों के रिश्तेदारों की येन–केन प्रकारण – सरकारी नौकरीयां में नियुक्ति करने की योजना बनाई जाती है। एक बार नेताओं के रिश्तेदारों में बेकारी की समस्या बेहद बढ गई इससे नेता वर्ग संकट ग्रस्त हो गया। राहुरूपी भतीजे उन्हें घेरने लगे। नेताओं ने भाई–भतीजों को काम दिलाने के लिए अलग–अलग

प्रकार के हथकण्डे अपनाये। विदेशों की राजधानियों मे दिल्ली की परिवहन की शाखा खोल दी जाए और वहाँपर रिश्तेदारों को नौकरीयां दी जाए। इस योजना पर जब शंका उठाई तो देखा तो पहले से ही बसें बहुत कम है। इसपर व्यंग्यकार 'जननायक' कहते है, ''दिल्ली निवासियों को दिल्ली परिवहन की बसों मे चढने का बहुत शौक है क्या? जन नायक बोले, उन्हें कहो वे विदेशों की राजधानियों में जाकर दिल्ली परिवहन की बसों में चढ सकते है। या यदि उनमें धैर्य है तो जब बसे बाहर से आकर दिल्ली में प्रवेश करें तो वे भी दिल्ली के भीतर आने-जाने के लिए उनका सदूपयोग कर सकते है।''[६५] इस प्रकार सभी बाते अपने अनुकूल करने का प्रयास नेताओं द्वारा हुआ है।

भाई-भतीजावाद आज राजनीति में पनपा है। आज किसी भी पद के लिए योग्यता, प्रतिभा को नहीं देखा जाता। रिश्तेदारों को दिया जाता है, जिसमें ठेकेदारी, नौकरीयाँ, सुविधाए आदि भाई-भतिजो को मिल जाती है। नेताओं की इसी प्रवृत्ति पर व्यंग्यकार डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने व्यंग्य किया है। अपने रिश्तेदारों को, जातीवालों को और चमचों को अच्छे-अच्छे पद देकर सुयोग्य पात्रों को निराश कर दिया जाता है।

एक नेता अपने सभी रिश्तेदारों को बिहार में आकर बसने का आवाहन करता है, '' हमारे भाई-भतीजे, मामा, मौसा, फुफा, साले, बहंनोई जो जहाँ भी हो बिहार में आकर बस जाये और रिश्तेदारी के सबुत समेत जीवन सुधारने की दरख्वास्त अभी से दे दे।''[६६] इस प्रकार राजनेताओं द्वारा अपने परिवारवालों के हित की ही चर्चा अधिक होती है।

अंतः स्पष्ट है कि, राजनीति में भाई-भतीजावाद पनपा है। आज योग्यता बन गई है। इसी कारण भाई-भतीजावाद को बढावा मिल रहा है। चुनाव में टिकट, दप्तरों में नौकरी, स्कूलों में प्रवेश, कोटा परमिट लाईसेंन्स, रिश्तेदारों को ही दिया जाता है। इससे जो योग्य है वे आगे नहीं आ पाते।

निष्कर्ष :

आज जीवन के हर क्षेत्र को राजनीति ने अपना लिया है। राजनीति जीवन में यत्र–तत्र सर्वत्र व्याप्त है। स्वातंत्र्यपूर्व काल में अंग्रेज सत्ताधीश थे। राजनीति के सूत्र अंग्रेजो के हाथ में थे। अंग्रेजी सत्ता के विरोध में देशवासियों में देशभक्ति की भावना निर्माण करने में व्यंग्य का साहित्य दुषित हो गया है। जिससे राजनेता तथा राजनिती दोनों कभी हास्यापद बन जाते है, तो कभी उनकी पोल खुलती है, अधिकातार राजनीतिक विसंगतियों का परिणाम जनसामान्य को भुगतना पडता है। इसलिए व्यंग्यसाहित्य में कलूषित राजनिती का विरोध करने के लिए डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी के व्यंग्य का साहित्य में योगदान रहा है।

आज भारत एक प्रभुता, सम्पन्न, लोकतांत्रिक गणराज्य है। चुनाव प्रक्रिया से लोग अपना नेता चुनते है। राजनीतिक दल अपने सिध्दांतो के अनुसार शासन चलाने के लिए प्रयत्नशील होते है। प्रजातंत्र की सफलता के लिए विपक्ष दल का होना अत्यंत आवश्यक है। संसद के लिए विपक्ष दल देश के विकास की दिशा तय कर सकते है। मंत्रालय का मुख्य कार्यालय राष्ट्रीय नीति का निर्धारण करना है। सचिवालय का मुख्य कार्य सदन की कार्यवाही की सही–सही रिपोर्ट तैयार करना है। शासन व्यवस्था विधायक के अनुसार कार्य करते है। इस प्रकार भारतीय प्रजातंत्र के अन्तर्गत राजनीति के भिन्न–भिन्न अंग है।

भारतीय चुनाओं में विकृती का आरम्भ उम्मीदवारों के चयन से ही हो जाता है। यह विकृति सभी पार्टीयो में विद्यमान है। जातिवाद के नामपर उम्मीदवारो का चयन किया जाता है। आम चुनाव में प्रचार बहुत धूमधाम से किया जाता है। आज चुनाव एक खेल बन चुका है, सफल गुंडे आज देश के नेता एवं कर्णधार बनते जा रहे।

अनैतिकता से चुनकर आ जाते है उनसे चुनाव के पश्चात कुछ अपेक्षा करना भी व्यर्थ है। प्रजातंत्र आखिर एक तन्त्र ही है। उसमें भी कुछ गलत है। वर्तमान काल में प्रजातंन्त्र का सिर्फ मजाक उडाया जाता है। प्रजातंत्र गूँगे, बहरों की तरह चलता है। समाज के प्रश्न जैसे के वैसे है, जो सिर्फ प्रजातंत्र के नाम पर नेता लोग अपनी समस्या सुलझाने का कार्य करते है। चुनाव के समय प्रजातन्त्र में वादे किए जाते है, चुनाव के पश्चात किए

गये वादे नेता लोग भूल जाते है। सभी पार्टीया प्रजातन्त्र को सफल बनाने का ढोल पिटती है लेकिन ऐसा होने से प्रजातन्त्र कभी सफल नहीं हो सकता।

संसद भवन एवं विधानमण्डल जनतन्त्र का आधार स्तंभ होता है। यही से देश और राज्य शासन की बागडोर चलती है। संसद भवन एवं विधानमण्डल जनता की इच्छा आकांक्षाओं के प्रतिबिंब होते है। यहाँ देश और राज्य की समस्या का विचार विनिमय के माध्यम से हल निकाला जाता है। परंतु वास्तव में यह होता है कि, अधिकांश सदस्य सोते रहते है। यहाँ जो बहस होती है, निरर्थक होती है। मन में आया वही बोलते रहते है। इस भवन में कई–बार गाली–गलौज होती है, जूते–चप्पलों का आदान–प्रदान होता रहता है। यह स्थिति प्रजातन्त्र के खोखलेपण का प्रमाण है।

सत्ताधारी पार्टीया सत्ता में आते ही अपना असली रूप दिखाने लगती है। चुनाव के समय किए वादों कों बाद में भूल जाते है। सत्ता के आते ही अपनी–अपनी स्वार्थसिध्दि को पूरा किया जाता है। सत्ता में आने के पश्चात् भ्रष्टाचार की अंधेर गर्दी की धाँधली की और स्वार्थ लोलूपता की भावना बढ जाती है। इस प्रकार व्याप्त विसंगति, विकृति पर व्यंग्य के माध्यम से डॉ. नरेन्द्र कोहली ने सत्ताधारी पार्टीयो पर व्यंग्य किया है।

प्रजातंत्र की सफलता का सामर्थ्य विपक्षी दल में होता है। यदि विपक्षी दल न हो तो प्रजातन्त्र में सत्ताधारी दल तानाशाह बन जाता है। लेकिन आज देश के हित का विरोध करनेवाले विपक्ष दल के राजनीतिक लोग भी दिखायी देते है। उनके कार्य व्यापार की पध्दति कथनी और करनी की विसंगति, और जबान के ढीलेपन को लेकर व्यंग्यकार ने विपक्ष दल का पर्दाफाश किया है।

आज के नेता और राजनीतिक कार्यकर्ता जनता की नजरों में आदर, स्नेह और आस्था के पात्र नहीं रह गये है। नेता भ्रष्टाचार, व्यभिचार, एवं कुकृत्य में लिप्त है वे अपनी मनमानी करते रहते है। विडम्बना यह है कि, देश के रक्षक ही भक्षक बन गए है। उसका स्वरूप विकृत हो गया है। नेता का आचरण भ्रष्ट हो गया है। वह स्वार्थान्ध और लोलची हो गए है। जनता की पीडा को नहीं देख पाते। व्यंग्यकारने नेता के कथनी और करनी के वैषम्य पर कसकर व्यंग्य किया है।

मंत्री प्रजातंत्र में महत्वपूर्ण होता है। जो चुनाव के पश्चात सत्ताधारी पार्टी में रहकर संसद एवं विधान भवन में बैठकर लोगों के प्रश्न, समस्या सुलझा सकते है, लेकिन परिस्थिति की गम्भीरता न समझकर वे भाषणबाजी में कार्यरत रहते है। मंत्री राजनीति में भी व्यापार करते है। सौदेबाजी करते है। बिना रिश्वत लिए काम नहीं करते मंत्री की इस कथनी करनी की विसंगतपूर्ण कार्य प्रणाली पर व्यंग्यकारने व्यंग्य किया है।

राजनीति में दलबदल न तो सिध्दांतो के आधार पर किया जाता है और न ही नीति के आधार पर। दल–बदल अवसरवादिता के आधारपर किया जाता है। यह एक संक्रामक रोग की भाँति फैल रहा है, प्रजातन्त्रवाद के लिए यह सबसे बडा खतरा बन गया है। इस दलबदल पर व्यंग्यकारने कसकर व्यंग्य आघात किए है।

आज राजनीतिक में भ्रष्टाचार का बोलबाला इतना अधिक बढ गया है कि, आज हर एक व्यक्ति सोचता है कि बिना शिफारिश या रिश्वत बिना काम हो ही नहीं सकता। हर कार्य में भ्रष्टाचार व्याप्त है, प्रभावशाली स्थल पर नियुक्ति भ्रष्टाचार के बिना संभव नहीं है। प्रतिभा एवं गुणों का विचार न करते हुए रिश्वत के आधार पर नियुक्ति मिल जाती है। व्यंगकारने भ्रष्टाचार पर अधिक मात्रा में व्यंग्य किया है जो सोचने के लिए मजबूर कर देता है।

राजनीतिक में भाई–भतीजावाद अधिक पनपा है। आज किसी भी पद के लिए योग्यता, प्रतिभा को नहीं देखा जाता, रिश्तेदारी ही आज कि योग्यता बन गई है। इसी कारण भाई–भतीजावाद को बढावा मिल रहा है। चुनाव में टिकट, दफ्तरों में नौकर, स्कूल में प्रवेश, लाईसेन्स सब रिश्तेदारों को ही दिये जाते है। भाई–भतीजावाद को व्यंग्यकार ने अपने तिखे बाणों से निशाना बनाया है।

राजनीतिक दाँव–पेच चुनाव के समय से आरंभ हो जाते है, वोट की खरीदारी, जातिधर्म के नाम पर वोटो की मांग, चुनाव प्रचार के समय अलग–अलग बहाने बनाना आदि राजनीतिक दाँव–पेच का प्रयोग राजनीति में किया जाता है। इस दाँव–पेच का व्यंगकार डॉ. नरेन्द्र कोहलीजी ने पर्दाफाश किया है।

संदर्भ ग्रंथ

१. कोहली नरेन्द्र – हमरा को वोट दो, पृ.२०८

२. शास्त्री शिवप्रसाद भारद्वाज – मानक हिन्दी शब्दकोश,२००३ पृ.सं. ८५८

३. बॅनर्जी पी.एन. – हिन्दु पालिटी – पृ. सं. ३३६

४. सॅम्युअल इ. फाईनर, – कम्प्यारीटिव्ह गर्व्हरमेन्ट – पृ. सं. ०७

५. वर्नोन वान डायन पृ. सं. ३४

६. Political Science : A Philosophical Analysis Stanford : Standard University Press1962, Page No. 134

७. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.२८७

८. त्यागी रविन्द्रनाथ – शोकसभा ,पृ. सं. ५१

९. परसाई हरिशंकर – निठल्ले की डायरी(भेडे और भेडियें), पृ. १३९–४६

१०. कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ.सं. ३०१

११. जोशी शरद – 'जीप पर सवारी' इल्लियाँ, पृ.सं. १६३–१७४

१२. कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ.सं. ३१४

१३. कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ.सं. २१६

१४. पुणतांबेकर शकंर – विजीट यमराज की, पृ. १७६–१८१

१५. कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ.सं. २४

१६. त्यागी रविन्द्रनाथ – अतिथी कक्ष, पृ. सं. ५१

१७. चतुर्वेदी बरसानेलाल – टालु मिक्सर, पृ. सं. १५

१८. पुणतांबेकर शकंर – कैक्टस के काँटे, पृ. ६०

१९. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.१२७

२०. जोशी शरद – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ.सं. १९०

२१. कोहली नरेन्द्र – आधुनिक लडकी की पीडा, पृ.सं. ७२–७३

२२. नगर अमृतलाल – कृपया दायें चलिये, पृ. २७

२३. परसाई हरिशंकर – सदाचार का तावीज, पृ.सं. १२०

२४. परसाई हरिशंकर – ठिठुरता हुआ गणतंत्र, पृ.सं. २९

२५. कोहली नरेन्द्र – आधुनिक लडकी की पीडा, पृ.सं. ३८७

२६. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.६९

२७. जोशी शरद 'जीप पर सवारी' इल्लियाँ, पृ.सं. २९

२८. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.२००

२९. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.१०३

३०. कोहली नरेन्द्र – आधुनिक लडकी की पीडा, पृ.सं. १४३

३१. त्यागी रविन्द्रनाथ – देवदार का पेड, 'अफसरशाही और उसके वाद' पृ.४३

३२. मजीठिया सुदर्शन – मुख्यमंत्री का डण्डा, पृ. ८४ से ९५

३३. तिवारी बालेन्दुशेखर – व्यंग्य ही व्यंग्य, पृ. ०७

३४. कोहली नरेन्द्र – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ.सं. १३२

३५. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.३००

३६. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.३३५

३७. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.२०१

३८. कोहली नरेन्द्र – आधुनिक लडकी की पीडा, पृ.सं. ३९

३९. श्रीवास्तव सुबोधकुमार – शहर क्यों बंद है? पृ. १६

४०. परसाई हरिशंकर – पगडण्डियों का जमाना, पृ. २४

४१. परसाई हरिशंकर – निठल्ले की डायरी, पृ. ५४–५५

४२. परसाई हरिशंकर – पगडण्डियों का जमाना, पृ. ३०

४३. कोहली नरेन्द्र – त्राहि– त्राहि, पृ. २१५

४४. परसाई हरिशंकर – और अंत में, पृ.सं. ३७

४५. कोहली नरेन्द्र – त्राहि– त्राहि, पृ. २१५

४६. कोहली नरेन्द्र – आयोग समग्र व्यंग्य – ५ पृ. १२७

४७. कोहली नरेन्द्र – आयोग समग्र व्यंग्य – ५ पृ. २०७

४८. कोहली नरेन्द्र – आयोग समग्र व्यंग्य – ५ पृ. २०३

४९. सुरीरवाला रोशनलाला – पत्नी शरणम् गच्छामि, पृ. १८४

५०. उधृत हाथरसी काका – श्रेष्ठ हास्य के व्यंग्य निबन्ध, पृ.सं. २०

५१. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोण, पृ.सं. २४५

५२. परसाई हरिशंकर – वैष्णव की फिसलन १९७६, पृ. सं. १८५

५३. राय अमृत – बतरस, पृ.सं. १०७

५४. जोशी शरद – 'जीप पर सवारी' इल्लियाँ, पृ.सं. ७४

५५. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोण, पृ.सं. २५

५६. ठाकुर श्रीराम – मेरी प्रतिनिधी व्यंग्य रचनायें, पृ.सं. १२

५७. बैजल श्याम – टालु मिक्सर, पृ.सं. २८

५८. परसाई हरिशंकर – अपनी बीमारी जिसकी छोड भागी है, पृ. ५२

५९. कोहली नरेन्द्र – देश के शुभचिंतक, पृ.२८८

६०. परसाई हरिशंकर – सदाचार का ताविज, पृ.सं. २

६१. कोहली नरेन्द्र – एक और लाल तिकोण, पृ.सं. १८

६२. परसाई हरिशंकर – पगडण्डियो का जमाना, हम वे और भीड, पृ.सं. ३०

६३. जोशी शरद – 'जीप पर सवारी' इल्लियाँ, सरकार का जादू, पृ.सं. १५१

६४. कोहली नरेन्द्र – जगाने का अपराध, अंगुर की बेल, पृ.सं. ९७

६५. परसाई हरिशंकर – मिठल्ले की डायरी, शिवशंकर का केस, पृ. १३४

६६. परसाई हरिशंकर – ठिठुरता हुआ गणतंत्र, पृ.सं. ३८

षष्ठ अध्याय

''उपसंहार''

डॉ. नरेन्द्र कोहली के हिन्दी साहित्य में साहित्य मानव जीवन की अभिव्यक्ति है। वक्र विशिष्ट भावभंगिमा की अभिव्यक्ति साहित्य में है। व्यंग्य एक सहज अभिव्यक्ति है। हर साहित्य के बीज रूप में व्यंग्य होता ही है। आज की सदी में व्यंग्य लेखन के प्रतिमान बदल रह है। समकालीन विसंगत वातावरण में व्यंग्य लेखन रचना कर्म बन गया है। हिंदी साहित्य के अंर्तगत आज तक काफी मात्रा में व्यंग्य लेखन का कार्य किया है। आज व्यंग्य विधा उपेक्षा से हटकर सभी विधाओं में सरताज विधा बन गई है, किंतु खेद की बात है, आज भी इसके सैध्दधानिक पक्ष को लेकर बहुत गंभीर बहस नहीं हुई है।

मूल्यांकन की दृष्टि से व्यंग्य साहित्य उपेक्षित रहा है। इस दृष्टि से जो मूल्यांकन का प्रयास हुआ है, वह भी बहुत कम मात्रा में है।

समसामायिक परिस्थितियों का जीवन से घनिष्ठ संबंध होता है। जब यें परिस्थितियाँ ही विकराल रूप धारण कर लें, तो फिर जीवन में क्या रह जाता है?

परिस्थितियों में व्याप्त विकृतियों, विसंगतियों, अनीतियों तथा अन्याय आदि ने स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में भारतेंदु युगीन व्यंग्य की पुनरावृत्ति की है। आज यद्यपि देश स्वंतत्र है और कहने को प्रजातंत्र अर्थात जनता का राज्य है। विडंबना यह है कि, आज भी स्थिति जैसी की वैसी त्रासद बनी हुई हैं। भ्रष्ट राजतंत्र, पुलिस, अफसरशाही, रिश्वतखोरी, लालफीत शाही का आतंक बना हुआ है। सामाजिक वर्गभेद, शोषकों का अत्याचार, शोषितों की पीडा, अभिजात्यों का दलितों पर होनेवाला अन्याय, धार्मिक संकीर्णता आदि ने जोर पकड लिया है।

सन १९६१ के पश्चात् अन्याय, अत्याचार और भ्रष्टाचार की रफ्तार तेज हो गयी है। जनता में जब तक पुराने घपले–घोटाले की जानकारी पहुँचे, तब तक नया घोटाला सामने आ जाता है। आज के युग की पीढ़ी के साहित्यकारों को व्यंग्य रचना के लिए समाज से, संस्कृति से और वर्तमान राजनीति से पर्याप्त सामग्री मिलती है। साहित्यकार डॉ. नरेन्द्र

कोहली ने अन्य विधाओं के अंतर्गत भी और स्वतंत्र रूप में भी 'व्यंग्य' रचनाएँ की है। आधुनिक युग के साहित्यकारोंने व्यंग्य का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है।

- हिन्दी साहित्य में व्यंग्य का लेखन अब पूरे विकास पर है। पाठक लोग हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल, रवींद्रनाथ त्यागी, केशवचंद्र वर्मा आदि रचनाकारों को मात्र हँसी–मजाक का लेखन न मानकर जीवन को संजिंदगी से जीनेवाले और उसकी विसंगतियों को निर्मतासे प्रहार करने वाले रचनाकार मानते है। व्यंग्य जीवन के यथार्थ को व्यक्त करने वाली विशिष्टता की गरिमा प्राप्त करके और जीवन के समग्र अनुभव में लीन होकर ही समझा जा सकता है। हिन्दी साहित्य में व्यंग्य किसी प्रकार के बुध्दि–विलास का साधन नही रह गया है, बल्कि समूचे परिवेश के विरोधाभासों को और अकांक्षा को जगाने का कार्य कर रहा है।

- व्यंग्य लेखक समाज का सच्चा सचेतक और उन्नायक है। वह समाज की पतनोन्मुखी अवस्था पर केवल उपहास करके ही संतोष नहीं करता, तो समस्या की तह में पैठकर मिथ्याचार, पाखण्ड, अन्याय की बखिया उधेड़ता है। 'व्यंग्य' 'सुधार– का कोरा उपदेश नहीं होता, जो एक कान से सुना दूसरे कान से निकाल दिया। वह तीक्ष्ण बाण की अनी की तरह होता है, जो हृदय में चुभकर सालती रहती हैं। वह अनी नावक के तीर की अनी है, जो गंभीर घाव करती है और पूरे शरीर में फैलती हैं।

- समाज में जब आदर्श और यथार्थ के बीच विचार और कार्य के बीच अंतर्विरोधों की संघर्षमयी स्थिति होती है, तब व्यंग्य की सृष्टि होती है। जहाँ पर यथार्थ संवेदनशीलता, गंभीरता, बौध्दिकता, सांकेतिकता, तटस्थ विश्लेषण क्षमता और भाषा की प्रौढता, अधिकाधिक होती है, वहाँ व्यंग्य अधिक प्रखर बन जाता है। ऐसे में व्यंग्य की धार अधिक पैनी होती है।

- हिंदी में व्यंग्य के लिए जितने साहित्य प्रतिरूप है। शायद उतने अन्य किसी के साथ नहीं हैं। व्यंग्य के लिए आमतौर पर प्रयोग किए गए शब्द है, व्यंग्य, व्यंग, उपहास, कटाक्ष, खिल्ली, ताना, वक्रोक्ति, वाग्वैदग्ध्य, विडंबना, विकृति, व्यंजना आदि। भारतीय साहित्य में व्यंग्य वेदों से लेकर आज के समय तक बराबर विद्यमान है। भारतीय आचार्यो ने व्यंग्य का स्वतंत्र रूप से विचार नहीं किया है। व्यंग्य की स्थितियों का वर्णन भारतीय आचार्यों ने 'बीज' रूप में दिया है। ध्वनि और वक्रोक्ति में व्यंग्य बीज रू प में मिलता है। वक्रोक्ति अर्थात 'वक्र उक्ति' के प्रतिपादन में ही व्यंग्य छिपा है।

- पाश्चात्य साहित्य में भी व्यंग्य काफी समय पूर्व से मिलता है। रोम के प्रथम व्यंग्यकार लूसी सियना ने तत्कालीन राजनीति, राजनीतिज्ञो की प्रवृत्ति, धार्मिकता, अंधविश्वासों आदि पर व्यंग्य रचनाएँ लिखी है। उन्होंने समस्त मानव जीवन की व्यंग्यव्दारा आलोचना की है। जोनाथन, स्विफ्ट, सरर्पेटस, बुटहाऊस, मार्कट्वेन, हेनरी सिसील, रिचर्ड गोर्डन, फ्राय, माइक्स, बैरी, मैकडानल, डिकिन्स, लीकाक, वाल्टेयर, पार्किसन, पीटर, जेरोम, गोल्डस्मिथ, फिन्ले, पीटर, शैली वर्मन आदि रचनाकार व्यंग्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं।

- वैदिक यु के साहित्य में अंध धार्मिकता एवं धर्म की आड में फैली विसंगतियों पर व्यंग्य मिलता है। चार्वाक ने वैदिक कर्मकण्डों की खिल्ली उड़ाई है। संस्कृत साहित्य में पुराणों और आख्यानों में तत्कालीन कुरीतियों और कुप्रथाओं पर व्यंग्य किया हुआ है। 'हितोपदेश' 'पंचतंत्र' शुद्रक के 'मृच्छकटिक' आदि में व्यंग्य के प्रयोग का माध्यम विदूषक रहा है। प्राकृत साहित्य में 'हरिभद्र सूरी' के 'दशवैकालिका टाक' एवं 'उपदेश पद' अंर्तगत धूर्तों की पोल खोल कर सशक्त प्रहार किए हैं। अपभ्रंश साहित्य में 'चौपाइयों' एवं 'चर्यागीतों' में सिद्धों ने तात्कालीन कुरीतियों विसंगतियों का उपहास उड़ाते हुए व्यंग्योक्तियाँ लिखी है।

- हिंदी–साहित्य के आदिकाल में सशक्त व्यंग्य साहित्य की रचना नहीं हो सकी। इस काल में छिटपुट में जितना भी व्यंग्य रचा गया है, उसका स्वरूप निंदा .... का रहा है। भक्तिकाल में कबीर बहुत सशक्त व्यंग्यकार हुए है। इस युग के तुलसी और सूर की रचनाओं में भी व्यंग्य मिलता है। रीतिकाल में बिहारी, रहीम तथा वृंद आदि कवियों ने भी अपने काव्य में व्यंग्य का प्रयोग किया है। बिहारी, रहीम, वृंद की मार्मिक उक्तियों में व्यंग्य की प्रधानता रही है।

- आधुनिक हिंदी साहित्य में व्यंग्य का श्रेय भारतेंदु तथा उनके मंडल को दिया जाता है। भारतेंदु युगीन व्यंग्यकारों ने सामाजिक परिस्थितियों का जमकर मुकाबला किया है। व्दिवेदी युगीन व्यंग्य में आक्रोश अधिक है, हास्य का भाव कम है। भारतेंदु युगीन व्यंग्यकारों ने सामाजिक परिस्थितियों का जमकर मुकाबला किया है। व्दिवेदी युगीन व्यंग्य में आक्रोश अधिक है, हास्य का भाव कम है। निराला छायावाद एवं प्रगतिवाद दोनों के ही प्रणेता थे। उन्होंने 'सरोज स्मृति' में बहुत तीखा व्यंग्य किया है। परंतु यह युग गद्य साहित्य में व्यंग्य का युग नहीं रहा है। इस युग की काव्य रचनाओं में व्यंग्य अधिक दृष्टिगत होता है।

- स्वातंत्र्योत्तर काल में व्यंग्य 'दिन दूना रात चौगुना' फला–फूला यह बात साहित्य के लिए नाज का विषय भले ही हो, परंतु जीवन के लिए कदापि नहीं, क्योंकि व्यंग्य मानव की विसंगतियों एवं विकृतियों को ही पकड़ता है। स्वंतत्रता प्राप्त होते ही नेता वर्ग शासन वर्ग बन गया। नौकरशाही एक ओर नेतओं की सहयोगी बनी तो दूसरी ओर पूँजीपतियों की भी सहायक बनी। नेता, नौकरशाह और पूँजी पति तीनों की साठ–गाँठ के परिणाम स्वरूप महँगाई, काला बाजारी, मिलावटखोरी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, लालफीत शाही आदि का नंगानाच आरंभ हो गया। मूल्यहीन राजनीति का प्रभाव हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों पर

भी पड़ा है। तत्कालीन काल के व्यंग्यकारों को अपनी रचनाओं के लिए इससे अधिकाधिक सामग्री मिलती रही और उन्होंने प्रचूर मात्रा में व्यंग्य रचनाएँ की है।

- स्वातंत्र्योत्तर काल में स्वतंत्र रूप से विकसित हो रही इस विधा को अधिक विकसित करनेवाले व्यंग्य रचनाकारों में सर्वश्री, हरिशंकर परसाई, रवींद्रनाथ त्यागी, शरद जोशी, बरसानेलाल चतुर्वेदी, डॉ. नरेन्द्र कोहली, इंद्रनाथ मदान, श्रीलाल शुक्ल, शंकर पुणतांबेकर, लतीफ घोंघी, गोपाल चतुर्वेदी, केशवचंद्र वर्मा, बालेंदुशेखर तिवारी, के. पी. सक्सेना, सुदर्शन मजीठिया, मधुसुदन पाटील, संतोष खरे, यशवंत कोठारी, श्याम गोयन्का, लक्ष्मीकांत वैष्णव, ज्ञान चतुर्वेदी, यशवंत कोठारी, श्याम गोइन्का, लक्ष्मीकांत वैष्णव, ज्ञान चतुर्वेदी, आदि प्रमुख है। इन व्यंग्यकारोंने राजतीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक, धार्मिक, साहित्यिक, शैक्षिक आदि जीवन के सभी क्षेत्रों को बेपर्दा करते हुए उसके वास्तव को व्यक्त किया है। इन्होंने समाज में व्याप्त अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार, आदि के विरूध्द संघर्ष की प्रेरणा दी है।

- जब तक देश को मुक्त कराने का उद्देश्य रहा तब गांधीवाद, समाजवाद, परंपरावाद और आधुनिकतावाद सब धाराये परस्पर टकराव और विरोध के बिना अविरल प्रवाहीत होती रहीं। आजादी के पश्चात् वह निरर्थक हो गयी हैं। स्वतंत्रता का ध्येय तो अंतिम मंजिल तक पहुँचने का एक पड़ाव मात्र था। वास्तव में राष्ट्र के सम्मुख वर्गहीन, शोषणमुक्त, समृध्दशाली, सुखी समाज और प्रगतिशील समाज की स्थापना का ध्येय था, कि इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक था, कि गतानुगत संस्कारों, रूढियों, सामाजिक कुरीतियों, विसंगतियों, पिछडेपन, कुपमंडूकता तथा विदेशी मानसिक दासता से छुटकारा पाया जाए। इसके लिए आत्मत्याग, चारित्रिक दृढता तथा स्वार्थत्याग के दृढ संकल्प की आवश्यकता थी। किंतु विडंबना यह रही कि इसके एकदम विपरीत हुआ। स्वतंत्रता मिलते ही समस्त

राष्ट्र और समाज स्वार्थान्धता, और आपाधापी की दलदल में फँस गया जिससे उबर पाना संभव नहीं दिखाई देता।

- स्वतंत्रता के पश्चात् एक ओर विभाजन की असहनीय पीड़ा और दूसरी ओर मूँह फाड़े खड़ी अनेक समस्याओं ने परंपराओं को छिन्न–भिन्न कर दिया। इसी समय एक विशिष्ट स्थिति ऐसी भी उत्पन्न हुई, कि नई पीढ़ि का युवक सांस्कृतिक दायित्व के प्रति अनुकूल नही था, वह तो परंपरागत समाज और संस्कृति से भिन्न कुछ नई रचना करना चाहता था। स्वातंत्र्योत्तर युवा पीढ़ी में परंपरागत संस्कृति के प्रति तनिक भी आस्था नही थी। अत्याधुनिक और परंपराओं के परस्पर टकराव से समाज और आधुनिक समाज के बीच की दरार चौडी हो गयी। इन अंतर्विरोध ने एक विचित्र से नये संकट को जन्म दिया है। पुरानी मान्यताएँ तथा धारणाएँ टूट रहीं थी, नई बन नहीं पा रही थी। जो कुछ आधुनिकता के नाम बन पर रहा वह पश्चिम की नकल मात्र रहा है। इन्हीं सांस्कृतिक विषम परिस्थितियों को व्यंग्यकारों ने अपना लक्ष्य बनाया है। विदेश से लौटे भारतीय अपने साथ विदेशी सामान लेकर लौटते है और बड़े गर्व के साथ उनकी अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा करते है, विदेशी के गुण गाते है। विदेशी भाषा, संस्कृति ने भारतीयों के मन में मानसिक दासता कूट–कूट कर भर दी है। आधुनिक समाज अपने संतान को कॅवेण्ट में पढ़ाकर फर्राटे से अंग्रेजी बोलना सिखाना चाहते है। अंग्रेजी चलचित्र देखना गर्व की बात समझी जाती है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण फैशन परास्त समाज में अश्लीलता ने जोर पकड़ लिया है जिसका चित्र पत्र–पत्रिकाओं में दृष्टिगत होता है।

- नारी विषयक देखने का दृष्टिकोण बदल गया है। क्लब, डिनर, डिस्को आदि में नारी को अश्लीलता से देखा जाता रहा है। संस्कृति के कारण नव एवं पुराने पीढ़ियों में टकराहट पैदा हो रही है। पाश्चात्य–संस्कृति का इतना प्रभाव दिखाई देता है, कि भारतीय कला–संगीत और विद्याा इतिहास जमा हो गयी है। इसी कारण नयी एवं पुरानी सांस्कृतिक मान्यताओं का परस्पर टकराव हो रहा है। इस कारण स्थिति

बहुत विषम और विसंगत बन गई है। संक्षेप में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाववश भारतीय संस्कृति परिवेश बैचेन दिखाई देता है। कला, संगीत तथा विद्या टूटती हुई नजर आ रही है।

- आजादी के पश्चात भारतीय राजनीति ही नहीं समाज भी प्रभावित हुआ है। स्वाधीन भारतीय समाज को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इनमें से कुछ समस्याएँ उसे परंपरागत रूप से विरासत में प्राप्त हुई है और कुछ पाश्चात्य जगत् के प्रभाव से आ गयी है। राजनैतिक आजादी को अंतिम लक्ष्य मानकर भारतीय समाज संतुष्ट हो गया था। लेकिन उसके उपभोग के लिए समाज में अपेक्षित वातावरण का निर्माण न हो सका। गांधीजी ने लोकतंत्र को गाँव–गाँव तक पहुँचाने पर बल दिया था, उनकी ग्राम–स्वराज्य की भावना पूरी न हो सकी। ग्रामीण–जीवन को उन्नत करने के प्रयत्न किये गये, किंतु उससे गाँवो की सादगी एवं सरलता ही नष्ट हुई। ग्राम हो या शहर, राजनीति ने सबको प्रभावित किया है। स्वार्थ,अहम्, फरेब, धूर्तता आदि दुगुर्ण समाज में फैले हे। राजनीति के कारण समाज में जातिवाद का जहर तेज हुआ है, सांप्रदायिक वैमनस्यता की खाई और चौड़ी हुई है तथा असामाजिक तत्वों के हौसले बुलंद हुए है। आधुनिक व्यंग्यकारों की दृष्टि इस ओर भी गयी है।
- आजादी के पश्चात् भारत में अनेक परिवर्तन हुए जिसमें औद्योगिक संस्थानो की स्थापना हुई है। नागरिकरण का आकर्षण बढ़ा है। रेल, संचार सुविधाओं का विस्तार हुआ है। प्रचार–प्रसार के माध्यमों में वृध्दि हुई है। शिक्षा के बढते प्रभाव ने भी समाज को नूतन दृष्टि प्रदान की है। राष्ट्र तेजी से विकास के पथ पर अग्रसर हुआ और हम दुनिया के अधिक संपर्क में आ गये है। इस के परिणाम स्वरूप हमारे जीवन–फलक का विस्तार हुआ है। एक ओर आजादी ने व्यक्ति की आकांक्षाओं को जगाया तो दूसरी ओर सिनेमा की रंगीन ने और संचार साधनों ने उसे सोचने को पंख दिये है। नागरी सभ्यता की चक्काचौंध ने उसकी चाहतो को बढ़ाया है। अब उसकी दुनिया आम ग्राम्य जीवनवाली नहीं रही है। रहन–सहन, खान–पान, सब में

परिवर्तन की लालसा ने उसे बैचेन कर दिया है। यथार्थ का सामना करने की उसकी शक्ति भी नष्ट हो चली है, चाहतों को अंजाम देने का सामर्थ्य उसमें था ही नहीं। इस प्रकार उसका जीवन उपहास बनकर रह गया है। आधुनिक सामाजिक परिस्थिति द्रुत गति से चूर होने लगी है।

- भारत–वर्ष पूर्णतः परिवर्तन कर भँवर में पड गया है। अंग्रेजो के आगमन से पहले भारत मुख्यतया उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग में विभक्त था। विप्लवन के उपरांत उच्चवर्ग का पतन हुआ और लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीति से मध्यवर्ग का उदय हुआ जो पैतृक संपत्ति के अभाव में बाहर जाकर नौकरी करके अपनी आजीविका चलाने लगा। आजादी के पश्चात् आज भी भारत में १) उच्च वर्ग २) मध्य वर्ग ३) निम्न वर्ग दिखाई देते हैं। आज के समाज में दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, वेश्या–समस्या, जाति–पाँति और अस्पृश्यता, आर्थिक दुष्चक्र, बेकारी, पर्याप्त शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् भी जब कुण्ठा और निराशा भर जाती है। पिता–पुत्र के संबंधो में टकराहट, पति–पत्नी के संबंध में तनाव, समाज में नारियों की विभिन्न समस्याएँ पैदा हो गयी है। सामाजिक विकृतियों का प्रभाव हमारे आज के सामाजिक संबंधो पर स्पष्ट दिखाई देता है। इन विकृतियों के कारण घर परिवार, कार्यालय आदि में अनेकानेक कारणों से जो विसंगतियाँ उत्पन्न होती है, ऐसी परिस्थितियों को ही व्यंग्यकारने अपने कथ्य का विषय बनाया हैं।

- सामाजिक संबंधों में टकराहट पर व्यंग्यकार ने प्रचुर मात्रा में व्यंग्य किया है। आज आदमी की महत्वाकांक्षाएँ बढ़ गई हैं, प्रतियोगिता बढ़ गई है, वह अपने दो हाथो में समूची दुनिया की दौलत और शोहरत को समेट लेना– चाहता है। उसकी यह आकांक्षा भी है कि, उसे केवल उसे ही वह सब कुछ प्राप्त हो, अन्य किसी को कुछ न मिले। अभिलाषा पूर्ति के लिए मनुष्य के प्रयत्न उसके बौनेपन को उजागर कर देते है, एवं वह उपहास का पात्र बन जाता है। आधुनिककरण की वैभव लालसा, सामाजिक–विडंबना नारी मुक्ति की कामना को दूरदर्शन आदि प्रचार–तंत्र माध्यमों

पर ऐसे दिखाया जाता है कि इस कारण पति–पत्नी के संबंधो को गहराई तक प्रभावित किया है। महिलाओं की वाचालता तथा उनकी बकवादी वृत्ति से कभी–कभी पति भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। अपनी स्वार्थ पूर्ति हेतु पत्नी को साधन के रूप में उपयोग करने की परंपरा भी इन दिनों चल पड़ी है। परिवार के सारे सूत्र सास के हाथों में केंद्रित होते है, किसी भी स्त्री को सास की भूमिका में ही अपने स्त्रीत्व की पूर्णता प्राप्त होती है। कितनी भी वात्सल्यमयी माँ हो, सासत्व की सत्ता मिलते ही उसकी नस–नस में रौद्र बीभत्स और भयानक रस की अविरल धारा बहने लगती है। निष्कर्षतः पिता–पुत्र, सास–बहु के परस्पर संबंधो में स्वार्थ एवं अहं की टकराहटों के कारण बदलाव अया है। परिणामतः इन परस्पर संबंधो पर ही आज प्रश्नचिन्ह खड़ा हो गया है। माता–पिता, पिता–पुत्र, पति–पत्नी, सांस–बहू, भाई–भाई आदि सारे संबंध स्वार्थ की कसौटी पर कसे जाने लगे हैं। इसलिए व्यंग्यकार रिश्तों पर प्रचूर मात्रा में व्यंग्य करते है।

- आज देश की सत्ता पर नीच प्रवृत्तिवाले सत्ता लोलूप, स्वार्थी एवं निकम्मे लोगों ने कब्जा कर लिया हैं। वे जनता के सुख–दुःख के प्रति, उनकी समस्याओं के प्रति संवेदनशील नहीं है। जहाँ शासन तंत्र–भ्रष्ट हो, जनता में अकर्मण्यता तथा मिथ्या संतोष की भावना घर कर लेती है, वहाँ अनेक समस्याएँ होती है। बेरोजगारी, दहेज समस्या आदि पर व्यंग्यकारने अपने व्यंग्य बाणों से निशाना बनाया है। समाज और कार्यालय का संबंध हर दिन का होता है, कार्यालयों में अनेक प्रकार की विसंगतियाँ दिखाई देती है, जैसे भ्रष्टाचार ने राजमान्यता प्राप्त कर ली है, एवं सरकारी दफ्तरों में सर्वत्र भ्रष्टाचार का ही शासन है। सरकारी कर्मचारियों में 'कम काम अधिक दाम' ने जोर पकड लिया है। कार्यालयीन अधिकारी, अस्पताल, पुलिस, रेल एवं बस, दूरदर्शन एवं आकाशवाणी तथा न्याय व्यवस्था की कार्यालयीन विसंगतियों को व्यंग्यकारने लक्ष्य बनाया है।

- भारत को अनेक राष्ट्रीय, आंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का सामना करना पड़ा है। आजादी का लक्ष्य हासिल करने में कठिन एवं लंबी, यात्रा करनी पड़ी है। आजादी के पश्चात् भारत के सामने अनेक समस्यायें खडी थी। जैसे भारत को अखण्ड बनाने के लिए राज्यों का विलीनिकरण किया गया। कुछ रियासतों को भारतीय प्रांतो में मिला दिया गया। कुछ प्रांतों को पृथक भी बनाया गया। इसी के साथ-साथ भारत देश का संविधान बनाने का कार्य संपन्न होने जा रहा था। प्रजातंत्रवादी शासन प्रणाली को २६ जनवरी, १९५० को अपनाया गया। प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में १९६४ तक नेहरूजीने देश की बागडोर सँभाली। पं. जवाहरलाल नेहरूजी के निधन के पश्चात् लालबहादूर शास्त्री प्रधानमंत्री बने 'भारत के भविष्य के लिए कुछ सोच-विचार करते समय सितंबर १९६५ में भारत-पाकिस्तान युध्द छिड गया। भारत-पाक युध्द में देशवासियों ने राष्ट्रीय एकता, त्याग, एवं बलिदान का अभूतपूर्व परिचय दिया। शास्त्रीजी के पश्चात् भारतीय राजनीति रूपी सरिता शांत-मंथर गति को छोड़कर हर-हराती इठलाती कल-कल निनादनी वेगवती बरसाती धारा के प्रवाह में बह-चली जिसे आने वाले समय में इंदिरा गांधी युग के नाम से जाना जाता है। श्रीमती इंदिरा गांधी के अवसान पर उनके जेष्ठ पुत्र श्री. राजीव गांधी प्रधानमंत्री की गद्दी पर बैठे। राजनीति के क्षेत्र में अनुभवहीन कहने वाले भी उनकी साफ सुथरी कार्यशैली के प्रशंसक बन गये। गांधीजी ने आजादी को गाँव-गाँव तक पहुँचने पर बल दिया। उनकी ग्राम स्वराज्य की भावना पूरी न हो सकी। वाजपेयी से मनमोहनसिंग तक के काल में दलबदलू प्रवृत्ति, राजनैतिक भ्रष्टाचार, राजनैतिक लोगों के इस कार्य व्यापार का रहस्य उद्घाटन किया है। सत्ता के लिए बेईमानी करने वालों पर व्यंग्यकारने व्यंग्य किया है। राजनैतिक क्षेत्र पर कसकर आघात किए है।

- प्रजातंत्र भी आखिर तंत्र ही होता है, प्रत्यक्ष रूप में गूँगे, बहरों की तरह चलता है। उसको सफल बनाने को ढेल पीटते है, ऐसा होने से प्रजातंत्र कभी सफल नहीं हो

सकता। सत्ताधारी पार्टियाँ सत्ता में आते ही अपना असली रूप दिखाने लगती है। चुनाव के समय जो वादे किए थे, उसको वे भूल जाते है। सत्ता में आते ही वे अपनी–अपनी स्वार्थ–सिध्दि में लिप्त हो जाते है। सत्ता में आते ही समाज की समस्या सुलझाने का कार्य करना चाहिए। लेकिन कुर्सी मिलने के पश्चात् खुद की समस्या सुलझाने का कार्य किया जाता है। संसद एवं विधान भवन लोगों का आधार स्तंभ होता है। यहाँ देश की और राज्यों की समस्याओं पर विचार–विनिमय होना चाहिए। परंतु वहाँ वास्तव में जो बहस होती है, वह निरर्थक होती है। कुछ सोते रहते है। यहाँ गाली–गलोज होती है, जूतों–चपलों तक का प्रवृत्ति यह सबसे बड़ी विसंगति एवं विकृति रही है। दल–बदल न सिध्दांतो के आधार पर किया जाता है, न ही नीति के आधार किया जाता है। वह सिर्फ अवसरवादिता के आधार पर किया जाता है। भारतीय चुनावों में विकृति का आरंभ उम्मीद्वारों के चयन से ही होता है। चुनाव में तरह–तरह के हथकण्डों का प्रयोग किया जाता है। वोटों को खरीदा जाता है। चुनाव एक खेल बन चुका है, सफल गुण्डे आज देश के नेता बनते जा रहे है। व्यंग्यकार ने उन्हे अपना लक्ष्य बनाते हुए उस संदर्भ में सोचने की चेतावनी दी है।

- भारतीय राजनीति में भ्रष्टाचार का बोलबाला है, समस्त–जीवन को भ्रष्टाचार ने जकड़कर रखा है। राजनीतिक में भाई–भातीजावाद भी इतना बढाया है कि, किसी भी पद के लिए योग्यता या प्रतिभा को नहीं देखा जाता, रिश्तेदारी और चापलूसी आज योग्यता बन गई है। इसी कारण भाई–भातीजावाद को बढ़ावा मिल रहा है। आज के युग में व्यंग्य में अत्याधिक सूक्ष्मता, वक्रता, तीव्रता, मर्मस्पर्शिता, परिहास, चोट, आलोचना, पैनापन आदि विशेषताओं का प्रयोग करके व्यंग्यकारने राजनीतिक लोगों के कार्य व्यापार का रहस्य उद्घाटित किया है। और सत्ता के लिए बेईमानी कर कृतघ्न होने वालों पर आघात किये है। और पाठकों को भ्रष्ट राजनीतिक के संदर्भ में सोचने की चेतावनी दी है।

अ) संदर्भग्रंथ सूची

१) अग्रवाल भारतभूषण : **'कागज के फुल'**, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी, १९६२

---**'बहुत बाकी है'**, पराग प्रकाशन, दिल्ली, १९७८

---'लीक अलीक', राजवाल ॲन्ड सन्स, दिल्ली, १९८०

२) चतुर्वेदी बरसानेलाल : **'महामति चाणक्य राजदूत बने'**, हिन्दी साहित्य संसार दिल्ली, १९६२

---'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ', ज्ञानभारती, दिल्ली, १९७७

---**'टालू मिक्सचर'**, साहित्य सहकार, दिल्ली, १९७८

---**'मिस्टर चोखेलाल'**, सरस्वती बिहार, दिल्ली, १९८०

---**'नेताओं की नुमाइश'**, किताब घर दिल्ली, १९८३

३) चतुर्वेदी ज्ञान –**'प्रेत कथा'**, समांतर प्रकाशन, भोपाल, १९६७

४) चतुर्वेदी गोपाल :**'अफसर की मौत'**, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, १९९०

--- **'खंभो के खेल'**, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, १९९०

---**'फाइल पढ़ि-पढ़ि'**, भारतीय, नई दिल्ली, १९९२

५) घोंघी लतीफ : **'बबलू मियाँ कब्रिसतान में'**, इन्द्रप्रस्त प्रकाशन, दिल्ली,१९७०

---**'बीमार न होने का दुःख'**, सौरभ प्रकाशन, दिल्ली, १९७०

---**'तीसरे बन्दर की कथा'**, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, १९७७

---**'किस्सा दाढ़ी का**, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, १९८०

---**'जूते का दर्द'**, श्री हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली, १९८३

---**'बुध्दि जी की चप्पले'**, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८५

६) गोरन्का श्याम : **'नसबंदगी'**, विवेक प्रकाशन, दिल्ली, १९७९

---**'गंजत्व दर्शन'**, अभिव्यंजना प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८९

७) गुप्त बालमुकुन्द : **'शिवशम्भु क चिटठे'**, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली–१९८४

८) जनमेजय प्रेम : **'राजधानी में गँवार'**, पराग दिल्ली, १९७८

---**'पुलिस पुलिस'**, पराग दिल्ली, १९८२

---'**मैं नही माखन खायों**', पराग दिल्ली, १९९०

९) जोशी शरद: **'जीप पर सवार इल्लियाँ'**, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९७१

---**'जीप पर सवार इल्लियाँ**, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९७१

---'किसी बहाने', नेशनल, नई दिल्ली, १९७१

---'रहा किनारे बैठ', नेशलन, नई दिल्ली, १९७२

---'तिलस्म', राजपाल एण्ड सन्स, नई दिल्ली, १९७३

---'दूसरी सतह', अजादि प्रकाशन, इलाहाबाद, १९७८

---'मेरी श्रेष्ट व्यंग्य रचनाएँ', ज्ञान भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८०

---'यथा संभव', भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, १९८५

१०) कोहली नरेन्द्र : **'पाँच एब्सर्ड उपन्यास', नेशनल**, नई दिल्ली,१९७२

---**'आश्रितों का विद्रोह',** नेशनल, नई दिल्ली, १९७३

---'शम्बूक की हत्या', कल्पतरू, नेशनल, नई दिल्ली,१९७५

---'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती, नेशनल, नई दिल्ली,१९७७

---'आधुनिक लड़की की पीड़ा, नेशनल, नई दिल्ली,१९७८

---'समग्र व्यंग्य', किताब घर, दिल्ली, १९९२

---'इश्क एक शहर का', समग्र व्यंग्य–३, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९९४, व्दितीय संस्करण, २००३

---'देश के शुभचिंतक', समग्र व्यंग्य–१, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–प्रथम संस्करण, १९९८, व्दितीय संस्करण, २००३

---'त्राहि–त्राहि, समग्र व्यंग्य–२, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण,१९९८, व्दितीय संस्करण, २००३.

---'आयोग' समग्र व्यंग्य-४, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, २००५

---'गणतंत्र का गणित', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९९७, आवृत्ति, २००९

११) कोठारी यशवंत : **'हिन्दी की आखिरी किता'**, श्याम प्रकाशन, जयपूर, ९९८१

---'यश का शिकंजा', सतसाहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८३

१२) मदन इन्द्रनाथ - **'कुछ उथले कुछ गहरे'**, दिल्ली, १९६८

--- 'बहाने बाजी', लिपी प्रकाशन, दिल्ली, १९७७८

--- 'विदा अलविद', ज्ञानभारती, दिल्ली, १९८२

--- **'आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास',** राजकमल नई, दिल्ली, १९९०

१३) माचवे प्रभाकर : **'खरगोश के सींग'**, नीलाभ प्रकाशन, प्रयोग, १९६०

---'तेल की पकौडियाँ', भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी, १९६२

१४) मजीठिया सुदर्शन : **'मुख्यमंत्री का डंडा**, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली, १९७४

---'इंडिकेट बनाम सिंडिकेट, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली, १९७४

---'छीटे', किताब घर, दिल्ली, १९७६

---'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ', ज्ञानभारती, दिल्ली, १९८०

---'टेलिफोन की घण्टी से', पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८३

१५) परसाई हरिशंकर :**'सुनो भाई साधो'**, युनिवर्सल बुक डेपो, जबलपूर, १९६५

---'बेईमानी की परत', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, १९६५

---'सदाचार का तावीज', भारतीय ज्ञानपीठ, बाराणसी, १९६७

---'ठिठुरता हुआ गणतंत्र', नॅशनल, नई दिल्ली, १९७०

---'अपनी-अपनी बीमारी', राजपाल, दिल्ली, १९७३

---'वैष्णव की फिसलन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९७८

---'विगलांग श्रध्दा का दौर', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८०

---'मेरी श्रेष्ट व्यंग्य रचनाएँ', ज्ञान भारती, दिल्ली, १९८८

१६) पाटील मधुसूदन : **‘हम सब एक है’**, अमन हिसार,१९८३

---‘अथ व्यंग्यम्‘, हिसार, १९८९

---‘देखन में छोटे लगे‘, अमनहिसर, १९९३

१७) पुणतांबेकर शंकर : **‘कँक्टस के काँटे‘,** पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९७९

---‘‘एक मंत्री स्वर्ग लोक में‘, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९७९

---‘प्रेमविवाह’, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८१

---‘विजिट यमराज की’, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८३

---‘अंगूर खट्टे नहीं है‘, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८५

---‘बंदनामंची’, पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८८

१८) राव अमृत : **‘मेरी श्रेष्ट व्यंग्य रचनाएँ‘,** अमृत–ज्ञान भारती, दिल्ली, १९७७

१९) राय अमृत : **‘बतरस’,** हंस प्रकाश, इलाहबाद, १९७३

--- मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती, दिल्ली, १९७७

२०) सक्सेना के. पी.: **‘नये गिरगिट‘,** विवेक प्रकाशन, दिल्ली, १९७५

--- ‘मुँछ, मुँछ, की बात’, साहित्य रत्नालय, कानदुर–१९७९

--- ‘रहिमन की रेलयात्रा’, राष्ट्रीय प्रकाशन,भोपाल, १९८२

---‘लखनवी ढंग से’, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली, १९८३

२१) शुक्ल श्रीलाल **:‘मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ**‘, ज्ञानभारती, दिल्ली, १९७७

---‘राग–दरबारी‘, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,१९८२

---‘अंगद का पाँव‘, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८०

---‘उमराव नगर में कुछ दिन‘, राजकमल, नई दिल्ली, १९८८

२२) सुरीरवाला रोशनलाल : **‘खाट पर हजाम’**, हिन्दी साहित्य संसार, नई दिल्ली, १९७४

२३) त्यागी रविन्द्रनाथ : '**खुली धूप में नाव पर**', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६३

---'**मल्लिनाथ की परंपरा**', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६९

---'**कृष्ण वाहन की कथा**', नेशनल, नई दिल्ली, १९७३

---'**देवदार क पेड**', नेशनल, नई दिल्ली, १९७३

---'**शोकसभा**', नेशनल, नई दिल्ली, १९७४

---'**अतिथि कक्ष**', राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, १९७७

---'**सुंदर कली**', सम्भावना प्रकाशन, नई दिल्ली, १९७८

---'**फुलोंवाले कैंक्टस**', पराग प्रकाशन, नई दिल्ली, १९७८

---'**मेरी श्रेष्ट व्यंग्य रचनाएँ**', ज्ञान भारती, दिल्ली, १९७८

---'**प्रतिनिधि व्यंग्य रचनाएँ**', पराग प्रकाशन, दिल्ली,१९८७

२४) तिवारी बालशेखर : '**रिसर्च गाथा**', अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपूर, १९७९

---'**किरायदार साक्षात्कार**', हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली, १९८४

---'**व्यंग्य ही व्यंग्य**', साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, १९८७

---'**क्रिकेट कीर्तन**', पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८८

---'**मेरी प्रिय व्यंग्य रचनाएँ**', राज पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, १९८८

२५) तिवारी बालेन्दूशेखर : '**रिसर्च गाथा**', अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपूर, १९७९

---'**किरायदार साक्षात्कार**', हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली, १९८५

---'**व्यंग्य ही व्यंग्य**', साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, १९८७

---'**मेरी प्रिंय व्यंग्य रचनाएँ**', राज पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, १९८८

---'**क्रिकेट कीर्तन**', पंचशील प्रकाशन, जयपूर, १९८८

२६) वर्मा केशवचन्द्र :'**आधुनिक हस्य-व्यंग्य**', भारती ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, १९६१

--- '**शार्टकट संस्कृति**', भारती ज्ञानपीठ, नई दिल्ली-१९८३

---'**बृहन्नला का वक्तव्य**', भारती ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, १९७४

---'**अफलातूनों का शहर**', भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, १९८४

ब) संदर्भग्रंथ सूची

१) प्रेम नारायण टण्डन – हिन्दी साहित्य मैं हास्य व्यंग्य, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ, १९७५

२) डॉ. बालेन्दूशेखर तिवारी – हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, अन्नपूर्णा प्रकाशन, मानपूर, १९७८

३) डॉ. माँगीलाल उपाध्याय– व्यंग्य और भारतेन्दु युगीन गद्य, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, १९८७

४) डॉ. संसारचंद्र– हिन्दी हास्य व्यंग्य निबंध रूपयात्रा.

५) मॉ. मलय–व्यंग्य का सौन्दर्यशास्त्र, साहित्य वाणी, इलाहबाद.

६) डॉ. बैसिस्टर सिंह यादव – हिन्दी लोक साहित्य में हास्य और व्यंग्य.

७) वीरेन्द्र मेंहदीरता– आधुनिक हिन्दी लोक साहित्य में व्यंग्य.

८) शेरजंग गर्ग–व्यंग्य के मूलभूत प्रश्न.

९) सुदर्शन मजिठिया–समकालीन हिन्दी व्यंग्य एक परिदृश्य.

१०) डॉ. बापुराव देसाई–हिन्दी व्यंग्य विद्याशास्त्र और इतिहास.

११) श्री. रामधारी सिंह – 'दिनकर' सांस्कृतिक के चार अध्याय–व्दितीय सं. १९५६

१२) डॉ. राधाकृष्णन–स्वतंन्त्राता एवं संस्कृति–अजुबाद विश्वम्भर नाथ त्रिपाठी, सं. १९९५

१३) डॉ. देवराज– साहित्य, समीक्षा और संस्कृति बोध.

क) संदर्भ ग्रंथ सूची

१) ईशान महेश, सृजन साधना, (नरेन्द्र कोहली के व्यक्तित्व और चिंतन संबंधी संस्मरण)

२) ईशान महेश, कोहली नरेन्द्र ने कहा, (नरेन्द्रके आत्मकथ्य और उन की रचनाओं मे से विचारपूर्ण सूक्तियो का संचयन) प्रकाशक : शुभम प्रकाशन, एन/१०, उल्लघनपुर, नवीन शाहदरा, दिल्ली ११००३२

३) जोशी गिरीशकुमार, कोहली नरेन्द्र के राम साहित्य का विशेष अनुशीलन, प्रकाशक : सुप्रिया पब्लिकेशन, सागर (मध्य प्रदेश)

४) कांत सुरेश, कोहली नरेन्द्र : विचार और व्यंग्य, प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, २१–ए, दरियागंज, नई दिल्ली ११०००२

५) कोहली कार्तिकेय, एक व्यक्ति नरेन्द्र कोहली, प्रकाशक : क्रियोटिव बुक कंपनी, ई–४/२४ ए, मॉडल टाउन, दिल्ली ११०००९

६) मिश्र शशि , स्वातंत्र्योत्तर हिंदी व्यंग्य निबंध, प्रकाशक : संकल्प प्रकाशन, मुंबई

७) पांडेय सतीश, व्यंग्यकार कोहली नरेन्द्र , प्रकाशक : संकल्प प्रकाशन, ए–३४, बिल्वकुंज को–ऑप हौसिंग सोसाटी, लालबहादूर शास्त्री मार्ग, मुलुंड (पश्चिम) मुंबई ४०००८२

८) पांडेय सतीश, कोहली नरेन्द्र : चिंतन और सृजन, प्रकाशक : प्रज्ञा प्रकाशन, ए–१८, संतोषी मां अपार्टमेंट, विठ्ठलवाडी, कल्याण (पूर्व)– ४२१३०६ प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, २१–ए, दरियागंज, नई दिल्ली ११०००२

९) विवेकी राय, आधुनिक उपन्यास : विविध आयाम, प्रकाशक : अनिल प्रकाशन, १८९/१, अपोली बाग, इलाहाबाद २११००६

१०) विवेकी राय, समकालीन हिंदी उपन्यास, प्रकाशक : अनिल प्रकाशन इलाहाबाद

११) राय विवेकी, कोहली नरेन्द्र – अप्रतिम कथायात्री, प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली ११०००२

१२) श्रीमती सौंखले सुरेश, कोहली नरेन्द्र की कहानियो में व्यंग्य, प्रकाशनः पारूल प्रकाशन, रघुनाथपुर, कुल्लू

१३) उपाध्याय नर्मदाप्रसाद, कोहली नरेन्द्र : व्यक्तित्व और कृतित्व, प्रकाशक : पराग प्रकाशन, ३/११४, कर्ण गली, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली ११००३२.

१४) यादव हितेन्द्र, कवितासुरभि, सुनीता सक्सैना, पौराणिक उपन्यास : समीक्षात्मक अध्ययन, (नरेन्द्र कोहली के तीन उपन्यासों–अभिज्ञान, तोड़ो कारा तोड़ो तथा प्रच्छन्न का शोधपरक अध्ययन)

प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, २१–ए, दरियागंज, नई दिल्ली ११०००२

ड) संदर्भग्रंथ सूची कोष

१) एन सायक्लोपीडिया ब्रिटानिका भाग–२०

२) बाहरी हरदेव–बहुत अंग्रेजी–हिन्दी कोष भाग–१

३) चतुर्वेदी व्दारका प्रसाद शर्मा एवं तारणीशझा–संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ

४) कालिका प्रसाद –बृहत हिन्दी कोष

५) नांलदा विशाल शब्द सागर

६) पाण्डेय राम खिलावन–हिन्दी साहित्य कोष भाग–१

७) वर्मा रामचंद्र –मानक हिन्दी कोष

अरण्येश्वर दर्शन

सहकारी गृहरचना संस्था मर्यादित

५४/१, पर्वती, अरणेश्वर मार्ग,

पुणे - ४११००९.

* लेखा परिक्षण अहवाल *

०१/०४/२०११ ते ३१/०३/२०१३

श्री. देव एस. जी.

प्रमाणीत लेखा परीक्षक

मो. ९०९६०९०५७२

४२३, रास्ता पेठ, शिवरकर मळा, पुणे- ११

अरण्येश्वर दर्शन सहकारी गृहरचना संस्था मर्यादित
५४/१, पर्वती, अरण्येश्वर मार्ग, पुणे-४११००९.

लेखा परिक्षण अहवाल
मुदत दिनांक ०१-०४-२०११ ते ३१-०३-२०१३
भाग - ०१

प्रस्तावना :-

अरण्येश्वर सहकारी गृहरचना संस्था मर्यादित, पुणे ४११००९ या संस्थेने केलेल्या नेमणूकीच्या ठरावानुसार तसेच संस्थेचे चेअरमन व सेक्रेटरी यांनी सादर केलेल्या रेकॉर्डवरून तेरीजपत्रक, ताळेबंद व संबंधीत याद्यांवरून दिनांक ०१/०४/२०११ ते दिनांक ३१/०३/२०१३ या सहकारी वर्षाचे लेखापरीक्षण केलेले असून, त्याचा अहवाल देतो की -

सभासद :-

संस्थेचे एकूण सभासद १४ दिसत असून लेखा परीक्षण काळात सदर संख्येत कोणतीही वाढ अगर घट झालेली दिसत नसून संस्थेने सभासद ''आय'' रजिस्टर ठेवलेले दिसत नसून सभासदांना भागपत्रेही दिलेली नाहीत.

संस्थेने भागाची खतावणी व भागांचे रजिस्टर वेगळे ठेवले आहे. त्यातील नोंदी अद्ययावत करण्यात याव्यात तसेच सभासद यादीचे रजिस्टर फार्म ''जे'' मध्ये ठेवण्यात आले आहे. ते अद्ययावत करण्यात यावे.

सभा : -

संस्थेच्या सभा खालीलप्रमाणे झाल्या.

अ) वार्षिक सर्वसाधारण सभा :

सन	दिनांक	हजर सभासद
२०११-२०१२		
२०१२-२०१३		

ब) व्यवस्थापक समिती सभा :

सन	एकूण सभा
२०११-२०१२	
२०१२-२०१३	

वरील दोन्ही सभांचे मिनिटस बुक स्वतंत्ररित्या लिहिण्यात आले आहे.

अ) ताळेबंद विवेचन :

भांडवल व देणी : -

१. सभासद वसूल भाग भांडवल : रूपये ३,५००/-

मागील ताळेबंदानुसार

२. गंगाजळी रूपये २,१३४/-

मागील ताळेबंदानुसार

३. प्लॉट ट्रान्सफर फी खाते - रू. १६७८४/-

मागील ताळेबंदानुसार

४. जागा आणि डेव्हलपमेंट किंमत वर्गणी : रू. २६२२३०=४८

मागील ताळेबंदानुसार

५. हरीत पट्टा नजराणा देणे रूपये ८४००/-

मागील ताळेबंदानुसार

६. देखभाल खर्च वर्गणी : रूपये २३४५=०२

मागील ताळेबंदानुसार

७) कर्जदार सभासदांचे फायनान्स कॉर्पोरेशनच्या भागाकरीता वर्गणी: रू. १३७७०/-

मागील ताळेबंदानुसार

८) संगठीत नफा : रू. २४९४१=९०

लेखा परीक्षण काळात ऑडीट फी देणे रूपये ३५०४/- हिशोब लिहीणावळ फी देणे रूपये ८६००/- बिगर शेती कर रू. ८८८७/- चिटणसी अनामत देणे ३५५०=९० व श्री. टेंबे (अनामत) रू. ४००/- दिसत असून सदरचे देणे संबंधी तास देण्यात यावे.

९)	**शिक्कल वाढावा : रू. २१०३१/-**

सन २०११-१२ व २०१२-१३ या वर्षात अनुक्रमे रू. १७९३१ व २१५०१/- ची वाढ झालेली दिसत आहे.

नफा विभागणी करण्यात आली नाही.

जिंदगी व येणे :

१)	**रोख शिल्लक :**

१) सन २०११-२०१२ अखेर रूपये २=००

सन २०१२-१३ अखेर रूपये ---

२) पी.डी.सी.सी. बँक - सन २०११-१२ अखेर रू. ५१४६=७७

सन २०१२-१३ अखेर रूपये १४८४५=७७

पी.डी.सी.सी बँक शाखा टिळक रोड येथे खाते क्रमांक ७४ येथे संस्थेचे बचत खाते आहे. बँक शिल्लक दाखला दप्तरी पहावयास मिळाला नाही.

२)	**जागा : रू. १,१७,२९५/-**

लेखा परीक्षण काळात कोणतीही वाढ अगर घट झालेली दिसत नाही.

३)	**महाराष्ट्र स्टेट को-ऑप कॉर्पोरेशन लि भाग रूपये १८५००/-**

सदर भाग तपासले ते ताळेबंदा प्रमाणे बरोबर आहेत.

४)	**पी.डी.सी.सी. बँक भाग : रू. ५०/-**

सदर भाग तपासले ते ताळेबंदाप्रमाणे बरोबर आहेत.

५)	**एम.एस.ई.बी. डिपॉझीट : रू. ९६५/-**

लेखा परीक्षण काळात कोणतीही वाढ अगर घट झालेली दिसत नाही.

६)	**बिगर शेतकीकर - रू. ३३७५८=३५**

लेखा परीक्षण काळात कोणतीही वाढ अथवा घट झालेली दिसत नाही.

७)	**पुणे म. न. पा. सभासद कर खाते - रूपये २४४३=२३**

लेखा परीक्षण काळात कोणतीही वाढ अथवा घट झालेली दिसत नाही.

८) जमीन मुल्यांकन फी :- रूपये १५००/-

लेखा परीक्षण काळात कोणतीही वाढ अथवा घट झालेली दिसत नाही.

९) प्रवेश फी :- रूपये ५०/-

लेखा परीक्षण काळात कोणतीही वाढ अथवा घट झालेली दिसत नाही.

१०) गुंतवणूक :- रूपये २७३३७५/-

पुणे जिल्हा बँक रूपये २७२३७५/- दिसत आहे. ठेव पावत्या संस्थेच्या नावे आहेत.

११) मुदत ठेव व्याज येणे:- रूपये ५५०१०/-

सदर रकमेची तरतूद करण्यात आली आहे.

१२) विकसन खर्च :- रूपये १०६३९२=६१/-

लेखा परीक्षण काळात कोणतीही वाढ अथवा घट झालेली दिसत नाही.

भाग - ०२

१)	गुंतवणूक व रजिस्टर ठेवण्यात आले नाही.

२)	शिक्षण फंड रक्कमेची तरतूद करण्यात आली नाही.

३)	सदर खर्चाच्या बिलांना संस्थेचे प्रिंटेड व्हाऊचर जोडलेले नाही. तसेच अध्यक्ष व चिटणीस यांच्या सहया नाहीत.

४)	रोजकिर्दीवर अध्यक्ष व चिटणीस यांच्या सहया नाहीत.

संस्थेचे पोट नियम दिनांक   रोजी मा. जिल्हा उपनिबंधकाकडून मान्य करण्यात आले होते. सदर मान्य केलेल्या नियमांची सर्टिफाईड प्रत ही संस्थेच्या दप्तरी उपलब्ध आहे.

हिशोब तपासणी वर्ग : -

संस्थेचे रेकॉर्ड पाहता संस्थेस लेखा परीक्षण कालावधीसाठी ऑडीट वर्ग ''ब'' कायम करण्यात येत आहे.

तसेच दोष दुरूस्ती अहवाल ''ओ'' नमुन्यात तीन महिन्यांच्या आत मा. उपनिबंधक सहकारी संस्था यांच्याकडे दाखल करण्यात यावा.

लेखा परीक्षण काळात संस्थेचे चेअरमन व सेक्रेटरी यांनी केलेल्या सहकार्याबद्दल मी त्यांचा आभारी आहे.

सुधीर गजानन देव

ठिकाण : पुणे		प्रमाणीत लेखा परीक्षक

दिनांक : ०९/२०१३		पीएनए-४३४९

अरण्येश्वर दर्शन सहकारी गृहरचना संस्था मर्यादित
५४/१, पर्वती, अरण्येश्वर रस्ता, ता. हवेली, जि. पुणे-४११००९.

जमा- नावे पत्रक
वर्ष २०११-१२ व २०१२-१३ करिता

२०१०-११	जमा तपशील	२०११-१२	२०१२-१३	२०१०-११	खर्च तपशील	२०११-१२	२०१२-१३
	श्री शिल्लक आरंभीची				किरकोळ खर्च	१५२४.००	-
२.००	रोख	२.००	२.००	३१.००	बँक चार्जेस	३१.००	३३.००
१९८०३.००	पुणे जिल्हा मध्यवर्ती बँक	४२१९.७७	५१४६.७७	१७७७४.००	बिगर शेती कर	८८८७.००	-
६६४९६.००	मुदत ठेव व्याज येणे	-	-	-	टायपिंग/झेरॉक्स	८०६.००	१७२.००
२२०९५.००	बँक व्याज	१९१.००	२४५.००	९००.००	छपाई व लेखन साहित्य	-	९८.००
-	अनामत खाते श्री गिरमे	२३३०.००	२६५.००	२५६०.००	ऑडिट फी देय खाते	-	-
-	लाभांश	४.००	५.००	५०००.००	लिहणावळ फी देय खाते	-	-
-	दंड	-	१२८.००	७६१६०.००	मुदत ठेव	-	-
	अनामत श्री. टेंबे	-	-	१२०९०.००	मुदत ठेव व्याज येणे	-	-
	बिगर शेती कर	९६५०.००	९३५७.००	-	श्री शिल्लक अखेरची	-	-
				२.००	रोख	२.००	-
				४२१९.७७	पुणे जिल्हा मध्यवर्ती बँक	५१४६.७७	१४८४५.७७
११८७३६.७७	**एकूण**	**१६३९६.७७**	**१५१४८.७७**	**११८७३६.७७**	**एकूण**	**१६३९६.७७**	**१५१४८.७७**

आमच्या सम तारखेच्या अहवालानूसार

एस. जी. देव
प्रमाणित लेखापरीक्षण
पीएनओ ४३४९
दिनांक /०९/२०१३

अरण्येश्वर दर्शन सहकारी गृहरचना संस्था मर्यादित
५४/१, पर्वती, अरण्येश्वर रस्ता, ता. हवेली, जि. पुणे-४११००९.

उत्पन्न खर्च पत्रक
वर्ष २०११-१२ व २०१२-१३ करिता

२०१०-११	तपशील (खर्च)	२०११-१२	२०१२-१३	२०१०-११	तपशील (उत्पन्न)	२०११-१२	२०१२-१३
-	किरकोळ खर्च	१५२४.००	-	२२०९५.००	बँक व्याज	१९१.००	२४५.००
३१.००	बँक चार्जेस	३१.००	३३.००	-	लाभांश	४.००	५.००
५०४.००	ऑडिट फी (तरतूद)	१५००.००	१५००.००	-	मुदत ठेव व्याज येणे	२१६३४.००	२३२५६.००
९००.००	छपाई व लेखन साहित्य	-	९८.००	-	दंड	-	१२८.००
-	टायपिंग /झेरॉक्स	८०६.००	१७२.००	-	बिगर शेती कर	९६५०.००	९३५७.००
५००.००	लिहणावळ फी खर्च (तरतूद)	८००.००	८००.००	-			
-	बिगर शेती कर	८८८७.००	८८८७.००				
२०१६०.००	निव्वळ उत्पन्न खर्च ताळेबंदाकडे वर्ग	१७९३१.००	२१५०१.००				
२२०९५.००	**एकूण**	**३१४७९.००**	**३२९९१.००**	**२२०९५.००**	**एकूण**	**३१४७९.००**	**३२९९१.०० **

आमच्या सम तारखेच्या अहवालानूसार

एस. जी. देव
प्रमाणित लेखापरीक्षण
पीएनओ ४३४९
दिनांक /०९/२०१३

अरण्येश्वर दर्शन सहकारी गृहरचना संस्था मर्यादित
५४/१, पर्वती, अरण्येश्वर रस्ता, ता. हवेली, जि. पुणे-४११००९.
ताळेबंद पत्रक ३१ मार्च २०१२ व ३१ मार्च २०१३ अखेर

२०१०-११	भांडवल व देणी	२०११-१२	२०१२-१३	२०१०-११	जिंदगी व येणी	२०११-१२	२०१२-१३
३६००=००	भाग भांडवल	३५००=००	३५००=००	-	रोख व बँक शिल्लक		
२१३४.००	गंगाजळी	२१३४=००	२१३४=००	२.००	रोख	२.००	-
१६७८४=००	प्लॉट ट्रान्सफर फी खाते	१६७८४=००	१६७८४=००	४२१९.७७	पुणे जिल्हा मध्यवर्ती बँक	५१४६.७७	१४८४५.७७
२७७३३०.४८	जागा आणि डेव्हलपमेंट किंमत वर्गणी खाते	२७७३३.४८	२७७३३०.४८		गुंतवणूक		
८४००=००	हरीत पट्टा नजराणा देणे	८४००=००	८४००=००	२७३३७५.००	पुणे जिल्हा मध्यवर्ती बँक मुदत ठेव	२७३३७५.००	२७३३७५.००
२३४५=०२	देखभाल खर्च वर्गणी	२३४५=०२	२३४५=०२	१५०७२.००	मुदत ठेव व्याज येणे	३६७०६.००	५९९६२.००
१३७७०=००	कर्जदार सभासदांचे फायनान्स कॉर्पोरेशन करीता वर्गणी	१३७७०=००	१३७७०=००	११७२९५.००	जागा	११७२९५.००	११७२९५.००
				१०६३९२.६१	विकास खर्च	१०६३९२.६१	१०६३९२.६१
-	इतर देणी			१८५००.००	महाराष्ट्र स्टेट को-ऑप फाय. कार्पोभाग	१८५००.००	१८५००.००
५०४.००	ऑडिट फी देणे	२००४.००	३५०४.००	५०.००	पी. डी. सी. बँक भाग	५०.००	५०.००
७०००.००	लिहणावळ फी देणे	७८००.००	८६००.००	९६५.००	एम.एस. ई. बी. डिपॉझीट	९६५.००	९६५.००
९५५.००	चिटणीस अनामत देणे श्री गिरमे	३२८५.९०	३५५०.९०		सभासदांकडून येणाऱ्या रकमा		
४००.००	अनामत श्री. टेंबे	४००.००	४००.००	३३७५८.३८	बिगर शेतकी कर	३३७५८.३८	३३७५८.३८
	बिगर शेती कर देणे	-	८८८७.००		पुणे म.न.पा. सभासद कर खाते	२४४३.२३	२४४३.२३
	संगठीत नफा			२४४३.२३	जमीन मूल्यांकन फी	१५००.००	१५००.००
२२०३३९.५९	मागील शिल्लक २२०३३९.५९	२४०४९९.५९	२५८४३०.५९	१५००.००	प्रवेश फी	५०.००	५०.००
२०१६०.००	निव्वळ उत्पन्न/ खर्च २०१६०.००	१७९३१.००	२१५०१.००				
५७३६२२.९९	**एकूण**	**५९६१८३.९९**	**६२९१३६.९९**	**५७३६२२.९९**	**एकूण**	**५९६१८३.९९**	**६२९१३६.९९**

आमच्या सम तारखेच्या अहवालानूसार
एस. जी. देव
प्रमाणित लेखापरीक्षण
पीएनओ ४३४९
दिनांक /0९/२013

अरण्येश्वर दर्शन सहकारी गृहरचना संस्था मर्यादित

५४/१, पर्वती, अरण्येश्वर मार्ग, पुणे-४११००९.

सभासदांची भूभागाप्रमाणे ३१/०३/२०१३ अखेर नांवे

अ.क्र.	प्लॉट क्र.	सभासद नाव	भागभांडवल रूपये
१.	१	श्री. अरविंद बळवंत जोशी	२५०/-
२.	२	सौ. चंद्रलेखा शां. बोलद्रा	२५०/-
३.	३	श्रीमती संगिता सुधाकर सिद्धेश्वर	२५०/-
४.	४	श्री. मधुकर दिनकर कदम	२५०/-
५.	५	कै. डॉ. यशवन्तराव गणपत शिन्दे	२५०/-
६.	६	श्री. नामदेव फुलापी खैरनार	२५०/-
७.	७	सौ. ऐश्वर्या अमोल अभ्यंकर	२५०/-
८.	८	श्री. लालचंद जसराज डांगी	२५०/-
९.	९	श्री. माणिकराव आनंदराव बिरादार	२५०/-
१०.	१०	श्री. सदाशिव हरिभाऊ गिरमे	२५०/-
११.	११	कै. शिवाजीराव मोहळकर	२५०/-
१२.	१२	श्रीमती रक्षा तेजपाल जैन	२५०/-
१३.	१३	श्रीमती नलीनीबाई वसंतराव खैरे	२५०/-
१४.	१४	कै. दामोदर शिवराम पाटील	२५०/-
		एकुण रूपये	**३५००**